Barcode : 99999990007812
Title - Anupan Darpan (Bhasa Tika)
Author - Khemraj Shri Kirshna Dass
Language - sanskrit
Pages - 143
Publication Year - 1921
Barcode EAN.UCC-13



॥ श्रीः ॥

अनुपानदर्पणः ।

श्रीमद्बाधीचवंशभूषणश्रीबलदेवसूनुना ज्ञा-
रसरामशर्म्मणा कोविदेन विरचितस्सु-
श्रुतादिविविधायुर्वेदीयग्रन्थप्रमाणै-
स्समन्वितस्सुभाषानुवादेन च
विभूषितः ।

सचाय

भिषग्वरावलोकनार्थं

खेमराज-श्रीकृष्णदास-श्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालये

मुद्रयित्वा प्रकाशित ।

सवत् १९६४ शके १८२९

रजिस्टरी हुए "श्रीवेङ्कटेश्वर" यन्त्राधिकारिने
स्वाधीन रक्खा है

॥ श्रीः ॥

अनुपानदर्पणस्थविषयानुक्रमणिका ।

विषय	पृष्ठ.
मङ्गलाचरण ग्रन्थारम्भ..	१
वैद्यविवेक	२
आयुर्वेदविवेक .	५
शल्यतन्त्र ...	,,
शालाक्यनाम	६
कायचिकित्सा	,,
भूतविद्या ..	,,
कौमारभृत्य .. .	,,
अगदतन्त्र .	७
रसायनतन्त्र	,,
वाजीकरणतन्त्र .	,,
आयुर्वेदनिरुक्ति ...	,,
अथ मानविवेक	८
औषधमात्राका मान	९
नाडीविवेक ...	१०
अनुपानविवेक	१२
अनुपानविशेषवर्णन ...	१४
मदिरादि अनुपानवर्णन	१५
वर्गवर्गका पृथक् पृथक् अनुपान वर्णन	,,
अनुपान पीनेकी प्रशंसा	१७
अनुपानविधिकी योग्या-योग्यता ..	१८

विषय	पृष्ठ
कितनेकरोगोंमें दुग्धानु पान	१९
योगराज गुग्गुलु अनुपान	२२
नारायणचूर्णानुपान ...	,,
निर्गुंडीअनुपान... ...	२३
सकलरोगोंमे हरीतकीके अनुपान	२४
गुडूची अनुपान ...	२५
नेत्ररोगपर गुडूचीस्वरसका औषध	२६
नेत्ररोगमें पुनर्नवानुपान	२७
त्रिफलानुपान	,,
मृत्युंजयादि रसधातूपधा-तुओंका अनुपानविवेक	२९
वसतकुसुमाकर रसको अनुपान ...	,,
लोकनाथ रसका अनुपान	३०
स्वर्णमालिनीवसत रसके अनुपान ...	३२
बृहन्मालिनी वसतरसके अनुपान	,,
पाशुपत रसके अनुपान ..	३३
पर्पटीरसके अनुपान ...	,,

प्रस्तावना ।

शरीरके आरोग्य होनेको औषध सेवन करना चाहिये. सो बात आबाल वृद्धोंको मालूम है. परंतु कौनसी दवाई किस अनुपानके साथ लेनी यह बात साधारण वैद्योंकोभी समझती होंगी. ऐसा नहीं कह सकते कि, अमुक रोग हुआ होय तो अमुक औषध लेना, परंतु वह औषध यथायोग्य अनुपानके साथ नही लिया जाय तो उससे यथोक्त गुण आता नहीं. इसवास्ते हमने श्रीमद्धन्वंतरिवंशभूषण श्रीबलदेवसूनु श्रीशारसरामजी पंडितवर्यजीसे सुश्रुतआदिक विविध आयुर्वेदीय ग्रथोंके प्रमाणेंसहित यह "**अनुपानदर्पण**" नामक नवीन ग्रथरचना कराय स्वकीय " **श्रीवेंकटेश्वर** " छापाखानामें छापकर प्रसिद्ध किया है ।

समस्त वैद्य और सर्व लोगोंको प्रार्थना कीजातीहै कि, महाशयो ! इस ग्रथमें कहेहुयेके अनुसार उस उस रोगमें औषध सेवनमें अनुपानकी यथोक्त योजना करके औषधका सेवन करके रोगको नष्ट करो, और शरीरका आरोग्य पाकर इस शरीरके द्वारा धर्म, अर्थ, काम, तथा मोक्ष इन पुरुषार्थोंका साधन करो, और उक्त पंडितजीके परिश्रमोंको सफल करो. किमधिकम् ।

आपका कृपाकांक्षी—

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेंकटेश्वर" छापाखाना—मुंबई.

॥ श्रीः ॥

अनुपानदर्पणस्थविषयानुक्रमणिका

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
मङ्गलाचरण ग्रन्थारम्भ .	१	कितनेकरोगोमें दुग्धानु पान ..	१९
वैद्यविवेक	२	योगराज गुग्गुलु अनुपान	२२
आयुर्वेदविवेक ..	५	नारायणचूर्णानुपान ...	,,
शल्यतन्त्र ...	,,	निर्गुंडीअनुपान... ...	२३
शालाक्यनाम	६	सकलरोगोंमे हरीतकीके अनुपान	२४
कायचिकित्सा...	,,	गुडूची अनुपान ...	२५
भूतविद्या ..	,,	नेत्ररोगपर गुडूचीस्वरसका औषध ..	२६
कौमारभृत्य	,,	नेत्ररोगमें पुनर्नवानुपान	२७
अगदतन्त्र .	७	त्रिफलानुपान	,,
रसायनतन्त्र . ..	,,	मृत्युजयादि रसधातूपधा- तुओंका अनुपानविवेक	२९
वाजीकरणतन्त्र .	,,	वसतकुसुमाकर रसको अनुपान ...	,,
आयुर्वेदनिरक्ति ...	,,	लोकनाथ रसका अनुपान	३०
अथ मानविवेक	८	स्वर्णमालिनीवसत रसके अनुपान	३२
औषधमात्राका मान	९	बृहन्मालिनी वसतरसके अनुपान	,,
नाडीविवेक	१०	पञ्चवक्त्र रसके अनुपान ..	३३
अनुपानविवेक	१२	पर्पटीरसके अनुपान ...	,,
अनुपानविशेषवर्णन ...	१४		
मदिरादि अनुपानवर्णन	१५		
षड्वर्गका पृथक् पृथक् अनुपान वर्णन	,,		
अनुपान पीनेकी प्रशंसा	१७		
अनुपानविधिकी योग्या- योग्यता .	१८		

विषय.	पृष्ठ.
जयाजयती इन्होंका अनु-	
पान	३४
सुवर्णभस्मके अनुपान	३६
रौप्यभस्मानुपान	३७
ताम्रभस्मानुपान	३९
वङ्गभस्मानुपान.. .	,,
जसदभस्मके अनुपान ...	४१
नागभस्मानुपान	४२
लोहभस्मानुपान	४३
स्वर्णमाक्षिक अनुपान	४४
रौप्यमाक्षिक अनुपान ...	,,
तुत्थ भस्मके अनुपान ...	४५
शिलाजतुके अनुपान ...	,,
पारदभस्मके अनुपान ...	४६
रससिंदूरके अनुपान ...	४८
रसकर्पूरके अनुपान	,,
गंधकके अनुपान	४९
हिंगुलके अनुपान ...	५०
अभ्रकके अनुपान ...	,,
हरितालके अनुपान	५२
मनशिलके अनुपान ...	५३
सौवीरके अनुपान	५४
खर्परके अनुपान .	,,
हीरकभस्मके अनुपान	५५
वैक्रान्तभस्मके अनुपान	,,

विषय.	पृष्ठ.
नीलवैक्रान्तभस्मके अनुपान	५६
प्रवालभस्मके अनुपान	,,
रोगविशेषमें अनुपानविशेष	५७
विषके पृथक् पृथक् अनुपान	५८
योगराज गुग्गुलविधि ..	६४
नारायणचूर्णविधि ..	६६
मृत्युंजयरसनिर्माणविधि ...	६७
वसंतकुसुमाकररसनि-	
र्माणविधि	६९
लोकनाथरसनिर्माणविधि	,,
स्वर्णमालिनीवसंतरस-	
निर्माणविधि	७३
वृहन्मालिनीवसंतरस-	
निर्माणविधि ...	,,
पाशुपतरसनिर्माणविधि ...	७४
पर्पटीरसनिर्माणविधि	७६
जयावटीनिर्माणविधि	७७
जयंतीवटीनिर्माणविधि	,,
धातूपधातुरसोपरसरत्नोप-	
रत्नविषोपविषोंका	
शोधनमारणविवेक ...	७८
सप्तधातुनामानि .	,,
सप्तउपधातुनामानि ...	,,
रस वर्णन .. .	७९
उपरसनामानि	,,

विषय.	पृष्ठ.
नवरत्ननामानि	७९
उपरत्ननामानि	,,
विषभेद . .	,,
उपविषकथन	,,
सप्तधातुशोधन ...	८१
उपधातुशोधन ...	,,
रससंस्कार	८३
रसशोधन	८४
उपरसशोधन	८५
रत्नशोधन ..	८८
विषशोधन . ..	,,
उपविषशोधन	,,
जैपालशोधन ...	,,
स्वर्णका मारणविधि ...	८९
रौप्यमारणविधि ...	९०
ताम्रमारणविधि .	,,
वंगमारणविधि	९२
जसदमारणविधि .	९३
नागमारणविधि .	,,
लोहमारणविधि ...	,,
स्वर्णमाक्षिकमारणविधि	९४
रौप्यमाक्षिकमारणविधि ...	,,
तुत्थमारणविधि	,,
सिंदूरमारणनिषेध ...	,,
शिलाजतुमारणविधि ...	,,
मंडूरविधि	९५

विषय.	पृष्ठ.
हंसपाडूरविधि ..	९५
रसमारण	९६
रससिंदूरविधि . .	९७
रसकर्पूरविधि ...	,,
हिंगुलमारण	९८
अभ्रकमारण .. .	९९
अन्यप्रकारसे अभ्रकमारण	,,
हरितालमारण	,,
वज्रमारण	१००
प्रवालमारण ...	१०१
पक्व सुवर्णभस्मका गुण	,,
अपक्व स्वर्णभस्मका दोष	,,
पक्व रूपेके भस्मका गुण	१०२
अपक्वरूपेके भस्मका दोष	,,
पक्व ताम्रभस्मके गुण	,,
अपक्व ताम्रभस्मके दोष. ..	,,
पक्ववंगभस्मके गुण .	१०३
अपक्व वंगभस्मके दोष .	,,
पक्व जसदभस्मके गुण .	,,
अपक्व जसदभस्मके दोष...	,,
पक्वनागभस्मके गुण ...	,,
अपक्वनागभस्मके दोष ..	१०४
पक्वलोहभस्मके गुण	,,
अपक्वलोहभस्मके दोष ...	१०५
पक्वसुवर्णमाक्षिक भस्मके गुण	,,
अपक्वस्वर्णमाक्षिक भस्मके दोष	,,

विषय.	पृष्ठ.
जयाजयती इन्होंका अनुपान	३४
सुवर्णभस्मके अनुपान	३६
रौप्यभस्मानुपान °	३७
ताम्रभस्मानुपान	३९
वङ्गभस्मानुपान .. .	,,
जसदभस्मके अनुपान ...	४१
नागभस्मानुपान	४२
लोहभस्मानुपान	४३
स्वर्णमाक्षिक अनुपान	४४
रौप्यमाक्षिक अनुपान ...	,,
तुत्थ भस्मके अनुपान ...	४५
शिलाजतुके अनुपान ...	,,
पारदभस्मके अनुपान ...	४६
रससिंदूरके अनुपान ...	४८
रसकर्पूरके अनुपान	,,
गंधकके अनुपान	४९
हिंगुलके अनुपान ...	५०
अभ्रकके अनुपान ...	,,
हरितालके अनुपान .	५२
मनशिलके अनुपान ...	५३
नीवीरके अनुपान	५४
खर्परके अनुपान ...	,,
हीरकभस्मके अनुपान	५५
वैक्रांतभस्मके अनुपान	,,

विषय.	पृष्ठ.
नीलवैक्रांतभस्मके अनुपान	५६
प्रवालभस्मके अनुपान	,,
रोगविशेषमें अनुपानविशेष	५७
विषके पृथक् पृथक् अनुपान	५८
योगराज गुग्गुलविधि	६४
नारायणचूर्णविधि ...	६६
मृत्युंजयरसनिर्माणाविधि ...	६७
वसंतकुसुमाकररसनिर्माणविधि	६९
लोकनाथरसनिर्माणविधि	,,
स्वर्णमालिनीवसंतरसनिर्माणविधि	७३
बृहन्मालिनीवसंतरसनिर्माणविधि ...	,,
पाशुपतरसनिर्माणविधि ...	७४
पर्पटीरसनिर्माणविधि	७६
जयावटीनिर्माणविधि ...	७७
जयंतीवटीनिर्माणविधि	,,
धातूपधातुरसोपरसरत्नोपरत्नविषोपविषोंका शोधनमारणविवेक ...	७८
सप्तधातुनामानि . .	,,
सप्तउपधातुनामानि ...	,,
रस वर्णन ..	७९
उपरसनामानि	,,

विषय.	पृष्ठ.
नवरत्ननामानि	७९
उपरत्ननामानि	,,
विषभेद . .	,,
उपविषकथन	,,
सप्तधातुशोधन . .	८१
उपधातुशोधन ...	,,
रससंस्कार	८३
रसशोधन	८४
उपरसशोधन	८५
रत्नशोधन	८८
विषशोधन ..	,,
उपविषशोधन .	,,
जैपालशोधन	,,
स्वर्णका मारणविधि ...	८९
रौप्यमारणविधि ...	९०
ताम्रमारणविधि .	,,
वगमारणविधि	९२
जसदमारणविधि .	९३
नागमारणविधि ..	,,
लोहमारणीविध ...	,,
स्वर्णमाक्षिकमारणविधि .	९४
रौप्यमाक्षिकमारणविधि ...	,,
तुत्थमारणविधि	,,
सिंदूरमारणनिषेध ...	,,
शिलाजतुमारणविधि ...	,,
मंडूरविधि	९५

विषय.	पृष्ठ
हंसपाडूरविधि ..	९५
रसमारण .	९६
रससिंदूरविधि .. .	९७
रसकर्पूरविधि	,,
हिंगुलमारण	९८
अभ्रकमारण	९९
अन्यप्रकारसे अभ्रकमारण	,,
हरितालमारण	,,
वज्रमारण . ..	१००
प्रवालमारण .	१०१
पक्व सुवर्णभस्मका गुण	,,
अपक्व स्वर्णभस्मका दोष	,,
पक्व रूपेके भस्मका गुण	१०२
अपक्वरूपेके भस्मका दोष	,,
पक्व ताम्रभस्मके गुण .	,,
अपक्व ताम्रभस्मके दोष ..	,,
पक्ववगभस्मके गुण .	१०३
अपक्व वगभस्मके दोष .	,,
पक्व जसदभस्मके गुण ...	,,
अपक्व जसदभस्मके दोष...	,,
पक्वनागभस्मके गुण ...	,,
अपक्वनागभस्मके दोष	१०४
पक्वलोहभस्मके गुण	,,
अपक्वलोहभस्मके दोष ...	१०५
पक्वसुवर्णमाक्षिक भस्मके गुण	,,
अपक्वस्वर्णमाक्षिक भस्मके दोष	,,

विषय	पृष्ठ.
पक्क रौप्यमाक्षिक भस्म- के गुण	१०६
अपक्करौप्यमाक्षिक भस्मके दोष	१०६
पक्क तथा अपक्क तुत्थभस्मके गुण तथा दोष	,,
शुद्ध शिलाजितके गुण ...	,,
अशुद्ध शिलाजितके दोष	,,
क्षप पारदभस्मके गुण ...	१०७
अशुद्ध अपक्क पारदभ- स्मके दोष	,,
शुद्ध रससिंदूरके गुण ...	,,
अशुद्ध रससिंदूरके दोष	१०८
शुद्ध रसकर्पूरके गुण .	,,
अशुद्ध रसकर्पूरके दोष ..	,,
शुद्ध गंधकके गुण	,,
अशुद्ध गंधकके दोष	,,
शुद्धहिंगुलके गुण .	,,
अशुद्धहिंगुलके दोष	,,
पक्क अभ्रक भस्मके गुण	१०९
अपक्क अभ्रक भस्मके दोष	,,
पक्क हरितालभस्मके गुण	११०
अपक्क हरितालभस्मके दोष	,,
शुद्ध मनःशिल भस्मके गुण ...	,,
अशुद्ध मनाशिलभस्मके दोष	११०

विषय.	पृष्ठ.
शुद्धसौवीरके गुण	१११
अशुद्ध सौवीरके दोष ..	,,
शुद्ध खर्परके गुण ...	१११
अशुद्धखर्परके दोष	,,
पक्क वज्रभस्मके गुण ...	,,
अशुद्ध अपक्क वज्रभस्मके दोष ...	११२
पक्क वैक्रातभस्मके गुण ..	,,
अशुद्ध अपक्क वैक्रातभस्मके दोष	,,
शुद्ध प्रवालभस्मके गुण	,,
अशुद्ध प्रवालके दोष	,,
विषके गुणागुण...	११३
अथ धात्वादिदोषशाति- विवेक ..	११४
अपक्क स्वर्ण दोषशाति ...	,,
अपक्क रौप्यदोषशाति	,,
अपक्क वङ्गदोषशाति	,,
अपक्क ताम्रदोषशाति	,,
अपक्क जसददोषशाति ...	,,
अपक्क नागदोषशाति ..	,,
अपक्क लोहदोषशाति ...	,,
अपक्कलोहजन्यकटिशाति.	,,
अपक्क स्वर्णमाक्षिकदोष- शाति	११५

विषय.	पृष्ठ
अपक्व रौप्यमाक्षिकदोष- शाति	११६
अपक्वतुत्थदोषशाति ...	,,
अशुद्ध शिलाजितदोषशाति	,,
अशुद्ध तथा अपक्वपारेकी दोषशाति	,,
अशुद्ध रससिंदूरके दोष- शाति . .	,,
अशुद्ध रस कर्पूरदोष- शाति	११७
अशुद्ध गधकदोषशाति .	,,
अशुद्ध हिंगुलदोषशाति .	,,
अपक्व अभ्रकदोषशाति .	,,
अपक्व हरितालभस्म- शाति	,,

विषय.	पृष्ठ.
अशुद्धमनशिलादोष- शाति	११७
अशुद्धसौवीरदोषशाति ...	,,
अशुद्ध खर्परदोषशाति .	११८
अशुद्ध अपक्व वज्रभस्म- दोषशाति	११९
अशुद्ध अपक्व वैक्रात भस्म- दोषशाति ...	,,
अशुद्ध प्रवाल दोषशाति	,,
अशुद्ध विषदोषशाति...	,,
जैपाल दोषशाति ..	,,
ग्रथसमाप्ति	१२०
ग्रथकर्ताका जन्मसवत्स- रादिवर्णन	,,

इत्यनुक्रमणिका ॥

जाहिरात.

नाम.	की. रु आ.	ट. म. रु. आ,
१ अपरोक्षानुभूतिसस्कृतटीका भाषाटीका सहित ...	०—१०	०—१
२ आत्मबोध भाषाटीका	०—४	०—॥
३ तत्वबोध भाषाटीका	०—२॥	०—॥
४ वेदातग्रथपचकम् (वाक्यप्रदीप वाक्यसुधारस्· हस्तामलक.निर्वाणपचक मनीषापचके) स०	०—८	०—१
५ वेदस्तुति भाषाटीका सह	०—८	०—१
६ रामगीता मूल	०—२	०—॥
७ श्रीमद्भगवद्गीतापचरत्नअक्षरमोटागुटकारेशमी	१—४	०—४
८ ” पचरत्न अक्षरवडा खुलापत्रा छोटीसची.	१—८	०—३
९ ” पचरत्न अक्षरवडा लवसिची खुला	१—०	०—३
१० गीता श्रीधरीटीकासहित	१—४	०—३
११ गीता बडे अक्षरकी १६ पेजी गुटका .. .	१—०	०—२
१२ गीता वडे अक्षरकी खुली १२ पेजी	०—१२	०—२
१३ गीता गुटका विष्णुसहस्रनाम सहित . ..	०—८	०—१
१४ गीता पचरत्न और एकादशरत्न	०—१२	०—२
१५ ” पचरत्न द्वादशरत्न	०—१०	०-१॥
१६ गीतापचरत्न नवरत्न पाकिट बुक	०—७	०—१
१७ गीता गुटका पाकिट बुक	०—६	०—॥
१८ पाण्डवगीता भाषाटीका सह	०—३	०—॥
१९ पाडवगीतादि ४ रत्न अक्षर वडा	०—३	०—॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

खेमराज श्रीकृष्णदास,

“ श्रीवेङ्कटेश्वर ” छापाखाना (मुंबई)

॥ श्रीः ॥

अथानुपानदर्पणनामायंग्रन्थः ।

प्रणम्य श्रीगणेश्वरं हरिं हरं दिवाकरं शिवा
गुरुञ्च लक्ष्मणाग्रजाह्वयं भिषग्वरम् ॥ गुणाकरं
सुधाकरं गतस्पृहं दयाधरं करोम्यहं सतां मुदेऽ
नुपानदर्पणं परम् ॥ १ ॥

प्रारब्धग्रन्थस्य निर्विघ्नेन परिसमाप्त्यर्थं सपञ्चामरगुरुनमस्कारात्मक मङ्गलमाते-
नोति पञ्चचामरवृत्तेन ग्रन्थकर्ता कवि.—अह (ज्ञारसराम —) ज्ञा 'अवबोधने'—
क्या० प०—जानातीति ज्ञा बुद्धिः—रस आस्वादने—चुरादिदन्तश्चास्माद्धातो'—
" अकर्तरि च कारके सज्ञायाम् ३—३—१९ ।" सूत्रेणानेन घञ्—रस्यते इति
रस स्वादो हर्षो वा ' रसो गवरसे स्वादे ' इति विश्व.—'रसस्स्वादे जले वीर्ये'—
इति हेम'—' रसो जल रसो हर्ष '—इत्यनेकार्थध्वनि —रमु क्रीडायामस्माद्धातो —
" ज्वलतिकमन्तेभ्यो ण ३—१—१४०" सूत्रेणानेन ण —रमते इति राम —
ज्ञा बुद्धिस्तस्या रसोऽवबोधात्मकस्स्वादो हर्षो वा तस्मिन् रमते इति (ज्ञारसराम)
अनुपानदर्पण (अनुपानग्रथाना मध्ये दर्पणमादर्शसमम्) परम् (उत्तम ग्रथ)
करोमि—किं कृत्वा—श्रीगणेश्वर (श्रिया शोभया युक्ताना गणाना प्रमथानामी-
श्वरस्त गणाधिपम्) हरि—(विष्णु) हरिर्विष्णुर्हरिर्मरुदित्यनेकार्थध्वनि' । हर
(महादेव हरस्स्मरहरो भर्ग इत्यमर) दिवाकर—(सूर्य्य सूरस्तूर्य्यार्य्यमादित्यद्वाद-
शात्मदिवाकरा इत्यमर) शिवा (दुर्गा—) च (पुनः) गुरु (गृणाति हित-
मुपदिशतीति गुरुस्तमायुर्वेदोपदेष्टारमित्यर्थ) प्रणम्य (नमस्कृत्य) कीदृश
गुरु—लक्ष्मणाग्रजाह्वय (लक्ष्मणाग्रजो रघुनाथ आह्वयो यस्य स त रघुनाथ-
शर्म्माण स्वामिनमित्यर्थ) ।

अनुपानदर्पणः ।

पुन.कीदृश—भिषग्वर (वैद्यश्रेष्ठ भिषग्वैद्योच्चिकित्सके—इत्यमरः) पुन'-कीदृश—गुणोकर (गुणानामाकरस्त्त सद्गुणसम्पन्नमित्यर्थ) पुन.कीदृग—सुधाकर (सुधा—अमृत करे यस्य स तपीयूषपाणिंसिद्धहस्तमित्यर्थः। पीयूषममृत-सुधा—इत्यमर) पुन.कीदृश—गतस्पृह (गता स्पृहा दीनेभ्यो धनप्राप्तिवाछा यस्यस.त सतुष्टमनसमित्यर्थः) पुन.कीदृग—दयाधर (धरतीतिधर'—दयायाधर्गे दयाधरस्त कृपालु दुःखिनेष्वनुकम्पाशीलम् (कृपादयानुकम्पास्यादित्यमर.) कस्मै प्रयोजनाय—सता (विदुपासाधूनावा—सत्येसाधौविद्यमानेप्रशस्तेऽभ्यर्हिते चसदित्यमरः—सत्साधौधीरशास्तयोरिति मेदिनी) अनेन खलाना हर्षाभाव सूचितः । मुदे (हर्षाय—मुत्प्रीति'प्रमदोहर्ष प्रमोदामोदसम्मदाइत्यमरः) भवति चात्र—नंदन्ति भोजनैर्विप्रा मयूरा घनगर्जनैः। साधव.परकल्याणे खला परविपत्तिभिः । परोत्कर्षाऽसहनत्वमेवासाधुधर्म्मत्वमिति भावः ॥ १ ॥

भाषानुवाद—इस ग्रथकी निर्विघ्नसे समाप्तिकोलिये ग्रथकर्ताकवि पचचाम रछदसे गणेशादि पञ्चदेवतोंसहित अपने गुरुको नमस्कार रूप मङ्गल करताहै बुद्धिके विचाररूपी हर्षमे जो रमण करे उसे ज्ञारसराम कहतेहैं सो मे—गणेश—विष्णु—महेश—सूर्य्य—देवी—और वैद्योमे श्रेष्ठ—सद्गुणसपन्न—अमृतके समान जिनका हाथ—लोभरहित—दयासहित जो पडित श्री १०८ रघुनाथशर्म स्वामीजी दोसोदनिवासी जिन्होंने मुझे आयुर्वेद (वैद्यविद्या) पढाई उन गुरुजीको नमन करके सज्जनके आनदार्थ अति उत्तम अनुपानदर्पणनामक ग्रथको बनाताहू ॥ १ ॥

अथातो वैद्यविवेकं व्याख्यास्यामः ॥ २ ॥

शास्त्रं गुरुमुखोद्गीर्णमादायोपास्य चासकृत् ॥
यःकर्म्म कुरुते वैद्यस्स वैद्योऽन्ये तु तस्कराः॥३॥

---

१ सत्यशौचदयाक्षातिस्त्यागस्तितोप आर्जवम् ॥ शमोदमस्तपस्साम्यातितिक्षोपरति श्रुतम् ॥ ज्ञानविरक्तिरैश्वर्य्यशौर्य्यतेजोबलस्मृतिः ॥ स्वातंत्र्यकौशल कातिधैर्य्यमार्दव मनचेत्यादयोगुणाः ।

सुश्रुतसंहितायां सूत्रस्थाने अ० ४। एकं शास्त्रमधीयानो न विद्याच्छास्त्रनिश्चयम्॥ तस्माद्बहुश्रुतः शास्त्रं विजानीयाच्चिकित्सकः ॥ ४ ॥ सुश्रु० सू० अ० ४। अधिगतमप्यध्ययनसम्भाषितमर्थतः। खरस्य चन्दनभार इव केवलं परिश्रमकरं भवति॥ यथा खरश्चन्दनभारवाही भारस्य वेत्ता न तु चन्दनस्य॥ एवं हि शास्त्राणि बहून्यधीत्य चार्थेषु मूढाः खरवद्वहन्ति॥५॥ सुश्रु० अ० ४। भवन्ति चात्र-यस्तु केवलशास्त्रज्ञः कर्म्मस्वपरिनिष्ठितः॥ स मुह्यत्यातुरं प्राप्य प्राप्य भीरुरिवाहवम्॥ ६॥ यस्तु कर्म्मसु निष्णातो धाष्ट्यर्याच्छास्त्रबहिष्कृतः॥ स सत्सु पूजा नाप्नोति वधञ्चार्हति राजतः॥ ७॥ सुश्रु० सू० अ० ३॥

भाषानुवाद- अब वैद्यके विवक (विचार) को वर्णन करेंगे॥२॥जो गुरु-मुखद्वारा शास्त्रग्रहण करके बारबार विचार, क्रियामें निपुण होकर चिकित्सा (व्याधिशमनोपाय) करताहै वही वैद्य है और जो गुरुसे संपूर्ण ग्रन्थको विनपढे ही वैद्य बनजावे वे वैद्य नहीं किन्तु वे चोर है ऐसा धन्वंतरिजीने सुश्रुतसे कहाहै॥ ३॥ गुरुके मुखद्वारामें एकही शास्त्र पढनेवाला शास्त्रके सारको नहीं जानसक्ता इस लिये वैद्यको उचितहै कि सब शास्त्रोके विषयको पढ सुन और विचारकर अवश्य जानलेवे॥ ४॥ जो पुरुष सब शास्त्रकोभी पढले और उसे अर्थ अनर्थका ज्ञान न हो तो वह केवल शास्त्रोका भार उठानेवाला है उसे

शास्त्री सद्वैद्य कहनायोग्य नहीं, जैसे गधेपर चदन लादनेसे वह केवल चदनं भार (वोझ) को जानताहै परन्तु उसकी सुगन्धको नहीं जानता,इसालिये वैद्यक शास्त्र पढनेवालेको व्याकरण (पाणिनीयसूत्रो) का वोध अवश्य चाहिये जिससे अर्थानर्थको जानलेवे ॥ ५ ॥ **भाषानुवाद**—जो केवल वैद्यशास्त्रको जानताहो औ कर्म्म (अनुपानादिक्रिया) में निपुण न हो वह वैद्य रोगीको प्राप्तहोकर मोहित (घवडाय) जाताहै जैसे कायर रण (सग्राम) पाकर घवरा जाताहै तैसे ॥ ६ ॥ और जो क्रियाको जानताहो परन्तु शास्त्रके वोधसे रहित हो वह वैद्य सज्जनोंमें आदर नहीं पाता और राजाको उचितहै कि उस अनपढ वैद्यको अपनेराज्यसे वाहर करदे—वा मरवाडाले नही तो वह बहुतसी प्रजाको नष्टकरदेगा ॥ ७ ॥

उभावेतावनिपुणावसमर्थौ स्वकर्म्मणि ॥ अर्द्ध वेदधरावेतावेकपक्षाविव द्विजौ ॥ ८ ॥ औषध्योऽमृतकल्पास्तु शास्त्राशनिविषोपमाः ॥ भवन्त्यज्ञैरुपहृतास्तस्मादेतौ विवर्जयेत् ॥ ९ ॥ यस्तूभयज्ञोमतिमान्ससमर्थोऽर्थसाधने ॥ आहवे कर्म्मनिर्वोढुं द्विचक्रः स्यन्दनो यथा ॥ १० ॥ सुश्रु० सू० अ० ३—४ ॥

भाषानुवाद—उक्त दोनों प्रकारके वैद्य अशिक्षित होनेसे चिकित्सा करनेमें असमर्थ होतेहैं, जैसे एकपखवाले पक्षी उडनेको असमर्थ होतेहैं तैसे अथवा जो इन दोनोमें अर्थात् क्रिया और शास्त्रमें अशिक्षित हैं वे पक्षोंरहित पक्षीके समान दु खित और असमर्थ होतेहैं ॥ ८ ॥ जो औषधि अमृतके समानहैं वे उनअशिक्षित (विनपढेहुवे मूर्ख) वैद्योंके हाथसे-शास्त्र वज्र और विषके समान होजाती इसलिये सवको उचित है कि मूर्ख वैद्योंसे औषध कदापि न लेवें ॥ ९ ॥ जो बुद्धिमान शास्त्र और क्रियामें निपुणहै वही प्रयोजन सिद्धकरताहै अर्थात् उसीसे रोग निवृत्त होताहै जैसे युद्धमे दोपहियेके रथसे कार्य्यसिद्ध होताहै तैसे

इसलिये अष्टाग आयुर्वेदको पढेहुए और क्रियामे निपुण ऐसे वैद्यसे ही सबनें औषध सेवन करना चाहिये, ये सब सुश्रुतके सूत्रस्थानके ३ रे तथा ४ थे अध्यायमें लिखाहै ॥ १० ॥

इति श्रीमत्पडितज्ञारसरामविरचितेसुभाषानुवादविभूषितेऽनुपान
दर्पणे वैद्यविवेककथने प्रथम.प्रमोद. ॥ १ ॥

अथायुर्वेदविवेकं व्याख्यास्यामः १ ।

इहखल्वायुर्वेदो नाम यदुपाङ्गमथर्ववेदस्यानुत्पाद्यैव प्रजाःश्लोकशतसहस्रमध्यायसहस्रं च कृतवान् ॥ स्वयंभूस्ततोऽल्पायुष्ट्वमल्पमेधस्त्वञ्चावलोक्य नराणां भूयोऽष्टधा प्रणीतवान् ॥२॥ शल्यं शालाक्यं कायाचिकित्सा भूतविद्या कौमारभृत्यमगदतन्त्रं रसायनतंत्रं वाजीकरणतंत्रमिति ॥ ३ ॥ अथास्य प्रत्यङ्गलक्षणसमासः ॥ ४ ॥ तत्र १ शल्यं नाम—विविधकाष्टपाषाणपांशुलोहलोष्टास्थिवाल—नखपूयास्रावान्तर्गर्भशल्योद्धरणार्थयंत्रशस्त्रक्षाराग्निप्रणिधानव्रणाविनिश्चयार्थञ्च ॥ ५ ॥ सुश्रु० सू० स्था० अ० १ ॥

भाषानुवाद—अब आयुर्वेदविवेकको वर्णन—करेंगे ॥ यह आयुर्वेद जो अथर्ववेदका उपाङ्गहै उसको सृष्टिसे पूर्वही परमात्माने एक लक्ष श्लोक और एकसहस्र अध्यायमें निर्म्मित किया ॥ १ ॥ इतना बनानेके पश्चात् मनुष्योंकी अल्पायु और अल्पबुद्धि देखकर उस आयुर्वेदके पुन आठभाग किये ॥ २ ॥ उन आठभागोंके ये नाम हैं—१ शल्य २ शालाक्य ३ कायचिकित्सा ४ भूतविद्या ५ कौमारभृत्य ६ अगदतत्र ७ रसायनतत्र और ८ वाजीकरणतत्र ॥३॥ अब इस आयुर्वेदके प्रत्येकभागका पृथकपृथक लक्षण कहतेंहै ॥ ४ ॥

शास्त्री सद्वैद्य कहनायोग्य नहीं, जैसे गधेपर चदन लादनेमे वह केवल चदनके भार (बोझ) को जानताहै परन्तु उसकी सुगन्धको नहीं जानता,इसलिये वैद्यक शास्त्र पढनेवालेको व्याकरण (पाणिनीयसूत्रो) का बोध अवश्य चाहिये जिससे अर्थानर्थको जानलेवे ॥ ५ ॥ **भापानुवाद**—जो केवल वैद्यशास्त्रको जानताहो औ कर्म्म (अनुपानादिक्रिया) मे निपुण न हो वह वैद्य रोगीको प्राप्तहोकर मोहित (घबडाय) जाताहै जंसे कायर रण (सग्राम) पाकर घबरा जाताहै तैसे ॥ ६ ॥ और जो क्रियाको जानताहो परन्तु शास्त्रके बोधसे रहित हो वह वैद्य सज्जनोंमें आदर नहीं पाता और राजाको उचितहै कि उस अनपढ वैद्यको अपनेराज्यसे बाहर करदे—वा मरवाडाले नहीं तो वह बहुतसी प्रजाको नष्टकरदेगा ॥ ७ ॥

उभावेतावनिपुणावसमर्थौ स्वकर्म्मणि ॥ अर्द्ध वैद्यधरावेतावेकपक्षाविव द्विजौ ॥ ८ ॥ औपध्योऽमृतकल्पास्तु शस्त्राशनिविषोपमाः ॥ भवन्त्यज्ञैरुपहृतास्तस्मादेतौ विवर्जयेत् ॥ ९ ॥ यस्तूभयज्ञोमतिमान्ससमर्थोऽर्थसाधने ॥ आहवे कर्म्मनिर्वोढुं द्विचक्रः स्यन्दनो यथा ॥ १० ॥

सुश्रु० सू० अ० ३—४ ॥

भाषानुवाद—उक्त दोनों प्रकारके वैद्य अशिक्षित होनेसे चिकित्सा करनेमे असमर्थ होतेहै, जैसे एकपखवाले पक्षी उडनेको असमर्थ होतेहैं तेसे अथवा जे इन दोनोंमें अर्थात् क्रिया और शास्त्रमे अशिक्षित हैं वे पक्षोंराहित पक्षीके समान दु खित और असमर्थ होतेहैं ॥ ८ ॥ जो औपधि अमृतके समानहैं वे उनअशिक्षित (विनपढेहुवे मूर्ख) वैद्योंके हाथसे-शस्त्र वज्र और विषके समान होजातीहै इसलिये सबको उचित है कि मूर्ख वैद्योंसे औपध कदापि न लेवें ॥ ९ ॥ जो बुद्धिमान शास्त्र और क्रियामें निपुणहै वही प्रयोजन सिद्धकरताहे अर्थात् उसीसे रोग निवृत्त होताहै जैसे युद्धमें दोपहियेके रथसे कार्य्यसिद्ध होताहै तैसे

इसलिये अष्टाग आयुर्वेदको पढेहुए और क्रियामे निपुण ऐसे वैद्यसे ही सबनें औषध सेवन करना चाहिये, ये सब सुश्रुतके सूत्रस्थानके ३ रे तथा ४ थे अध्यायमें लिखाहै ॥ १० ॥

इति श्रीमत्पण्डितज्वारसरामविरचितेसुभाषानुवादविभूषितेऽनुपान
दर्पणे वैद्यविवेककथने प्रथम.प्रमोद. ॥ १ ॥

अथायुर्वेदविवेकं व्याख्यास्यामः १ ।

इहखल्वायुर्वेदो नाम यदुपाङ्गमथर्ववेदस्यानुत्पाद्यैव प्रजाःश्लोकशतसहस्रमध्यायसहस्रं च कृतवान् ॥ स्वयंभूस्ततोऽल्पायुष्ट्वमल्पमेधस्त्वञ्चावलोक्य नराणां भूयोऽष्टधा प्रणीतवान् ॥२॥ शल्यं शालाक्यं कायचिकित्सा भूतविद्या कौमारभृत्यमगदतन्त्रं रसायनतंत्रं वाजीकरणतंत्रमिति ॥ ३ ॥ अथास्य प्रत्यङ्गलक्षणसमासः ॥ ४ ॥ तत्र १ शल्यं नाम—विविधकाष्टपाषाणपांशुलोहलोष्टास्थिवाल—नखपूयास्रावान्तर्गर्भशल्योद्धरणार्थयंत्रशस्त्रक्षाराग्निप्रणिधानव्रणाविनिश्चयार्थञ्च ॥ ५ ॥ सुश्रु० सू० स्था० अ० १ ॥

भाषानुवाद—अब आयुर्वेदविवेकको वर्णन—करेंगे ॥ यह आयुर्वेद जो अथर्ववेदका उपाङ्गहै उसको सृष्टिसे पूर्वही परमात्माने एक लक्ष श्लोक और एकसहस्र अध्यायमे निर्म्मित किया ॥ १ ॥ इतना बनानेके पश्चात् मनुष्योंकी अल्पायु और अल्पबुद्धि देखकर उस आयुर्वेदके पुन आठभाग किये ॥ २ ॥ उन आठभागोके ये नाम है—१ शल्य २ शालाक्य ३ कायचिकित्सा ४ भूतविद्या ५ कौमारभृत्य ६ अगदतत्र ७ रसायनतत्र और ८ वाजीकरणतत्र ॥३॥ अब इस आयुर्वेदके प्रत्येकभागका पृथकपृथक लक्षण कहतेहै ॥ ४ ॥

शल्यका लक्षण—अनेक प्रकारके तृण (कठोरघास वा गोखरू—नागफनी आदिकेकाटे) काष्ट (लकडीकी फासआदि) लोहेकी कील—हड्डी—बाल—नख—आदिके लगनेसे जो घाव होजाताहै अथवा उक्त वस्तुओका कुछभाग (अश) घावमे रहजानेसे जो घाव बिगडजाताहै उसके दूरकरनेको जो शस्त्र वा यन्त्रद्वारा उन वस्तुओंका निकालना या गर्भमेसे मरेहुवे बालकको शस्त्र वा यन्त्रद्वारा निकालना अथवा घावके उत्तमप्रकारसे जाननेके हेतु जो यत्न कियाजाताहै उसको शल्यचिकित्सा कहतेहैं ॥ ५ ॥

२ शालाक्यंनाम-ऊर्ध्वजत्रुगतानां रोगाणां श्रवणनयनवदनघ्राणादिसंश्रितानां व्याधीनामुपशमनार्थम्॥ ६ ॥ ३ कायचिकित्सानाम-सर्वाङ्गसंसृतानां व्याधीनां ज्वरातिसाररक्तपित्तशोषोन्मादापस्मारकुष्ठमेहादीनामुपशमनार्थम्॥७॥सुश्रु० सू० स्था० अ० १ । ४ भूतविद्यानाम-देवासुरगन्धर्वयक्षरक्षःपितृपिशाचनागग्रहाद्युपसृष्टचेतसां शान्तिकर्म्मबलिहरणादिग्रहोपशमनार्थम् ॥८॥ सुश्रु०सू०स्था०अ० १।५ कौमारभृत्यं नाम-कुमारभरणधात्रीक्षीरदोषसंशोधनार्थं दुष्टस्तन्यग्रहसमुत्थानाञ्च व्याधीनामुपशमनार्थम् ॥ ९ ॥

भाषानुवाद—२ शालाक्यत० जो कण्ठसे ऊपरके अङ्ग जैसे—मुख—नाक नेत्र ओष्ठ कानआदिमें उत्पन्न हुवे रोगोके दूरकरनेको यत्न कियाजाताहै उ शालाक्य कहतेहैं ॥६॥ ३ कायचिकित्सा त० जो सपूर्ण अग (शरीर—देह में हुवे ज्वर—अतिसार—रक्तविकार—पित्तरोग—शोष (खुशकी) उन्माद (खपर्ती पगला) अपस्मार (मृगी) कुष्ठ प्रमेह (परमा) आदि रोगोंके दूरकरने यत्नकिया जाताहै उसे कायचिकित्सा कहतेहैं ॥७॥ ४ भूतविद्याल० जो देवता

असुर–गधर्व–यक्ष–राक्षस–पितर–पिशाच–सर्प और नवग्रह आदिमे चित्त लगनेसे अनेक भ्रमजन्य पीडा होतीहै उनकी शान्ति करनेको यत्न किया जाताहै उसको भूतविद्या कहते है ॥ ८ ॥ ५ कौमारभृत्यल० बालकोंका पालन पोषण–धायके दूधमें जो दोष होतेहै उनके तथा उस बिगडेहुवे दूधके पीनेसे जो बालकोंको रोग होतहैं उनके दूरकरनेके यत्नोको कौमारभृत्य तत्र कहतेहैं ॥ ९ ॥

६ अगदतंत्रंनाम-सर्पकीटलूताद्यश्चिकमूषिकादि-
दष्टविषव्यंजनार्थं विविधविषसंयोगविषोपहतो-
पशमनार्थम् ॥१०॥ ७ रसायनतन्त्रंनाम–वयः-
स्थापनमायुर्मेधाबलकरंरोगापहरणसमर्थम्॥११॥
सुश्रु०सू०स्था०अ० १। ८ वाजीकरणतन्त्रं नाम-
अल्पदुष्टविशुष्कक्षीणरेतसामाप्यायनप्रसादोप-
चयजननिमित्तं प्रहर्षजननार्थञ्च, एवमयमायु
र्वेदोऽष्टाङ्ग उपदिश्यते ॥१२॥इहखल्वायुर्वेदप्रयो-
जनंव्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः स्वस्थस्य
रक्षणञ्च आयुरस्मिन् विद्यतेऽनेन वा आयुर्विन्द-
तीत्यायुर्वेदः ॥ १३ ॥ सुश्रु०सू०स्था०अ० १ ॥

भाषानुवाद–६ अगदतत्रल० साप–कीडे–चन्दर–मूषे–आदिविषेले जीवोके काटनेसे जो मनुष्योंके शरीरमें विष फैल जाताहै उसको दूरकरनेको जो उपाय कियाजाताहै उसे अगदतत्र कहतेहैं ॥१०॥ ७ रसायनतत्रल०जिससे मनुष्योंकी आयु पूर्ण हो और बल बुद्धिकी वृद्धि तथा समस्त रोग निवृत्त हो उस उपायको रसायनतत्र कहतेहैं॥११॥ ८ वाजीकरणतत्रल० जिससे थोडे वीर्यवाले पुरुषकी वीर्य बढी बिगडे वीर्यवालेकी वीर्यशुद्धि और क्षीणवीर्यवालेकी पुन वीर्योत्पत्ति हो

और उक्त तीनों प्रकारके मनुष्योको जो आनद देनेवाला उपाय हो उसे वाजीकरणतंत्र कहतेहैं, इसप्रकारसे यह आयुर्वेद अष्टाङ्ग कहलाताहै ॥१२॥ इस जगत्में आयुर्वेदके प्रकाश करनेका यही प्रयोजन है कि रोगयुक्त मनुष्योंको रोगसे छुडाना और रोगरहित मनुष्योंकी रोगसे रक्षा करना (बचाना) आयुर्वेदका अर्थ यह है कि,आयु अर्थात् शरीर इन्द्रिय और जीव इन तीनोका स्वस्थतापूर्वक संयोग हो जिसमें उसे आयुर्वेद कहतेहैं अथवा २ आयुका जिससे विचार हो उसे आयुर्वेद कहतेहैं अथवा ३ आयु जिसके द्वारा जानिजाय उसे आयुर्वेद कहतेहैं अथवा ४ जिससे आयुःप्राप्तहो उसे आयुर्वेद कहतेहैं ये सब सुश्रुतके सूत्रस्थानके पहिले अध्यायमे लिखाहै ॥ १३ ॥

इति श्रीमत्पाण्डितज्ञारसरामविरचिते सुमापानुवादविभूषितेऽनुपानदर्पणे ह्यायुर्वेदविवेककथने द्वितीय प्रमोद. ॥ २ ॥

अथ मानविवेक व्याख्यास्यामः ॥१॥

न मानेन विनायुक्तिर्द्रव्याणां ज्ञायते क्वचित् ॥ अतःप्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यते मया॥२॥यतो मन्दाग्नयो ह्रस्वा हीनसत्त्वा नराः कलौ ॥ अतस्तु मात्रा तद्योग्या प्रोच्यते सुज्ञसम्मता ॥३॥ यवो द्वादशाभिर्गौरसर्षपैः प्रोच्यते बुधैः ॥ यवद्वयेन गुंजा स्याद्त्रिगुंजो वल्ल उच्यते ॥४॥ माषो गुञ्जाभिरष्टाभिस्सप्तभिर्वा भवेत्क्वचित् ॥ स्याच्चतुर्माषकैश्शाणस्स निष्कं टंक एव च॥५॥ गद्याणो माषकैः षड्भिःकर्षःस्याद्दशमाषकः ॥ चतुःकर्षैः पलं प्रोक्तं दशशाणमितं बुधैः ॥ चतुःपलैश्च कुडवं प्रस्थाद्याः पूर्ववन्मताः ॥ ६ ॥ शार्ङ्गधर संहितायां खं० १ अ० १ ॥

भाषानुवाद—अब इसके आगे मानविवेक वर्णन करेंगे ॥ १ ॥ मान (तोला) विनाद्रव्य (औषध) आदिकी योजना (युक्ति) नहींहो सक्ती इसलिये इस ग्रथमे प्रथम मान परिभाषा लिखतेहै ॥ २ ॥ यद्यपि वैद्यकग्रथोमें १ मागध और २ कालिंग,ये दोप्रकारके मान दियेहैं परन्तु हम ग्रथविस्तारभयसे तथा कलियुगमे मदाग्नि छोटे और हीनबल मनुष्य होनेसे उनके योग्य कालिंग मानानुसारही मात्रा वैद्योको मन्तव्य होनेके कारण इसग्रंथमे कालिंगमानही वर्णन करतेहै ॥३॥ १२ सपेद सरसोंका १ यव २ यवोंकी १ गुजा ३ गुजा (चिरमी) का १ वल्ल ॥ ४ ॥ ८ गुजा अथवा ७ गुजाका १ मासा ४ मासेका १ शाण जिसे निष्क तथा टकभी कहतेहै ॥५॥६ मासेका १ गद्याण १० मासेका १ कर्ष ४ कर्षका १ पल उस १ पलके १० शाण (४० मासे) होतेहे और ४ पलका एक कुडव होताहै । इसके आगे प्रस्थआदि मान मागध परिभाषानुसारही ग्रथातरसे जानना चाहिये ॥ ६ ॥ यह मान शार्ङ्गधरसहिताके प्रथम खटके (पहले) अध्यायमें लिखाहै ॥

स्थितिर्नास्त्येव मात्रायाः कालमग्निं वयोवलम् ॥
प्रकृतिं दोषदेशौ च दृष्ट्वा मात्रां प्रकल्पयेत्॥७॥
नाल्पं हन्त्यौषधं व्याधिं यथाम्भोऽल्पं महानलम्
अतिमात्रं च दोषाय यथा सस्ये वहूदकम् ॥ ८ ॥
भावप्रकाशस्यपूर्वखंडस्यद्वितीयभागे चोक्तमिदम्।

भाषानुवाद—अब औषध मात्राका मान दर्शातेहै—यद्यपि १ स्वरस २ क्वाथ ३ फाट ४ हिम ५ कल्क ६ गुटिका ७ चूर्ण ८ अवलेह ९ स्नेह (तैल घृत) १० आसव ११ और रस (धातुभस्म) आदिकी मात्रा ग्रथोमें पृथक् २ वर्णनकीभी हैं, तथापि समस्त ऋषि मुन्यादि वैद्यक ग्रंथकर्ताओका अतिम यही सिद्धातहै कि ग्रथोक्तमात्रापरही वैद्य निश्चय न रक्खे

किन्तु काल (समय) रोगीकी अग्नि–अवस्था–बल–प्रकृति–दोष (वात–पित्त–कफ) और देश (अनूपादि) को देखकर अपनी बुद्धि अनुसार औषध मात्राकी योजना करे ॥७॥ क्योंकि जैसे बढीहुई अग्नि थोडे पानीसे शमन नहीं होती तैसेही बढाहुवा रोगभी नियतमात्रासे दूर नहीं होता तो वहा रोगानुसार मात्राको बढाना चाहिये और जहा अल्परोग जानपडे वहा नियत मात्रा कोभी अल्प (थोडी) करदेनी चाहिये क्योंकि जैसे यव आदिअन्नके छोटे २ अकुरोंपर अधिक जल गिरनेसे वे अकुर गल जातेहैं तैसेही थोडे रोगपर अधिक मात्रा होनेसे वह हानिही पहुचातीहैं इसलिये वैद्यको उचितहै कि मात्रा को विचारके देवे ॥८॥ ऐसा भावप्रकाशके पूर्व खडके दूसरे भागमें लिखाहै ॥

अथ नाडीविवेकं व्याख्यास्याम. ।

करस्यांगुष्ठमूलेयाधमनीजीवसाक्षिणी ॥ तच्चेष्ट यासुखंदुःखंज्ञेयंकायस्यपण्डितैः ॥ ९ ॥ नाडीध त्तेमरुत्कोपेजलौकासर्पयोर्गतिम् ॥ कलिंगकाक[1] मण्डूकगतिंपित्तस्यकोपतः ॥ १० ॥ हंसपारावत गतिंधत्तेश्लेष्मप्रकोपतः॥लावातित्तिरवर्तीनां गम नेसन्निपाततः ॥ ११ ॥ कदाचिन्मंदगमनाकदा चिद्वेगवाहिनी ॥ द्विदोषकोपतोज्ञेयाहन्तिचस्था नाविच्युता ॥ १२ ॥ स्थित्वास्थित्वाचलतियासा स्मृताप्राणनाशिनी ॥ अतिक्षीणाचशीताचजी वितंहन्त्यसंशयम् ॥ १३ ॥

---

१ कालिंगभृंगधूम्याटाइत्यमरः ।

भाषानुवाद–अब नाडीविवेक वर्णन करतेहैं । रोगीकी नाडी देखनेके समय वैद्य प्रसन्नबुद्धि स्थिरचित्तहोकर स्त्रीके वाम (बाये) और पुरुषके दाहन हाथके अगूठेके मूलमे प्राणवायुकी साक्षीभूत जो नाडी है उसपर अपने सीधे हाथकी तर्जनी आदि ३ अगुली रखके उस नाडीकी चेष्टा (गति) से शरीरके सुखदु खको जाने ॥ ९ ॥ वातप्रकोपमें सर्प और जोककी गति-समान पित्तप्रकोपसे कालिंग (पक्षिविशेष–चा–चुलबुल) काक और मेडुककी गति सदृश ॥ १० ॥ कफप्रकोपसे हस तथा कबूतरकी गतिसमान सन्निपात (त्रिदोष) प्रकोपसे लवा तित्तिर तथा बटेरकी गतिसम ॥ ११ ॥ और द्विदोष (वातपित्त–वातकफ–पित्तकफ) प्रकोपसे कभी मद और कभी वेगसे नाडी चलतीहै और जो नाडी अपने स्थानको छोड देतीहै वह रोगीको नष्ट करदेतीहै ॥ १२ ॥ ठहर २ के चलनेवाली तथा अत्यत क्षीण और जो ठढी पड जावे सो नाडीभी रोगीके प्राणनाशिनीही जानो ॥ १३ ॥

ज्वरकोपेनधमनीसोष्णावेगवतीभवेत् ॥ काम
क्रोधाद्भवेद्वेगाक्षीणाचिन्ताभयाप्लुता ॥ १४ ॥
मन्दाग्नेःक्षीणधातोश्चनाडीमन्दतराभवेत्॥असृ-
क्पूर्णाभवेत्कोष्णागुर्वीसासागरीयसी ॥ १५ ॥
लघ्वीवहतिदीसाग्नेस्तथावेगवतीभवेत्॥सुखित
स्यस्थिराज्ञेयातथाबलवतीमता ॥ चपलाक्षुधि
तस्यापितृप्तस्यवहतिस्थिरा ॥ १६ ॥

भाष्यम्–नाडीपरीक्षार्थमेतेश्लोका शार्ङ्गधरस्य प्रथमखडस्य तृतीयाध्याये कथिता अताऽधिकाश्चापिसन्त्यनेकाआयुर्वेदीयग्रन्थेषुश्लोका. । परञ्च तत्रतेषा लेखन तदग्रथस्य विस्तारार्थमेव कृतो यथा रग्विनिश्चयो निदानेन भवति नभवति तथा नाडया तदेवाह भिषग्वरोवाग्भट कवीश्वरोलोलिंबराजश्च ॥

यीभवन्ति ॥ तथाम्लयोगे मधुरेण तृप्तास्तेषाय
थेष्टं प्रवदंति पथ्यम् ॥ २ ॥ शीतोष्णतोयास
वमद्ययूषफलाम्लधान्याम्लपयोरसानाम्॥यस्या
नुपानंतुहितंभवेद्यत्तस्मै प्रदेयंत्विहमात्रयातत् ॥
॥ ३ ॥ व्याधिश्चकालश्चविभाव्यधीरैर्द्रव्याणि
योज्यानिचतानितानि ॥ सर्वानुपानेषुवरंवदंति
मेध्यंयदंभःशुचिभाजनस्थम् ॥ ४ ॥ लोकस्यज
न्मप्रभृतिप्रशस्तं तोयात्मकाःसर्वरसाश्चदृष्टाः ॥
संक्षेपएषोऽभिहितोऽनुपानेष्वतःपरंविस्तरतोऽ
भिधास्ये ॥ ५ ॥

भाषानुवाद—अब इसके आगे अनुपानविवेक वर्णन करेंगे—अन्न औषध और रस आदिके पीछे या सगही जो सेवन (पान) किया जावे उसे अनुपान कहतेहैं ॥ १ ॥ कई मनुष्य खटाईसे विरक्त (अप्रसन्न) और मिठाईसे अनुरक्त (प्रसन्न) रहतेहैं और कई मिठाईसे विरक्त और खटाईसे अनुरक्त रहतेहैं उनको यथायोग्य (उनके स्वभावानुसार) पथ्य होना उचितहै ॥२॥ ठंडा तथा उष्ण पानी आसव (अर्क) मद्य ' मदिरा , यूष ' मूग आदि वस्तुओ, का औटाके निकालाहुवा साररूपी रस , फलकी खटाई—काजी—दूध—रस ' जो कि गीली औषधसे निकालागया हो , इनमेसे जिस मनुष्यको जो हित समझावे वही उसीको मात्रा ' प्रमाणसे , अनुपान देना चाहिये ॥३॥ रोग तथा समयके अनुकूल खानेकी वस्तुओको विचारकर दे ओर शुद्ध व स्वच्छ पात्रमे रक्खाहुवा पानी सब अनुपानमे श्रेष्ट होनेसे पीनेको देना चाहिये॥४॥ ससारको जन्मसे मरणपर्यन्त पानी हितही है क्यो कि सब रसादि पानीसे ही होतेहैं इस लिये किसी अनुपानमे पानी वर्जित नही यह सक्षेपसे अनुपान कह अब इसके आगे विस्तारसे कहतेहैं ॥ ५ ॥

---

१ यूषस्मृतो वैद्यानामष्टादशगुणेभासि—मदनपालनिघण्टाविति ।

रोगमादौपरीक्षेततदनंतरमौषधम् ॥ ततःकर्म्म भिषक्पश्चाज्ज्ञानपूर्वंसमाचरेत् ॥ १७ ॥ वा० भ० आदौनिदानविधिनाविदध्याद्व्याधिनिश्चयम् ॥ ततस्साध्यंसमीक्षेतपश्चाद्भिषगुपाचरेत् ॥ १८ ॥ वै० जी० वि० १ ॥

भाषानुवाद—सामान्य ज्वरप्रकोपसे नाडी उष्णतापूर्वक अधिक वेग चलतीहै, काम और क्रोधसेभी नाडी अत्यत वेगसे चलतीहै, चिन्ता तथा भ युक्त मनुष्योंकी नाडी क्षीण (बलहीन) चलतीहै ॥ १४ ॥ जिसकी अग्नि म हो तथा धातु क्षीण हो उस मनुष्यकी नाडी अत्यत मद चलतीहै, रक्तप्रको युक्त नाडी कुछ २ उष्ण जड और भारी चलतीहै ॥ १५ ॥ जिस मनुष्यव जठराग्नि प्रदीप्त हो उसकी नाडी हलकी और वेगसे चलतीहै, रोगरहित मनु की नाडी स्थिर और बलयुक्त चलतीहै, भूखे मनुष्यकी नाडी चचल औ भोजनादिसे तृप्त हुवे मनुष्यकी निश्चल (स्थिरतायुक्त) नाडी चलती हैं ॥ १६ नाडीपरीक्षार्थ ये सब श्लोक शार्ङ्गधरके प्रथमखडके तीसरे अध्यायमें वर्ण कियेहैं इनसे अधिकभी श्लोक कई वैद्यक ग्रथोमें लिखेहैं परन्तु उनका लिख केवल उसग्रथके विस्तारार्थही है क्यो कि रोगनिश्चय जैसा निदानसे होता वैसा नाडीसे नहीं होता अत एव वैद्यश्रेष्ठ वाग्भटजी तथा कवीश्वर लोलिंबरा जीने भी कहाहै कि प्रथम वैद्य निदानविधिसे रोगका निश्चयकरे फिर साध्य असाध्यका निश्चयकरे तदनतर ज्ञानपूर्वक चिकित्सा करे अर्थात् साध्यहो त उसका यत्न और असाध्य रोग हो तो उसका त्याग करदेवे ॥ १७–१८ ।

इतिश्रीमत्पडितज्ञारसरामविरचिते सुभाषानुवादविभूषितेऽनुपानदर्पणे मानविवेकनाडीविवेककथने तृतीय प्रमोद ॥ ३ ॥

अथातोऽनुपानविवेकं व्याख्यास्यामः १

अम्लेन केचिद्धितामनुष्या माधुर्य्ययोगेप्रण

उष्णोदकानुपानंतुस्नेहानामथशस्यते ॥ ऋते भल्लातकस्नेहात्स्नेहात्तौवरकात्तथा ॥ ६ ॥ अनुपानंवदन्त्येकेतैले यूपाम्लकांजिके ॥ शीतोदकंमाक्षिकस्यपिष्टान्नस्यचसर्व्वशः ॥ ७ ॥ दधिपायसमद्यार्त्तिविषजुष्टेतथैवच ॥ केचित्पिष्टमयस्याहुरनुपानंसुखोदकम् ॥ ८ ॥ पयोमांसरसोवापिशालिमुद्गादिभोजिनाम् ॥ युद्धाध्वातपसंतापविषमद्यरुजासुच ॥ ९ ॥ माषादेरनुपानंतुधान्याम्लंदधिमस्तुवा ॥ मद्यंमद्योचितानांतु सर्वमांसेषुपूजितम् ॥ १० ॥ अमद्यपानामुदकं फलाम्लंवा प्रशस्यते ॥ क्षीरं घर्म्माध्वभाष्यस्त्रीक्लान्तानाममृतोपमम् ॥ ११ ॥

भाषानुवाद—भिलावा और तुर (जिसके केशरके समान पत्ते और उडदके समान होतेहैं) तेलको छोडकर समस्त तैलादि चिकने पदार्थोंके भक्षणमें उष्णपानी अनुपानहै ॥६॥ कई आचार्य कहतेहैं कि तैल—यूप—खटाई—काजी—सहत और पीसेहुए अन्न (सत्तुआदि के भक्षणमें ठढा पानी अनुपान है ॥७॥ मद्यपानजन्य पीडा और विषभक्षणमें दही और दूध अनुपान है कई आचार्य पीसे अन्नभक्षणका अनुपान सुखोदक (थोडा उष्णपानी) कहतेहै ॥८॥ वान, मूरा आदि भक्षण करनेवालोंको दूध या मासरस अनुपान है,युद्धमार्ग धूप अग्निज्वाला इनसे थकेहुवोंको और विषज तथा मद्यज रोग युक्त पुरुषोंकोभी दूध या मासरसही अनुपानहै ॥ ९ ॥ उडद आदि का अनुपान कॉजी अथवा मट्ठाहै, मासभक्षणमें मद्यपीनेवालोंको मद्यही अनुपानहै ॥१०॥ मद्य न पीनेवालोंको जल या फलकी खटाई अनुपानहै, घाम (धूप) मार्ग (वाट—पथ—रस्ता) पढाने या पढने और स्त्रियोसे थकेहुवे मनुष्यको दूध अमृतके समान अनुपान है ॥ ११ ॥

सुराक्कशानास्थूलान्मनुपानंमधूदकम् ॥ निरा-
मयानांचिन्नंतुभुक्तमध्येप्रकीर्तितम्॥ १२॥ स्नि-
ग्धोष्णंसानुतेपथ्यंकफेरूक्षोष्णमिष्यते ॥ अनु-
पानंहितंचापिपित्तेमधुरशीतलम् ॥ १३ ॥ हितं
शोणितपित्तिभ्यः क्षीरमिक्षुरसस्तथा॥ अर्कशो-
लुहिरीषाणामासवास्तुविपार्तिषु ॥ १४ ॥ अतः
परं तुवर्गाणामनुपानंपृथक्पृथक्॥ प्रवक्ष्याम्यनु-
पूर्वेणसर्वेषामेवमेशृणु ॥ १५ ॥

भाषानुवाद—मद्य (मदिरा—दारू—शराब—वराडी) से दुबले और अत्यंत
ोको जलयुक्त मधु (सहत) अनुपान है रोगरहित मनुष्योंको अनेक
ारकी वस्तु भोजनके मध्य २ (बीच २) मे खिलानाही अनुपान है ॥१३॥
ारोगमें चिकना उष्ण कफरोगमें उष्ण रूखा और पित्तमें मीठा तथा ठढा
ुपान पथ्य है ॥ १३ ॥ रक्तपित्तमें दूध और ऊस (साठें) का रस
ुपान पथ्य है, विषजनित रोगमें अर्क (आकडा—अकौवा) रीठा और
सका आसव अनुपान है ॥ १४ ॥ इसके पश्चात् वर्ग वर्गका पृथक् २
ुपान वर्णन करतेहैं ॥ १५ ॥

१ तत्रपूर्वंसस्यजातीनांबदरास्लवैदलानांधा-
न्यास्लम् ॥ १६ ॥

२ अम्लानांफलानापद्मोत्पलकन्दासवः ॥ १७ ॥

३ कपायाणांदाडिमवेत्रासवः ॥ १८ ॥

४ मधुराणांत्रिकटुकयुक्तः कन्दासवः ॥ १९ ॥

५ तालफलादीनांधान्यास्लम् ॥ २० ॥

६ कटुकानादूर्वानलवेत्रासवः ॥ २१ ॥

७ पिप्पल्यादीनांश्वदंष्ट्रावसुकासवः ॥ २२ ॥

८ कृष्माण्डादीनांदार्वीकरीरासवः ॥ २३ ॥

९ चंचुप्रभृतीनांलोध्रासवः ॥ २४ ॥

उष्णोदकानुपानंतुस्नेहानामथशस्यते ॥ ऋते भल्लातकस्नेहात्स्नेहात्तौवरकात्तथा ॥ ६ ॥ अनुपानंवदन्त्येकेतैले यूषाम्लकांजिके ॥ शीतोदकंमाक्षिकस्यपिष्टान्नस्यचसर्व्वशः ॥ ७ ॥ दधिपायसमद्यार्त्तिविषजुष्टेतथैवच ॥ केचित्पिष्टमयस्याहुरनुपानंसुखोदकम् ॥ ८ ॥ पयोमांसरसोवापिशितालिमुद्गादिभोजिनाम् ॥ युद्धाध्वातपसंतापविषमद्यरुजासुच ॥ ९ ॥ माषादेरनुपानंतुधान्याम्लंदधिमस्तुवा ॥ मद्यंमद्योचितानांतु सर्वमांसेषुपूजितम् ॥ १० ॥ अमद्यपानामुदकं फलाम्लंवा प्रशस्यते ॥ क्षीरं घर्म्माध्वभाष्यस्त्रीक्लान्तानाममृतोपमम् ॥ ११ ॥

भाषानुवाद–भिलावा और तुर (जिसके केशरके समान पत्ते और उडदके समान होतेहैं) तेलको छोडकर समस्त तैलादि चिकने पदार्थोंके भक्षणमें उष्णपानी अनुपानहै ॥६॥ कई आचार्य कहतेहैं कि तैल–यूप–खटाई–काजी–सहत और पीसेहुए अन्न (सत्तुआदि के भक्षणमें ठढा पानी अनुपान है ॥७॥ मद्यपानजन्य पीडा और विषभक्षणमें दही और दूध अनुपान है कई आचार्य पीसे अन्नभक्षणका अनुपान सुखोदक (थोडा उष्णपानी) कहतेहैं ॥८॥ धान, मूग आदि भक्षण करनेवालोंको दूध या मासरस अनुपान है,युद्धमार्ग धूप अग्निज्वाला इनसे थकेहुवोंको और विषज तथा मद्यज रोग युक्त पुरुषोंकोभी दूध या मासरसही अनुपानहै ॥ ९ ॥ उडद आदि का अनुपान कॉजी अथवा मट्ठाहै, मासभक्षणमें मद्यपीनेवालोंको मद्यही अनुपानहै ॥१०॥ मद्य न पीनेवालोंको जल या फलकी खटाई अनुपानहै, घाम (धूप) मार्ग (वाट–पथ–रस्ता) पढाने या पढने और स्त्रियोसे थकेहुवे मनुष्यको दूध अमृतके समान अनुपान है ॥ ११ ॥

सुराकृशानास्थूलानामनुपानंसधूदकम् ॥ निरा-
मयानांचिन्नंतुभुक्तमध्येप्रकीर्तितम् ॥ १२ ॥ स्नि-
ग्धोष्णंमारुतेपथ्यंकफेरूक्षोष्णमिष्यते ॥ अनु-
पानंहितंचापिपित्तेमधुरशीतलम् ॥ १३ ॥ हितं
शोणितपित्तिभ्यः क्षीरमिक्षुरसस्तथा ॥ अर्कशो-
लुशिरीषाणामासवास्तुविषार्तिषु ॥ १४ ॥ अतः
परं तुवर्गाणामनुपानंपृथक्पृथक् ॥ प्रवक्ष्यास्म्यनु-
पूर्वेणसर्वेषामेवमेशृणु ॥ १५ ॥

भाषानुवाद—मद्य (मदिरा—दारू—शराब—वराडी) से दुबले और अत्यंत मोटोको जलयुक्त मधु (सहत) अनुपान है रोगरहित मनुष्योको अनेक प्रकारकी वस्तु भोजनके मध्य २ (बीच २) में खिलानाही अनुपान है ॥ १२ ॥ वातरोगमे चिकना उष्ण कफरोगमें उष्ण रूखा और पित्तमें मीठा तथा ठढा अनुपान पथ्य है ॥ १३ ॥ रक्तपित्तमें दूध और ऊस (साठें) का रस अनुपान पथ्य है, विषजनित रोगमें अर्क (आकडा—अकौवा) रीठा और सिरसका आसव अनुपान है ॥ १४ ॥ इसके पश्चात् वर्ग वर्गका पृथक् २ अनुपान वर्णन करतेहैं ॥ १५ ॥

१ तत्रपूर्वस्यजातीनांबदरास्लवैदलानांधा-
न्यास्लम् ॥ १६ ॥

२ अस्लानांफलानापद्मोत्पलकन्दासवः ॥ १७ ॥

३ कषायाणांदाडिमवेत्रासवः ॥ १८ ॥

४ मधुराणांत्रिकटुकयुक्तः कन्दासवः ॥ १९ ॥

५ तालफलादीनांधान्यास्लम् ॥ २० ॥

६ कटुकानादूर्वानलवेत्रासवः ॥ २१ ॥

७ पिप्पल्यादीनांश्ववदंष्ट्रावसुकासवः ॥ २२ ॥

८ कृष्माण्डादीनांदार्वीकरीरासवः ॥ २३ ॥

९ चंचुप्रभृतीनांलोध्रासवः ॥ २४ ॥

१० जीवन्त्यादीनांत्रिफलास्रवः ॥ २५ ॥

११ कुसुंभशाकस्यसएव ॥ २६ ॥

भाषानुवाद—१ सस्यजाति (शूकधान्य—कुधान्य—शमी धान्य) खेट्टेर और वैदल (जिनकी दाल बनतीहै जैसे, मूग, उडद, मसूर, मटर, तूवर, चने, आदि) इनका काजी अनुपान है ॥ १६ ॥

२ खट्टेफलोंका नीलेकमलके कदका आसव अनुपान है ॥ १७ ॥

३ कषेले भोजनका दाडिम तथा वेतका आसव अनुपान है ॥ १८ ॥

४ मीठे भोजनका सोंठ मिरच पीपल युक्त कदोंका आसव अनुपान है॥ १९॥

५ ताडफल—नारियल—कटहर और केलेका काजी अनुपान है ॥ २० ॥

६ चिरपरे भोजनका दूव—नल—(देवनल) और वेत्र (वेत) आसव अनुपान है ॥ २१ ॥

७ पीपल पीपलामूल—चव्य—(चाभ) चित्रक (चीता) अदरक कालीमिर्च—गजपीपल—रेणुक—अजमोदा—इन्द्रजव—पाठा—जीरा—सरसों-पहाडी नींबफल हींग—भारगी—महुआ—अतीस—वच—वायविडग और कटुकी इस पिप्पलादि वर्गका गोखरू वसुक (बुक केदारगिरी वगइुलप्रसिद्ध) का आसव अनुपान है ॥ २२ ॥

८ कूष्माड (कद्दु) लौकी (सफेद फूलका कद्दु) और तरवूज आदि शाकोंका दार्वी और करीनलका आसव अनुपान है ॥ २३ ॥

९ चचु (लाली) जाई जुही जीवती (शाकभेद) कुदरु करहारी भिलावा वृद्धदारुक वृक्षादनी (वृक्षभेद) फजी (वाड) सेमर रीठा वनस्पति प्रसव (वृक्षभेद) शण (अवाडेकी भाजी दक्षिणमें प्रसिद्ध) और कचनार इनसबोंका लोदका आसव अनुपान है ॥ २४ ॥

१०—११ जीवत्यॉदि वर्गका और कसूभ सागका त्रिफलेका आसव अनुपान हैं ॥ २५ ॥ २६ ॥

---

१ शूकधान्य और ।

२ कुधान्य कोदु सावा वासके बीज और प्रियगु आदिको कहतेहैं ।

३ शमीधान्य उसको कहतेहैं जो ।कि विनही ऋतुमें उत्पन्न है ।

४ जीवत्यादिवर्ग विस्तारपूर्वक सुश्रुतमें देखो ।

१२ मण्डूकपर्यादीनांमहापञ्चमूलासवः ॥२७॥
१३ तालमस्तकादीनामम्लफलासवः ॥ २८ ॥
१४ सैन्धवादीनांसुरासवआरनालंच ॥ २९ ॥
१५ तोयं वा सर्वत्रेति ॥ ३० ॥
भवन्तिचात्र–सर्वेषामनुपानानांमाहेन्द्रंतोयमुत्तमम् । सात्म्यंयस्यतुयत्तोयंतत्तस्मैहितमुच्यते ॥ ३१ ॥ उष्णंवातेकफेतोयंपित्तेरक्तेचशीतलम्॥ दोषवद्गुरुवाभुक्तमतिमात्रमथापिवा ॥ ३२ ॥ यथोक्तेनानुपानेनसुखमन्नंप्रजीर्यति ॥ रोचनंबृंहणंवृष्यंदोषसंघातभेदनम् ॥ ३३ ॥

भाषानुवाद–१२ ब्राह्मी हुलहुल पीपल गुरच गोभी वावची मटर दोनो कटियाली वैंगन करेला एरड पित्तपापटा चिरायता ककोडा नीमतुरै वेतका अग्रभाग और ऋषादिका बृहत्पञ्चमूलका आसव अनपान है ॥ २७ ॥

१३ ताटके गूदे आदिका खट्टे फलोंका आसव अनुपानहै ॥ २८ ॥

१४ सेधानोन समुद्रनोन विटनोंन सौचलनोंन साभरानोंन और उद्भिदनोंन (जो कही खारकी भूमीमेंसे निकाला हुआ पानी सूर्य की उष्णतासे या अग्निसे जमाया जाताहै) इन सबोंका मद्य आसव और आरनाल अनुपान है ॥ २९ ॥

१५ अथवा सर्वत्र केवल जलही अनुपान उत्तम है ॥ ३० ॥

यहा ऐसा जानो कि सब अनुपानोंमें अतारिक्ष (जो वर्षताहुवा पानीही पात्रमें लेलिया जावे) वह उत्तम है या जिसको जो पानी अनुकूल हो उसको वही हित है ॥३१॥ वात और कफजनित रोगमे उष्ण पानी पित्त औ रक्तज रोगमें ठढा पानी अनुपानमे देना उचितहै, दोषयुक्त या प्रमाणसे अधिक खायाहुवा अन्नभी ॥ ३२ ॥ उचित अनुपानसे सुखपूर्वक पचजाताहै और उचित अनुपान रुचिवर्द्धक–हृष्ण (वीर्यवर्द्धक) परात्रमविकाशक दोषनाशक ॥ ३३ ॥

तर्पणंमार्दवकरंश्रमक्लमहरंसुखम् ॥दीपनंदोषश-
मनंपिपासोच्छेदनंपरम् ॥ ३४ ॥ वल्यंवर्णकरं
सम्यगनुपानंसदोच्यते ॥ तदादौकर्शायेतपीतंस्था-
पयेन्मध्यसेवितम् ॥ ३५ ॥ पश्चात्पीतंबृंहयातित-
स्माद्वीक्ष्यप्रयोजयेत् ॥ स्थिरतांगतमाक्लिन्नमन्न
मद्रवपायिनाम् ॥ ३६ ॥ भवत्यावाधजननमनु
पानमतःपिवेत् ॥ नपिवेच्छ्वासकासार्तोरोगेचा
प्यूर्ध्वजत्रुगे ॥ ३७ ॥ क्षतोरस्कःप्रसेकीचयस्य
चोपहतस्स्वरः ॥ पीत्वाऽध्वभाष्याध्ययनगेयस्व
प्नान्नशीलयेत् ॥ ३८ ॥ प्रदूष्यामाशयंतद्धितस्य
कंठोरासिस्थितम् ॥ स्यन्दाग्निसादच्छर्द्यादीना
मयाऽनयेद्ध्रुवम् ॥ ३९ ॥

भाषानुवाद—तृप्ति तथा कोमलताकारक—श्रम श्रमहारक—सुखदायक—अग्नि उन्नायक दोष (वात—पित्त—कफ) कोपसहारक तृषा (प्यास) दारक ॥३४॥ और वल तथा वर्णकारक होताहै सो अनुपान यदि भोजनके पहलेही पान किया जावे तो शरीरको दुर्वल और मध्यमें जैसाका तैसा (घटावे न वढावे ॥ ३५ ॥ और अतमें पीनेसे शरीरको पुष्ट करताहै इसलिये विचारके अनुपान देवे जल आदि पीयेविन भक्षित अन्न स्थिर और कडा रहनेसे तृप्ति देनेवाला नहीं होता ॥३६॥ वरन पीडाकारक हो जाताहै इसलिये भोजनके पश्चात् अनुपान पीनाही चाहिय श्वास कासवाला ठुड्डीसे ऊपरके अगमें जिसके रोग हो वह ॥३७॥ उर क्षती (जिसके हृदयमें घाव होगयाहो) प्रसेकी (जिसके मुखसे लारें गिरे वा पसीनेमें भीगाहुवा) और जिसका स्वर (शब्द) वैठगया हो ये मनुष्य अनु-पान न पीवे और इनसे व्यतिरिक्त (रोगरहित मनुष्य) भी अनुपान पीकर मार्गका चलना अधिक वोलना पढना गाना और सोना ये कर्म्म कदापि न करें ३८ ॥ उक्तकर्म्मोंके करनेसे वह अनुपान आमाशयको दूषित करके उर

मनुष्यके कठ और हृदयमें प्राप्त होकर कफस्राव मदाग्नि और वमन (उलटा) आदि रोगोको उत्पन्न करता है ॥ ३९ ॥

गुरुलाघवचिन्तेयंस्वभावंनातिवर्तते ॥ तथासं-
स्कारमात्रांतकालांश्चाप्युत्तरोत्तरम् ॥ ४० ॥ मंद
कर्म्मानिलारोग्याः सुकुमारास्सुखोचिताः ॥ ज-
न्तवोयेतुतेषांहिचिन्तेयंपरिकीर्तिता ॥ ४१ ॥ व
लिनःखरसक्षाश्चयेचदीप्ताग्नयोनराः ॥ कर्म्मनि
त्याश्चये तेषांनावश्यंपरिकीर्तयेत् ॥ ४२ ॥ इद
मखिलसुक्तंसुश्रुतसंहितायांसूत्रस्थानेषट्चत्वा
रिंशेऽध्याये ॥

भाषानुवाद—द्रव्योका भारीपन—हलकापन—स्वभाव-सस्कार—मात्रा और समय ये कभी नहीं छूटते और सब एकसे दूसरा बलवान् हैं ॥ ४० ॥ इसलिये विचारके वैद्यने अनुपान देना चाहिये, क्यों कि आलसी मदाग्निवाले सुकुमार और सुखमे रहनेवाले मनुष्योके लिये उक्त अनुपान विधिका विचारना है॥ ४१॥ और जो बलवान् कठिन भोजन करनेवाले तीव्राग्नि (तेज अग्नि) वाले तथा प्रतिदिन परिश्रम करनेवाले पुरुषोके लिये उक्त विधिके विशेष विचारकी कोई आवश्यकता नहीं यह अनुपानविधि सुश्रुतसंहिताके सूत्रस्थानके ४६ वें अध्यायमें लिखीहै ॥ ४२ ॥

अथ कतिपयरोगेषु दुग्धानुपानान्याह ।

क्षीरोचितस्यप्रक्षीणश्लेष्मणोदाहतृड्वृतः॥ क्षीर-
पित्तानिलार्तस्यपथ्यसप्यतिसारिणः ॥ ४३ ॥
तद्वत्पुर्लघनोक्तसंप्लुष्टंवनासिवाग्निना ॥ दिव्यांबु
जीवयेत्तस्यज्वरंचाशुनियच्छति ॥ ४४ ॥ सं
स्कृतंशीतमुष्णंवातस्साद्धारोष्णमेववा ॥ त्रिभ

ज्यकालेयुंजीतज्वरिणंहंत्यतोऽन्यथा ॥ ४५ ॥ प
यःसशुंठीखर्जूरमृद्वीकाशर्कराघृतम् ॥ शृतशी
तंमधुयुतंतृड्दाहज्वरनाशनम् ॥ ४६ ॥ तद्वद्वा-
क्षावलायष्टीसारिवाकणचंद्दनैः ॥ चतुर्गुणेनांभ
सावापिप्पल्यावाशृतंपिबेत् ॥ ४७ ॥

भाषानुवाद—अब कितनेक रोगोंपर दूधके अनुमान कहतेहैं, दूध देने योग्य (जिसके शरीरको दूध अनुकूल हो) उसको—क्षीण -कफवालेको—दाह तथा तृषावाले को—पित्तवातसे पीडितको और अतिसारवाले मनुष्यको दूध देना पथ्य है ॥ ४३ ॥ वह दूध जैसे ग्रीष्माग्निसे तप्त वनके समान लघनेसे तपायमान रोगिके शरीरको वर्षाके जलकी नाईं जिला देताहै और उसके ज्वरकोभी शीघ्रही नाश करदेताहै ॥ ४४ ॥ औषधोंसे सिद्ध किया हुवा—ठढा अथवा उष्ण गरम या धारोष्ण (धारोंसे ही निकलाहुवा गरम २) दूधको समयके अनुकूल रोगानुसार विचारकर जिसको जैसा हित समझे उसको वैसाही वैद्यने देना चाहिये, अन्यथा देनेसे अमृत समान दूध विषपानसदृश होकर ज्वरयुक्त मनुष्यको नष्ट करदेताहै ॥४५॥ सोंठ-खजूर (खारक) मुनक्का—मिश्री (खाड) और घी इन्होंसे युक्त दूधको औटाकर ठढा करे और उसमें सहत मिलाकर पिलावे तो वह दूध दाह तृषा और ज्वरका नाश करताहै ॥४६॥ इसीप्रकार दाख खरेंटी मुलहटी सारिवा छोटी पीपल और चदन इन सर्वसहित औटाकर ठढा कियाहुवा दूध अथवा इनके काथमें सिद्ध कियाहुवा दूध अथवा चौगुने पानी करके सिद्ध किया हुवा दूध या केवल पिप्पलीसे सिद्ध किया हुवा दूध पिलानेसे वह दूध दाह तृषा और ज्वर का नाश करताहै ॥ ४७ ॥

कासाच्छ्वासाच्छिरःशूलात्पार्श्वशूलाच्चिरज्वरात्॥
मुच्यतेज्वरितःपीत्वापञ्चमूलीशृतंपयः ॥ ४८ ॥
शृतमेरण्डमूलेनवाबालविल्वेनवाज्वरात्॥धारोष्ण
वा पयःपीत्वाविबद्धानिलवर्चसः ॥ ४९ ॥ सरक्तं

पित्तातिसृतेस्सतृट्छूलप्रवाहिकात् ॥ सिद्धंशु-
ण्ठी वलाव्याघ्रीगोकण्टकगुडैः पयः ॥ ५० ॥
शोफसूत्रशकृद्घातविबन्धज्वरकासजित् ॥ वृश्ची-
वविल्ववर्षाभूसाधितंज्वरशोफनुत् ॥ शिंशि-
पासारसिद्धं वाक्षीरमाशुज्वरापहम् ॥ ५१ ॥ वा-
ग्भटेचिकित्सा स्थानेद्वितीयेऽध्याये ॥

भाषानुवाद—पञ्चमूलमें सिद्ध कियेहुवे दूधके पिलानेसे ज्वरयुक्त रोगीभी कास श्वास शिरकी शूल पार्श्वशूल और पुराने ज्वरसे छूट जाताहै ॥ ४८ ॥ एरण्डमूलमें अथवा कच्चे वेलके गुदेमें ओटाकर सिद्ध किये हुये दुग्धपानसे रोगी ज्वरसे छूट जाताहै, वारोग्य दूधके पीनेसे अधोवायुका रुकना—मलकी रुकावट ॥ ४९ ॥ रक्त तथा फेनयुक्त अतिसार-और तृषा तथा शूलयुक्त प्रवाहिका ये सब रोग दूर होजातेहैं सोठ—खरेटी कटियाली गोखरू और गुड इनकरके सिद्ध किया (औटाया) हुआ दूध पिलानेसे ॥ ५० ॥ शोथ (सूजन) मूत्र तथा मलका रुकना—ज्वर और खासी इन सबका नाश करताहै तथा वृश्चिव, बिल्व, सॉटी इनसे सिद्ध दूध सीसमके गोदमें सिद्ध कियाहुवा दूध ज्वरको शीघ्रही नाश करताहै ऐसा वाग्भटमे चिकित्सास्थानके दुसरे अध्यायमे लिखाहै ॥ ५१ ॥

सौभाग्यपुष्टिवलशुक्रविवर्धनानिकिंसन्तिनोभु
विवह्निरसायनानि ॥ कन्दर्पवर्धिनिपरंतुसि
ताज्य युक्तादुग्धादृतेनसमकोपिसतःप्रयोगः
॥५२॥ वै० जी० वि० ५। इतिदुग्धानुपानानि ॥

भाषानुवाद—शोत्रियराजजी अपनी स्त्रीसे कहतेहैं कि हे कदर्पवर्धिनि (काम-देवकोबढानेवालीस्त्री) सुदरता—पुष्टता—बल और वीर्यको बढानेवाली रसायन रूप क्या बहुतसी वस्तुयें पृथ्वीमे नहींहै किन्तु बहुतेरी है परन्तु मिश्री और

१ शालपर्णी (जिसे गौडदेशमे शालपार्णीभी कहतेहैं)। २ पृश्निपर्णी (जिसे मध्य-देशमे पकरोत् और पीटवनी) ३ छोटी कटियाली ४ बडी कटियाली और ५ गोखरू इन पञ्चमूलको कहतेहैं।

घृतसहित दूध जैसा सुदरता—पुष्टता—बल और वीर्यको बढानेवालाहै तैसा मे गतमे कोई दूसरा प्रयोग (उपाय) नहींहै ॥९२॥ ये दूधके अनुपान वर्णन किये।

अथ योगराजगुग्गुल्वनुपानानि ।

रास्नादिक्काथसंयुक्तोविविधंहन्तिमारुतम् ॥ कां कोल्यादिशृतात्पित्तंकफमारग्वधादिना ॥ ५३ ॥ दार्वीशृतेनमेहांश्चगोमूत्रेणैवपाण्डुताम् ॥ मेदो वृद्धिं चमधुनाकुष्ठेनिंबशृतेनवा ॥ ५४ ॥ छिन्ना क्काथेनवातास्रंशोथंशूलं कणाशृतात् ॥ पाट लाक्काथसहितोविषंमूषकजंजयेत् ॥ ५५ ॥ त्रि फलाक्काथसहितोनेत्रार्तिंहन्तिदारुणाम् ॥ पुन र्नवादेः क्काथेनहन्यात्सर्वोदराण्यपि ॥ ५६ ॥ शार्ङ्ग० खं० २ अ० ७ । इतियोगराजगुग्गुल्वनु पानानि ॥

अब योगराजगुग्गुलुके अनुपानोंको वर्णन करतेहैं।रास्नादि क्काथ सग वातरो गको,काकोल्यादि क्काथ सग पित्तरोगको, आरग्वधादि क्काथ सग कफरोगको९३। दारुहल्दीके काढे सग प्रमेहको गोमूत्र सग पाडुरोगको, सहत सग मेदोवृद्धिको निंबके क्काथ सग कुष्टको ॥९४॥ गुर्च (गुडवेल) के क्काथसग रक्तवातको,पिप लीके क्काथसग शोथ तथा शूलको,सिरसके क्काथसग मूषकदश विषको ॥९५॥ त्रिफलाके क्काथसग नेत्ररोगको और पुनर्नवा (साठी) के क्काथ सग देनेसे समस्त उदरगेगको योगराज गुग्गुलु नाशकरताहै ॥ ९६ ॥ ऐसा शार्ङ्गधरके दूसरे खण्डके सातवे अध्यायमें लिखाहै ये योगराज गुग्गुलुके अनुपान कहे ॥

अथ नारायणचूर्णानुपानान्याह ।

दद्याद्युक्त्वानुपानेनतथाध्मानेसुरादिभिः॥गुल्मे वदरनीरेणविट्संगेदधिमस्तुना ॥ ५७ ॥ उष्णा

वुसिश्चजीर्णेचवृक्षाम्लैःपरिकर्तृषु ॥ उष्णंदुग्धेनो
दरेषुतथातक्रेणवागवाम् ॥ ५८ ॥ प्रसन्नयावात
रोगेदाडिमांभोनिरर्शसि ॥ द्विविधेचविषेदद्याद्
घृतेनविषनाशनम् ॥ चूर्णनारायणंनासदुष्टरोग
गणापहम् ॥ ५९ ॥ शार्ङ्ग०खं० २ अध्याय ६ ॥

भाषानुवाद–अब नारायणचूर्णके अनुपानोको वर्णन करतेहैं, आध्मान (पेटफूलने) मे मदिरा आदिके सग गुल्ममें वेरके क्काथ संग मलबद्धमे दही के पानीसंग ॥५७॥ अजीर्णमें उष्ण (गरम) पानीसग परिकर्त (गुदामे कत-रनेके समान पीडा करनेवाले) रोगमें अमलीके क्काथसग, उदररोगमे ऊटनीके दूधसग अथवा गऊकी छाछसग ॥५८॥ वातरोगमें सुरा मडसग अर्श (मूल-व्याधि) मे अनारके रससग और स्थावर तथा जगमविषमें घीके सग और उक्तरोगोसे व्यतिरिक्त रोगोंमें जैसा योग्य अनुपान समझे उसके सग देनेसे यह नारायणचूर्ण उक्त रोगादिसमस्त दुष्टरोगोका नाश करताहै ॥५९॥ ऐसा शार्ङ्ग-धरसहिताके दूसरे खडके छठवे अध्यायमे लिखाहै ॥ इति नारायणचूर्णानुपानानि ।

अथ निर्गुण्ड्यनुपानानि ।

प्रस्थंनिर्गुण्डीचूर्णस्यगोसूत्रेणसंपिबेत् ॥
दशरात्रप्रयोगेणकुष्ठनाशोभवेद्ध्रुवम् ॥ ६० ॥
निर्गुण्डीचूर्णमादायघृतेनसहभक्षयेत् ॥ कृशस्तु
दुर्बलोवापिबलवीर्ययुतोभवेत् ॥ ६१ ॥ निर्गुण्डी
चूर्णमादायपिबेदुष्णेनवारिणा ॥ सप्तरात्रप्रयो-
गेणरोगमुक्तोभवेन्नरः ॥ ६२ ॥ निर्गुडीमूलमु-
द्धृत्यगृहेचधारयेद्बुधः॥ नश्यन्तिसर्वविघ्नानिगृहा-
द्यागाश्चसर्वशः ॥ ६३ ॥ इतिनिर्गुड्यनुपानानि॥

---

१ शरावेणपरं तद्ज्ञेयमत्र विचक्षणैः ॥ शरावाभ्यां भवेत्प्रस्थश्चतुःप्रस्थैस्तथा-
ऽऽढकम् ॥ १ ॥ इति

अथभृंगराजानुपानानि ॥ भृंगराजपत्ररसं कृष्ण-
जीरसमंपिबेत् ॥ तैलेनसहसंदद्याद्वलीपलितव
र्जितः ॥६४॥ भृंगराजरसंचैवगुडूचीरससंयुतम्॥
मासमात्रप्रयोगेणसर्वव्याधिर्विनश्यति ॥ ६५ ॥

॥ इतिभृंगराजानुपानानि ॥

भाषानुवाद—अव निर्गुण्डीके अनुपान कहते हैं १ प्रस्थ (९३ तोलें ४ मासे भर) निर्गुडीके चूर्णको गोमूत्र सग दशरात्रि पर्यन्त पिलानेसे कुष्ट (कोढ) दूर होजाता है ॥ ६० ॥ निर्गुडी चूर्णको घी के सग सेवन करनेसे कृश तथा वलहीनभी मनुष्य वलवीर्ययुक्त हो जाता है ॥ ६१ ॥ निर्गुडी चूर्णको गरम २ पानीके सग सात रात्रिपर्यत सेवन करनेसे रोगरहित मनुष्य होजाताहै ॥६२॥ निर्गुडीके मूल (जड को उखाडके यदि गृहस्थ अपने घरमे रक्खे तो उसके घरमें सर्प नही रहता और सव प्रकारके विघ्न दूर होजाते हैं ॥६३॥ अव भृगराजके अनुपान कहते है, भृगराजके पत्तोके रसको कालेजीरेके अथवा तैलके सग पान करे तो वह मनुष्य वृद्धावस्थामें भी तरुणके समान वलवान् रहै ॥६४॥ भृगराजके रसको गुर्चके रस सग १ मास पर्यन्त पीवे तो सव प्रकारके रोग दूर होय ॥ ६५ ॥

अथ सकलरोगेषु हरीतक्यनुपानानि ।

**सितायुक्ताचशरदिहेमन्तेनागरेणच॥ शिशिरेपि
प्पलीयुक्तावसन्तेमधुनासह ॥ ६६ ॥ ग्रीष्मेचगुड-
संयुक्तावर्षासुलवणेनच॥ अनैनैवविधानेन भक्ष-
येद्योहरीतकीम् ॥ ६७ ॥ तस्यवृद्धिर्वलंवीर्य्यमा-
रोग्यंस्थिरयौवनम् ॥ अग्निर्दहतिकाष्ठानितनुरो
गान्हरीतकी ॥ ६८ ॥ कदाचित्कुप्यतेमातानो-
दरस्थाहरीतकी ॥ मातेवसर्वदाज्ञेयाहितदात्री
हरीतकी ॥ ६९ ॥ इदमखिलमुक्तंगौरिकांचलि-**

कालंत्रे ॥ अन्यच्च ॥ ग्रीष्मेतुल्यगुडांसुसैन्धवयु-
तांमेघावनह्येम्बरे तुल्यां शर्करयाशरद्यमलयाशु-
ण्ठ्यातुषारागमे ॥ पिप्पल्याशिशिरेवसन्तसमये
क्षौद्रेणसंयोजितारोजन्म्राप्यहरीतकीमिवरुजो
नश्यन्तुतेशत्रवः ॥ ७० ॥ मदनपालनिघंटौ ॥

भाषानुवाद—अब सब रोगोपर हरीतकी (हर्ड) के अनुपानोको कहते है. शरद्ऋतुमें मिश्रीके सग हेमतमे सोंठके सग शिशिरमें छोटी पीपलके सग वसन्तमें सहतके सग ॥६६॥ ग्रीष्मऋतुमें गुडके सग और वर्षामे सैंधव (सेधानोन) के सग हरीतकी (हिरडा, हर्ड) को खानेसे ॥ ६७ ॥ मनुष्य रोगरहित और बलवीर्य सहित आयुपर्यन्त रहता है, जैसे अग्नि काष्टको दग्ध करदेती है तैसेही शरीरके समस्त रोगोको हरीतकी नाश करदेती है ॥ ६८ ॥ कोई समय अपने बालकपर माता क्रोधित हो जाती है पर पेटमें हरीतकी जाकर कुपित नहीं होती इस लिये माताके समान-हित करनेवाली हरीतकी (हर्ड) को जानना चाहिये ॥६९॥ ये निर्गुंडी भृगराज और हरीतकी के उक्त अनुपान गोरिका-चलिका तत्रमें लिखे हैं और हरीतकीके अनुपान इसी प्रकार मदनपालनिघटुमें भी लिखेहै ॥ ७० ॥

गुडूच्यनुपानान्याह ।

घृतेनवातंसगुडाविबंधंपित्तंसिताढ्यामधुनाकफ
ञ्च ॥ वातास्रमुग्रंसुचुतैलमिश्राशुण्ठ्यामवातंश
मयेद्गुडूची ॥ ७१ ॥ मद० निघं० अमृतास्वर
सोहन्तिक्षौद्रयुक्तोहिकामलाम् ॥ शार्ङ्गधरेण
चोक्तत्वाच्छ्लोकोयंरचितोमया ॥ ७२ ॥ समधु
च्छिन्नास्वरसोनानामेहनिवारणः ॥ वदन्तिभि
षजः सर्वेशरदिन्दुनिभानने ॥ ७३ ॥ वै० जी०

विलासे ४। जीर्णज्वरंकफकृतंकणयासमेतद्धि
न्त्योद्भवोद्भवकषायकएषहन्ति ॥ रामोदशास्य-
मिवरामइवप्रलंबंरामोयथासमरमूर्द्धनिकार्तवी-
र्य्यम् ॥७४॥ वै०जी०वि० १। अमृताक्काथकल्का-
भ्यांसक्षीरंविपचेद्घृतम् ॥ वातरक्तंजयत्याशुकु
ष्ठंजयतिदुस्तरम् ॥ ७५ ॥ शार्ङ्ग०खं० २ अ० ९॥

भाषानुवाद—गुडूचीके अनुपानोंको वर्णन करतेहैं घृतके सग वादीको गुडके सग विबध (मलके रुकने) को मिश्रीके सग पित्तको मधु (सहत के सग कफको एरडतैल सग वातरक्तको और सोंठ सग देनेसे आमवातको गुडूची (गुर्च) दूर करतीहै, ऐसा मदनपाल निघटुमें लिखाहै ॥७१॥ गुडूचीक स्वरस (गिलोगुर्चसे निकाला हुवा रस) सहतके साथ पिलानेसे कामल (कमल—पीलिया) का नाश करदेताहै ऐसा शार्ङ्गधरजीने स्वसहितामे द्वितीय खडमें किसी एक श्लोकके चरणमे कहाहै, इसलिये यहा हमने श्लोक बनाक लिखाहै ॥७२॥ लोलिंबराजजी अपनी स्त्रीसे कहते हैं कि हे शरद्ऋतुके चद्रमा मान मुखवाली स्त्री ! समस्त वैद्योंका तथा मेराभी यही कहनाहै कि गुडूचीक स्वरस सहतके सग सेवन करनेसे नाना प्रकारके प्रमेह (परमे) नाश होजाते हैं ॥७३॥ और गुडूची (गुरच)का क्वाथ छोटी पीपलके चूर्ण सग लेने कफकृत जीर्णज्वरको तैसे नाश करताहै जैसे रामचद्रजी रावणका बलदेवज प्रलंबासुरका और परशुरामजी सहस्रार्जुनका नाश करते भये यह वैद्यजीवन लिखाहै ॥७४॥ गुरचके क्वाथ या कल्कमे दूध सहत घृतको औटावे जब घृ (घी) मात्र शेष रहजावे उसे छानके इसे गुडूचीघृत (अमृताघृत) कहते इसके सेवनसे वातरक्त और कुष्ठ दूर होताहै ऐसा शार्ङ्गधरमे लिखाहै ॥ ७५

गुडूचीस्वरसःकर्षक्षौद्रंस्यान्माषकोन्मितम् ॥ सै-
न्धवंक्षौद्रतुल्यंस्यात्सर्वमेकत्रमर्दयेत् ॥ ७६ ॥
अंजयन्नयनंतेनपिड्कार्म्मातिमिरंजयेत् ॥ काचं

कंडूंलिंगनाशंशुक्लकृष्णगतान्गदान् ॥ ७७ ॥
शार्ङ्ग० खं० ३ अ० १३ ॥

भाषानुवाद—गुरचके १ कर्ष (१० मासे) रसमे १ मासा सहत और १ मासा सेधानोंन मिलाकर खरलकरे ओर इसको नेत्रमे लगावे तो ॥७६॥पिल्लार्म्म रोग तिमिर (दिनोधी) काचबिदु खुजाल लिंगनाश ओर नेत्रके श्वेत तथा काले विभागमे जो कुछ नेत्र रोगहो सो सब दूर होय ॥७७॥ ऐसा शार्ङ्गधरके ३ खडके ॥ १३ ॥ वे अध्यायमे लिखाहै ॥

अथ नेत्ररोगेपुनर्नवानुपानानि ।

दुग्धेनकंडूंक्षौद्रेणनेत्रस्रावंचसर्पिषा ॥ पुष्पंतैले नातिसिरंकांजिकेननिशांधताम् ॥ पुनर्नवाजय त्याशुभास्करास्तिसिरंयथा ॥ ७८ ॥ शार्ङ्ग० खं० ३ अ० १३ ॥

भाषा०—अब नेत्ररोगपर पुनर्नवा साठी के अनुपानोकोभी कहतेहैं,पुनर्नवाको दूधमे घसके नेत्रमें लगानेसे नेत्रोकी खुजाल सहतमें घसकर लगानेसे नेत्रस्राव (नेत्रोसे जलका वहाव , घीमे घसकर लगानेसे फूल्ली तेलमे लगानेसे तिमिर (दिनोधी) ओर काजीमे घीसकर लगानेसे नक्ताध (रतोधी) ये सब नेत्रोके रोग दूर होते है ॥७८॥ येभी शार्ङ्गधरके ३ रे खटके १३ वे अध्यायमे लिखा है ॥

अथ त्रिफलानुपानानि ।

एकाहरीतकीयोज्याद्वौचयोज्योविभीतको ॥
चत्वार्यामलकान्येवत्रिफलैषाप्रकीर्तिता ॥ ७९ ॥
त्रिफलाशोथमेहघ्नीनाशयेद्विषमज्वरान् ॥ दीप
नीश्लेष्मपित्तघ्नीकुष्ठंहन्त्रीरसायनी ॥ सर्पिर्मधुभ्यां
संयुक्तासेवनेत्रासयाञ्जयेत् ॥८०॥ शार्ङ्ग० खं० २
अ० २। फलत्रिकोद्भवंक्वाथंगोमूत्रेणवपाययेत् ॥

वातश्लेष्मकृतंहन्तिशोथंवृषणसंभवम् ॥ ८१ ॥ शार्ङ्ग० खं० २ अ० २। क्षौद्रेणत्रिफलाक्काथः पीतोमेदोहरःस्मृतः॥शीतीभूतंतथोष्णांवुमेदोहृत्क्षौद्रसंयुतम् ॥ ८२ ॥ शार्ङ्ग० खं० २ अ० २। त्रिफलारग्वधक्काथश्शर्कराक्षौद्रसंयुतः ॥ रक्तपित्तहरोदाहपित्तशूलनिवारणः ॥ ८३ ॥ शा० खं० २ अ० २। त्रिफलायारसः क्षौद्रयुक्तोजयतिकामलाम् ॥ शार्ङ्गधरेणचोक्तत्वाच्छ्लोकोयंरचितोमया ॥ ८४ ॥ मृतायास्त्रिफलायष्टिचूर्णमधुघृतान्वितम् ॥ दिनांतेलेढिनित्यंसरतौचटकवद्भवेत् ॥ ८५ ॥ इति ग्रंथांतरात् ॥

भाषानुवाद—अब त्रिफलाके अनुपान वर्णन करतेहैं— १ हरीतकी (हर्ड २ बहेडे ४ आवलेके योग को त्रिफला कहतेहैं, अथवा १ भाग हर्ड उससे दून बहेडा—उससे दुना आवला इनके योगको त्रिफला कहतेहैं ॥ ७९ ॥ त्रिफलाचूर्णको नित्य सेवन करनेसे शोथ—प्रमेह—विषमज्वर—कफ—पित्त—कुष्ठ इन सबका नाश होताहै और अग्निदीप्त होतीहै तथा रोगरहित वह मनुष्य होकर अपनी पूर्णायुको प्राप्त होताहै और उसका वलवीर्य नित्य वर्द्धितही होजाताहै इस त्रिफलाचूर्णको नित्य रात्रि समय सहत और घीके सग यदि सेवन करे तो समस्त नेत्ररोग दूर होजातेहैं ॥८०॥ और त्रिफलाके क्काथको गोमूत्र सग पीने वादी तथा कफसे उत्पन्न भई पोतोंकी शोथ (सूजन) भी दूर होजातीहै ॥८१॥ त्रिफला क्काथ सहत सग पिलानेसे मेदोवृद्धि दूर करताहै और इसी प्रकार गरम पानीभी ठढाहोनेपर सहत सग पीनेसे मेदका नाश करताहै ॥८२॥ यह त्रिफलाके क्काथको बहेटेकी भीतरकी गुठली (मींगी वीजा) शर्करा और सहत सग पिलावे तो रक्तपित्त दाह और पित्तशूल ये सब दूरहोय ॥ ८३ ॥ ये शार्ङ्गधरके २ रे खडके २ रे अध्यायमे लिखाहै. यदि त्रिफल

क्राथको केवल सहत सग पिलावे तो कामला दूर होय ऐसाभी शार्ङ्गध-रजीने अपने ग्रथमे कहीं लिखाहै इस लिये हमने यहा श्लोक बनाकर लिखाहै ॥ ॥८४॥ त्रिफला चूर्ण सहत, घी और कातिसार इन तीनोके सग नित्य रात्रिको सेवन करे तो वह पुरुष मैथुन (स्त्रीसग) जैसे चटक (लाल) मुनियाके सग करताहै तैसे करे अर्थात् कभी थके नहीं ॥ ८९ ॥

इति श्रीमत्पाडितज्ञारसरामविरचितेसुभाषानुवादविभूषितेऽनुपानद-
र्पणेऽन्नौषध्यनुपानविवेककथने चतुर्थः प्रमोद ॥ ४ ॥

**अथातोमृत्युञ्जयादिरसानांधातूपधातूनाञ्चानुपा-
नविवेकंव्याख्यास्यामः ॥१॥ मृत्युर्विनिर्जितोय-
स्मात्तेनमृत्युंजयोरसः॥मधुनालेहनंप्रोक्तंसर्वज्वर
निवृत्तये ॥ २ ॥ दध्युदकानुपानेनवातज्वरनिवर्ह
णः ॥ आर्द्रकस्यरसैःपानंदारुणेसन्निपातके ॥ ३ ॥
जम्बीरद्रवयोगेनह्यजीर्णज्वरनाशनः॥ अजाजी-
गुडसंयुक्तोविषमज्वरनाशनः ॥ ४ ॥ रसेन्द्रसार
संग्रहेज्वराधिकारेचोक्तमिदम् ॥**

भाषानुवाद—अब इसके आगे मृत्युजयादि रसोंका तथा सप्त धातु और उपधातुवोका अनुपानविवेक वर्णन करेंगे ॥ १ ॥ मृत्युको जीतनेसे मृत्युजय रस कहलायाहै, मृत्युजय रसको मधु (सहत) सग देनेसे सब प्रकारके ज्वर दूर होतेहैं ॥२॥ दहीके जल सग देनेसे वातज्वरका—अदरकके रससग देनेसे सन्निपात वा ॥ ३ ॥ जबीरद्रव—(जबीरीका यत्रसे निकालाहुआ अर्क) सग देनेसे अजीर्णज्वरका और जीरा व गुडसग देनेसे मृत्युजय रस विषम ज्वरका नाश करताहै ॥ ४ ॥ ऐसा रसेन्द्रसारसग्रहमें ज्वराधिकारमें लिखाहै ॥

अथवसन्तकुसुमाकररसस्यानुपानानि ।

**शिलाजतुमधृपणैः क्षयगदेषुसर्वेष्वपिप्रमेहरुजि
रात्रिभिस्तमधुशर्कराभिस्सह ॥ सितामलयजद्र**

वैर्महतिरक्तपित्तेऽथवासितामधुसमन्वितैर्वृषभपल्ल-
वानांद्रवैः ॥ ५ ॥ त्रिजातगजचन्दनैरपिचतुष्टिपु-
ष्टिप्रदोमनोभवकरः परोवसिपुशंखपुष्पीरसैः ॥
अभीरुरसशर्करामधुभिरम्लापित्तामयेपरेपुतुयथो
चितंननुगदेषुसंयोजयेत्॥६॥उक्तमिदंग्रन्थांतरे॥

भाषानुवाद—अब वसन्तकुसुमाकर रसके अनुपान वर्णन करतेहैं-शिलाजीत और कालीमिरचके चूर्ण सहित सहतमें मिलाकर देनेसे समस्त क्षयरोगोंका-हलदी,सहत और मिश्रीसग देनेसे समस्त प्रमेहोंका-मिश्री और चंदनके क्राथसग देनेसे अथवा मिश्री,मधु और अडूसेके रससग देनेसे अत्यत वढेहुवे रक्तपित्तका वसतकुसुमाकर रस नाश करताहै ॥ ५ ॥ त्रिजात (तज—पत्रज—इलायची) गजपीपल और चदनके साथ वसन्तकुसुमाकरको सेवन करानेसे तुष्टि (हर्ष) पुष्टि (प्रवलता) को देताहै और कामदेवको वढाताहै, शखाहोलीके रससग देनेसे वमनका शतावरीके रस मिश्री और सहतसग देनेसे अम्लपित्तका वसतकुसुमार नाश करता है उक्त रोगोंसे अन्यरोगोंमें वैद्यने अपनी बुद्धयनुसार अनुपानोंकी योजना करनी चाहिये ॥ ६ ॥ ऐसा ग्रंथातरमे लिखाहै ॥

अथ लोकनाथरसस्यानुपानानि ।

**अरुचौनिस्तुषंधान्यंघृतभृष्टंसशर्करम् ॥ दद्यात्त-
थाज्वरेधान्यंगुडूचीक्काथमाहरेत् ॥ ७ ॥ उशीर
वासकक्काथंदद्यात्समधुशर्करम्॥रक्तपित्तकफेश्वा
सेकासेचस्वरसंक्षये ॥ ८ ॥ अग्निभृष्टजयाचूर्ण
मधुनानिशिदीयते ॥ निद्रानाशेऽतिसारेचग्रह-
ण्यांमंदपावके ॥ ९ ॥ सौवर्चलाभयाकृष्णाचूर्ण
मुष्णजलैःपिवेत् ॥ शूलेजीर्णेतथाकृष्णामधुयुक्ता
ज्वरेहिता ॥ १० ॥ प्लीहोदरेवातरक्तेछर्द्यांचैव**

गुदांकुरे ॥ नासिकादिषुरक्तेषुरसदाडिमपुष्प
जम् ॥ ११ ॥ दूर्वायास्स्वरसंनस्यंदद्याच्छर्कर
यायुतम् ॥ कोलमज्जाकणंवर्हिपक्षभस्मसशर्कर
म् ॥ १२ ॥ मधुनालेहयेच्छर्दिंहिक्काकोपस्यशा
न्तये ॥ विधिरेषप्रयोज्यस्तुसर्वास्मिन्पोटलीरसे
॥ १३ ॥ मृगांकेहेमगर्भेचमौक्तिकाख्येरसेतथा॥
इत्ययंलोकनाथाख्योरसःसर्वरुजोजयेत् ॥ १४ ॥
शार्ङ्ग० खं० २ अ० १२ ॥

भाषानुवाद—अब लोकनाथरसके अनुपानोंको वर्णन करतेहैं । लोकनाथ रसको अरुचिमगमे निस्तुष धान्य (छिलेहुवे धनियो को घीमे भूजिके उसमे चूर्ण मिलाकर उसके सग देवे, ज्वरमे धनिया और गुरुचके क्वाथसग देवे ॥ ७ ॥ रक्तपित्त—कफ—श्वास—कास—और स्वरभग इनरोगोमें सहतशक्करयुक्त वासा और अडूसेके क्वाथसग देवे ॥ ८ ॥ निद्रानाश अतिसार—सग्रहणी और मन्दाग्निमे रसकीआधी भागके चूर्णको सहतमे मिलाकर उसके सग रात्रिके समय देवे ॥ ९ ॥ शूल और अजीर्णमे सोचरनोंन हर्ड और पीपलके चूर्णसग उष्ण-जलसे देवे,ज्वरमें सहत और छोटीपीपलसग देवे ॥ १० ॥ प्लीहोदर—वातरक्त—उल्टी- गुदाकुर और नकसीर (नासिकासे रक्त गिरना) इन रोगोंमें दाडिम-पुष्परसमग देवे ॥ ११ ॥ तथा नासिकासे रुधिरस्त्रावमे दूवका रस शक्कर सहित नावमे सुघावे, वेरकी मीगी पीपल—मोरपखके चदवोकी भस्म इन सबका महीनचूर्ण शर्करा सहित ॥ १२ ॥ सहतमें मिलाकर इसके सग लोकनाथ रसको उल्टी (वाति) रोग और हुचकीमे देवे तो इन अनुपानोंसे उक्त समस्तरोगोका यह लोकनाथरस नाश करताहै. जैसी अनुपानविधि लोकनाथरसकी कहीहै वेसीही पोटलीरसकी ॥ १३ ॥ मृगाककी और मौक्तिकरसकी भी जानो, यह लोकनाथरस समस्त रोगोंको दूर करनेवाला है ॥ १४ ॥ ऐसा शार्ङ्गधरसंहिताके दूसरे खण्डके १२ वे अध्यायमे लिखाहै ॥

अथ स्वर्णमालिनीवसन्तरसस्यानुपानानि ।

जीर्णज्वरेधातुगतेऽतिसारेरक्तान्वितेरक्तजदृष्टि-रोगे ॥ घोरेव्यथेपित्तकृतेऽथरोगेबलप्रदोदुग्धयुतं च पथ्यम् ॥ १५ ॥ वसन्तोमालिनीपूर्वःसर्वरोग हरः शिशोः ॥ गर्भिण्यादेयमेतच्चजयन्तीपुष्पकैर्युतम् ॥ सर्वज्वरहरंश्रेष्ठंगर्भपालनमुत्तमम्॥१६॥ ग्रंथांतरेचोक्तमिदम् ॥

भाषानुवाद—अव स्वर्णमालिनीवसन्त (जिसे अनाभिज्ञ लोग सुवर्णवसन्त मालतीभी कहतेहैं उस) के अनुपानोको वर्णन करतेहैं—स्वर्णमालिनिवसन्तको छोटी पीपल और सहत सग सेवन करनेसे जीर्णज्वर धातुगतज्वर रक्तातिसार अत्यन्त पीडायुक्त रक्तज नेत्ररोग और पित्तजनित सर्व रोग दूर होकर वलयुक्त वह मनुष्य होजाताहै इससे दुग्ध युक्त पथ्य देना चाहिये ॥ १५ ॥ यह स्वर्णमालिनीवसन्त रस उक्त अनुपानसेही वालकोंके रोगोको दूर करताहै और जयन्ती पुष्पके साथ देनेसे गार्भिणी स्त्रीके ज्वरको दूर करके गर्भकी रक्षा करताहै ॥ १६ ॥ ऐसा ग्रथान्तरमें लिखाहै ॥

अथ वृहन्मालिनीवसन्तरसस्यानुपानानि ।

वल्लप्रमाणंमधुपिप्पलीभ्यांजीर्णज्वरेधातुगतेप्रदेयः॥ छिन्नोद्भवासत्त्वसितायुतश्चसर्वप्रमेहेषुचयोजनीयः॥ ॥ १७ ॥ कृच्छ्राश्मरींनिहन्त्याशुमातुलुंगार्द्रकद्रवैः ॥ रसोवसन्तनामायंमालिनीपदपूर्वकः ॥ १८॥ भैषज्यसारामृतसंहितायामुक्तम् ॥

भाषानु०—अव वृहन्मालिनीवसन्तरसके अनुपानोंको वर्णन करतेहैं—रतीभर वृहन्मालिनीवसन्तरसको सहत और छोटी पीपलके सग सेवन करानेसे जीर्णज्वर और धातुगतज्वर दूर होय गुरुच (गिलोय) सत्त्व और मिश्रीसे

देनेसे प्रमेहमात्र दूर होय ॥ १७ ॥ अदरकका रस और बिजोरेके रसके साथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र और पथरी दूर होय ॥ १८ ॥ यह बृहन्मालिनीवसन्तरस भैषज्यसारामृतसहितामें लिखाहै ॥

अथ पाशुपतरसस्यानुपानानि ।

तालमूलीरसैनैवह्युदरामयनाशनः ॥ मोचारसे नातिसारंग्रहणीतक्रसैंधवैः ॥ १९॥सौवर्चलकणा शुंठीयुतश्शूलंविनाशयेत् ॥ अर्शांसिहन्तितक्रेणपिप्पल्याराजयक्ष्मकम् ॥ २० ॥ वातरोगांनिहंत्याशुशुण्ठीसौवर्च्चलान्वितः ॥२१॥ शर्कराधान्ययोगेन श्लेष्मरोगश्चतत्क्षणात् ॥ अतः परतरोनास्तिधन्वंतरिमतोरसः ॥ २२ ॥ रसेन्द्रसारसंग्रहेऽजीर्णाधिकारेचोक्तम् ॥

भाषानुवाद–अब पाशुपतरसके अनुपानोंको वर्णन करतेहैं–तालमूलीके रससग उदररोगका–मोचरससग अतिसारका–छाछ और सेंधेनोंन सग संग्रहणीका ॥१९॥ सोंचरनोंन–पीपल और सोंठ सग शूलका केवल छाछसग अर्श (मसे–मूलव्याधि–बवासीर) का छोटीपीपल सग राजयक्ष्मा (क्षयी) का ॥२०॥ सोंठ और सोंचरनोंन सग वातरोगका–मिश्री और धनियेसग पित्तरोगका॥२१॥ छोटीपीपल और सहत सग देनेसे कफरोगका पाशुपतरस नाश करताहै, इससे उत्तम कोई दूसरा रस नहींहै इसे धन्वतरिजीने सर्वोत्तम रस मानाहै॥ २२ ॥ ऐसा रसेंद्रसारसग्रहमे अजीर्णाधिकारमें लिखाहै ॥

अथ पर्पटीरसस्यानुपानानि ।

सहिंगुजीरकव्योषैश्शमयेद्ग्रहणीरसः ॥ दशमूलांभसावातज्वरंत्रिकटुनागकम् ॥२३॥ज्वरंमधुकतोयेनपंचकोलेनसर्दजम्॥यक्ष्माणंमधुपिप्पल्यागोमूत्रेणगुदाकुरान्॥२४॥ शूलेचैरंडतैलेनपाण्डु

शोथंसगुग्गुलुः ॥ कुष्ठानिभंगभल्लातवाकुचीपञ्च
निंबकैः ॥ २५ ॥ धत्तूरबीजसंयोगान्महोन्मादवि
नाशिनी ॥ अपस्मारंनिहन्त्याशुव्योषनिंवदलै
स्सह ॥ २६ ॥ स्तनंधयशिशूनांतुनितरांपर्पटीहि
ता ॥ पथ्यायाश्चूर्णसंयुक्ताव्याधींश्चान्यान्सुदुस्त
रान् ॥ २७ ॥ ग्रंथातरेचेदमुक्तम् ॥

भाषानुवाद—अब पर्पटीरसके अनुपानोंको वर्णन करतेहैं—हींग—जीरा और त्रिकटु (सोंठ मिरच पीपल) सग देनेसे सग्रहणीको दशमूलके काथ संग देनेसे वातज्वरको त्रिकटु सग देनेसे कफको ॥२३॥ मुलहटीके सारसग देनेसे ज्वरको पचकोलके काढे सग देनेसे सब प्रकारके ज्वरको सहत और छोटी पीपल सग देनेसे क्षयीको गोमूत्र सग देनेसे अर्शको ॥२४॥ एरड तेल सग देनेसे शूलको गुग्गुल सग देनेसे पाडु और शोथको भगरा भिलावा बावची ओर नींवका पचांग इनके सग देनेसे कोढको॥२५॥धत्तूरेके बीजों सग देनेसे उन्मादको त्रिकटु और नींवके पत्तो सग देनेसे मृगीको पर्पटी रस दूर करता है ॥२६॥ यह रस दूध पीनेवाले बालकोंको अत्यत हितकारीहै और हिडेंके चूर्ण सग सेवन करनेसे यह पर्पटी रस अनेक प्रकारकी व्याधियोका नाश करताहे ॥ २७ ॥ ऐसा ग्रथातरमे लिखाहै ॥

अथ जयाजयन्त्योरनुपानानि ।

जयन्तीवाजयावाथक्षीरैः पित्तज्वरापहा ॥ मुद्गा
मलकयूषेणपथ्यंदेयंघृतंविना ॥ २८ ॥जयन्तीवा
जयावाथसक्षौद्रमरिचान्विता ॥ सन्निपातज्वरंह
न्तिरसश्चानंदभैरवः ॥२९॥ जयन्तीवाजयावाथ
विषमज्वरनुद्घृतैः॥सर्वज्वरंमधुव्योषैर्गवांमूत्रेण
शीतकम् ॥ ३० ॥ चन्दनस्यकषायेणरक्तपित्तज्व

रापहा ॥ जयंतीवाजयावाथमाक्षिकेणचकास
जित् ॥ ३१ ॥ जयन्तीवाजयावाथतण्डुलोदकपा
नतः ॥ अश्मरींहन्तिनोचित्रंमूत्रकृच्छ्रन्तुदारुण
म् ॥ ३२ ॥ जयन्तींवाजयांवाऽथगोमूत्रेणयुतां
पिबेत् ॥ हन्त्याशुकाकणंकुष्ठंसुलेपेनचतद्द्रुतम्
॥३३॥ द्विनिष्कंकेतकीमूलंपिष्ट्वातोयेनपाययेत् ॥
जयंतीवाजयावाथमेहंहन्तिसुराह्वयम् ॥ ३४ ॥
जयन्तीवाजयावाथ मधुनामेहजिद्भवेत् ॥ लोध्र
मुस्ताभयात्तुल्यंकट्फलंचजलैःसह ॥ ३५॥ का
थयित्वापिबेच्चानुमधुनासर्वमेहजित् ॥ जयंती
वाजयावाथगुडैःकोष्णंजलैःपिबेत् ॥ ३६ ॥ त्रि
दोषोत्थंहरेद्गुल्मं रसश्चानंदभैरवः ॥ जयंतीवा
जयाहन्तिशुंठ्यासर्वभगंदरम् ॥ ३७ ॥ जयंती
वाजयावाथ तक्रेणग्रहणीम्रणुत् ॥ जयंती-
वाजयावाथरसश्चानंदभैरवः ॥ ३८ ॥ रक्त
पित्तेत्रिदोषोत्थेशीततोयेनपाययेत् ॥ जयन्तीवा
जयावाथभृंगद्रावैर्निशांध्यनुत् ॥ ३९ ॥ जयन्ती
वाजयावाथघृष्ट्वास्तन्येनचांजयेत् ॥ स्रावणंसर्व
दोषोत्थंसांसवृद्धिंचनाशयेत् ॥ ४० ॥ कृत्स्नमिद
मुक्तंरसेन्द्रसारसंग्रहज्वराधिकारे ॥

भाषानुवाद—अब जयाजयंती वटीके अनुपानोंको वर्णन करतेहै-जया तथा जयंती वटी दूधके संग देनेसे पित्तज्वरका नाश करतीहै, इसपर घृत विनापथ्य मूंग और आमलेका यूषसाथ देना चाहिये ॥ २८ ॥ काली मिरच और सहत संग जया तथा जयंतीको देनेसे सन्निपातज्वर दूर होय और इसी अनु-

पानसे आनदभैरव रसभी सन्निपातका नाश करताहे ॥ २९ ॥ घृतसग त्रिपर्ण ज्वरका त्रिकटु चूर्ण और सहत सग समस्त ज्वरमात्रका गोमूत्र सग शीतज्वरका ॥३०॥चदन क्काथसग रक्तपित्तज्वरका सहतसग खांसीका॥३१॥ दूध सग पाडु और शोथका चावलोंके पानीसंग देनेसे पथरी और मूत्रकृच्छ्रका जया तथा जयती वटी नाश करती है ॥ ३२ ॥ यदि जया अथवा जयतीको गोमूत्र सग सेवन करावे और गोमूत्रमें घसकर कुष्टपर लेप लगावे तो काकणकुष्ट दूर होय ॥३३॥ दो निष्क (८ मासे) केतकी मूलको पानीमें पीसकर उसके संग जया तथा जयतीको देवे तो सुराप्रमेह दूर होय॥३४॥ सहतसग अथवा लोद नागर-मोथा हर्ड और कट्फल ॥३५॥ इनके मधुयुत क्काथ सग जया तथा जयतीका सेवन करानेसे समस्त प्रमेह मात्र दूर होय गुड और कुछ२ गरम पानीके सग जया या जयतीका सेवन करानेसे ॥३६॥ त्रिदोषज गुल्म दूर होय, और इसी अनुपानसे आनदभैरव रसभी नाश करताहै. जया तथा जयतीको सोंठ सग देनेसे भगदर मात्र दूर होय॥३७॥जया तथा जयतीका छाछ सग सेवन करानेसे सग्रहणी दूर होय जयन्ती जया तथा आनदभैरव ॥३८॥ इनमेंसे किसी एकको ठढे जलके साथ देवे तो त्रिदोषज रक्तपित्त दूरहोय और जया तथा जयन्तीको भगरेके रस सग देनेसे रतोंधीका नाश होय॥३९॥जया तथा जयन्तीको स्त्रीके दूधमें घसकर नेत्रमें लगानेसे नेत्रस्राव मासवृद्धि और सर्व दोषज कर्णरोगभी दूरहोय ॥ ४० ॥ ये सब रसेंद्रसार सग्रहमें ज्वराधिकारमे लिखाहै ॥

अथ सुवर्णभस्मानुपानानि ।

मत्स्यपित्तस्ययोगेनस्वर्णतत्कालदाहजित् ॥ भृङ्गयोगाच्चतद्वृष्यंदुग्धयोगाद्बलप्रदम् ॥ ४१ ॥ पुनर्नवायुतंनेत्र्यंघृतयोगेरसायनम् ॥ स्मृत्यादिकृद्वचायोगात्कान्तिकृत्कुंकुमेनच ॥ ४२ ॥ राजयक्ष्माणंपयसानिर्विष्याचविषंहरेत् ॥ शुण्ठीलवंगमरिचैस्त्रिदोषोन्मादहारकम् ॥ ४३ ॥ मध्वामलकचूर्णन्तुसुवर्णचेतितत्त्रयम् ॥ प्राश्यारिष्टगृही

तोपिमुच्यतेज्ञाणसंकटात् ॥शंखपुष्प्या वयोर्थच विदार्य्याचप्रजार्थकः ॥ ४४ ॥ इति ग्रंथांतरात् ॥

भाषानुवाद--अब सुवर्णभस्मके अनुपान वर्णन करतेहैं—स्वर्ण भस्म मत्स्य-पित्ता औषधीके साथ सेवन करनेसे तत्क्षण दाहको दूरकरे भगरेके रससग सेवन करनेसे स्त्रीप्रसग (मैथुन—सभोग--सहवास) मे हितप्रद होय दुग्ध सग सेवनसे बल वढावे ॥ ४१ ॥ साठीके साथ नेत्रोको हित करे घृतसग सेवनसे वयस्थापन—आयु—बल—बुद्धिकी वृद्धि और समस्त रोगनिवृत्ति करे वचके साथ सेवनसे बुद्धि वढावे केशर सग सेवनसे काति (तेज) को करे॥ ४२ ॥ दुग्धसग राजयक्ष्मा (क्षयी) को हरे निर्विषी निर्विष सग विषरोगको और सोठ--लोंग—काली मिरचीके साथ सेवनसे त्रिदोषजन्य उन्माद (खपतीपने) को दूर करे ॥ ४३ ॥ आमलेके चूर्ण और सहत सग स्वर्णभस्म सेवन करनेसे प्रवल व्याधिगृहीत रोगीभी प्राणसकटसे छूट जावे अर्थात् आरोग्य होय शखाहुलीके साथ सेवन करनेसे आयु वढावे और विदारीकदके साथ सेवनसे स्वर्णभस्म पुत्रप्रद होताहै॥ ४४ ॥ ऐसा ग्रथातरमें लिखाहै ।

अथ रौप्यभस्मानुपानानि ।

भस्मीभूतंरजतममलंतत्समंव्योमभानुः सर्वैस्तु ल्यंत्रिकटुरसवरंसारमाज्येनयुक्तम् ॥ लीढंप्रातः क्षपयतिनृणांयक्ष्मपाण्डूदरार्शश्श्वासान्कासान्न यनातिमिरंपित्तरोगानशेषान् ॥ ४५ ॥ इति ग्रन्थांतरात् ॥

भाषानुवाद —अब रौप्य (चादीकी)भस्मके अनुपान वर्णन करतेहै चादीकी भस्म समान अभ्रक और ताम्रभस्म लेवे और इन सवके समान त्रिकुटाका रस अथवा चूर्ण लेवे और इन सवमे कुछ अनुपानानुसार लोह भस्म योजित करके इन सवको घृतमें मिला कर प्रातःकाल सेवन करे तो क्षयी—पाडु—अर्श—श्वास—कास नेत्रोका तिमिर और पित्तरोग ये सव दूर होयँ ॥ ४५ ॥ ऐसा ग्रथातरमे लिखाहै ॥

इतऊर्ध्वमथताम्रभस्मानुपानानीतः प्रागनेकायु
र्वेदीयग्रंथाश्रयान्मन्निर्म्मिताः श्लोकाः ॥ दाहं
शर्करयाहन्त्यनिलंपित्तंचश्रेष्ठया ॥ त्रिजातेनप्रमे
हांश्चगुल्मान्क्षारेणहन्तिवै ॥ ४६ ॥ कासेकफेवा
सकस्यरसेन्यूषणसंयुते ॥ श्वासेपद्मावित्रवयुतं
क्षयजिद्गिरिजेनवै ॥ ४७ ॥ रजतंभस्मीभूतंक्षीणे
पयसासदासमंपेयम् ॥ पलभोजिनांचपुंसांपिशि
तरसेनभिषजाथवादेयम् ॥ ४८ ॥ मृतरौप्यं
वराकृष्णासंयुतंनात्रसंशयः ॥ यकृत्प्लीहहरंप्रोक्तं
यथाबलहराबला ॥ ४९ ॥ शोफेपृथ्वीकेनदेयंसु
वैद्यैः पांडौमंडूरेणसार्द्धंचतूर्णम् ॥ भस्मीभूतंरौ
प्यमाज्येनयुक्तंज्ञेयंकांतिक्षुत्करंविस्रसाहम्॥५०॥

भाषानुवाद'—अब इसके आगे ताम्रभस्मके अनुपानसे पूर्व जितने श्लोकहैं वे सब अनेक वैद्यक ग्रथोके मतसे हमने बनाये हैं—मिश्री सग दाहका—त्रिफ़ला सग वात और पित्तका—तज, पत्रज इलायचीके चूर्णसंग प्रमेहका—क्षार सग गुल्मका ॥४६॥ सोंठ—मिरच और पिप्पलीके चूर्ण युक्त अडूसेके रससग कासी और कफका भारगी और सोंठ सग श्वासका और शिलाजीत सग रौप्यभस्म क्षयीका नाश करताहै॥४७॥क्षीणतामें रौप्यभस्म दुग्धके साथ पिलावे और मास भक्षण करनेवाले मनुष्योंको क्षीणताम मासरसके साथ रौप्य भस्म वैद्य देवे तो क्षीणता दूर होय॥४८॥त्रिफला और छोटी पीपलके चूर्णसहित रौप्यभस्म यकृत और प्लीहारोगका नाश करताहै जैसे क्रीडासे पुरुषके बलका नाश स्त्री कर देती है तैसे ॥ ४९ ॥ शोथरोगमे पुनर्नवा (साठी) के साथ और पाडुमें मडूरके सग रौप्यभस्मको वैद्यने देना चाहिये और घृतयुक्त रौप्यभस्म कांति तथा क्षुधाकी वृद्धि और जरा [बुढापे] का नाश करताहै ॥ ५० ॥

अथ ताम्रभस्मानुपानानि ।

दुग्धंखण्डश्चानुपानंप्रदद्यात्साज्यंभोज्यंत्याज्यम स्लेनयुक्तम् ॥ वीर्यपुष्टिदीपनंदेहदार्ढ्यदिव्यदृष्टिर्जायते कामरूपम् ॥ ५१ ॥ पूर्वेषामतमालोक्यवैद्यैश्चाधुनिकैर्बुधैः ॥ स्वबुद्ध्यादापयेत्ताम्रंरोगनाशनवस्तुभिः ॥५२॥ इतिग्रंथान्तरात् ।

भाषानुवाद.—अत्र ताम्रभस्मके अनुपान वर्णन करतेहै-एक रती ताम्रभस्म रुमरसके रस संग सहत और घृतयुक्त नित्य सेवन करेके ऊपरसे मिश्रीयुक्त दूध पीवे तथा घृतयुक्त मिष्टपक्वान्न खावे और खट्टे पदार्थोंको न खावे तो वीर्यपुष्ट—अग्नि दीपन देहदृढ-दिव्यदृष्टि और कामदेवके समान सुदरता होय ॥५१॥ ताम्र-भस्मको समरतरोगोपर छोटी पीपल और सहत संग देवे अथवा प्राचीन वैद्योंके मतानुसार अपनी बुद्धिसे रोगनाशक वस्तुओंके साथ आधुनिक वैद्यने ताम्रभस्मको देना चाहिये ऐसा ग्रथातरमे लिखाहै ॥ ५२ ॥

अथ वङ्गभस्मानुपानानि ।

जातीफलेनेतिकरोतिपुष्टिंवक्तेसुगंधिंस्फटिकेनचोक्तम् ॥ प्राचीनवैद्यैर्मृतरङ्गकोऽतःश्लोकोमयाऽयंरचितोऽत्रनूनम् ॥ ५३ ॥ तुलसीपत्रसंयुक्तः प्रमेहंनाशयेद्ध्रुवम् ॥ घृतेनपांडुरोगंचटंकणैर्गुल्मनाशनम् ॥ ५४ ॥ निशयारक्तपित्तघ्नंमधुनावलवृद्धिकृत् ॥ खंडयासहपित्तघ्नंनागवल्ल्याचवन्धनम् ॥ ५५ ॥ पिप्पल्याचाग्निमांद्यत्वंनिशयाचोर्ध्ववासहृत् ॥ चंपकस्वरसेनैवदुर्गंधिंनाशयेद्ध्रुवम् ॥ ५६ ॥ निंबकस्वरसेनादद्यंदेहेदहनशांतये ॥ कस्तूरीसंयुक्तवंगभक्षणा

ह्वीर्यरोधकृत् ॥ ५७ ॥ खदिरक्काथयोगेनचर्म्म
पाक्षिमलैस्सह ॥ पूगीफलेनसार्द्धंवाऽजीर्णनाश
यतेक्षणात् ॥ ५८ ॥ नवनीतसमायुक्तमास्थिजीर्ण
नवंभवेत् ॥ दुग्धसार्द्धंभवेत्तुष्टिर्जययास्तंभनंभ
वेत् ॥ ५९ ॥ लशुनैर्वातजांपीडांनाशयेन्नात्रसं
शयः ॥ समुद्रफलसंयोगान्निर्गुण्ड्यासहभक्ष
णात् ॥ ६० ॥ कुष्ठंनाशयतेक्षिप्रंसिंहनादेमृगा
इव ॥ आघाटजाटिकायोगात्षण्ढत्वंनाशये
द्ध्रुवम् ॥ ६१ ॥ देवपुष्पस्यसंयोगात्समुद्रफल
योगतः ॥ नागपत्ररसैर्लेपाल्लिंगवृद्धिःप्रजायते
॥ ६२ ॥ गोरोचनलवंगेनातिलकान्मोहनंभवे
त् ॥ एरंडजटिकायोगेघर्षायित्वाचवंगकम् ॥६३॥
लेपयेच्चललाटेवैतदाशीर्षगदंजयेत् ॥ कौञ्जेऽपा
मार्गमूलेनप्लीहेटंकणसंयुतम् ॥६४॥ रसोनतैल
युङ्नस्यमपस्मारनिषूदनम् ॥पुत्राप्त्यैरासभीक्षी
रैस्तक्राढ्यंवातगुल्मनुत् ॥ ६५ ॥ यवानिकायुतं
वातेवाजिगंधायुतंतुवा ॥ जलोदरेत्वजाक्षी
रसंयुतंगुणकृन्नवेत्॥जातीफलाश्वगंधाभ्यांकटि
पीडानिवारणम् ॥ ६६ ॥ इति ग्रंथांतरात् ॥

भाषा०—अब वगभस्मके अनुपान वर्णन करतेहैं प्राचीन वैद्योंने ऐसा कहाहै—कि वगभस्म जायफलके सग पुष्टता और कपूरके सग मुखमें सुगधि करताहै इसलिये हमने यहां यह श्लोक बनाकर लिखा है॥५३॥तुलसीपत्र सग प्रमेहका घृतसग पाडुका—सुहागे सग गुल्मका ॥५४॥ और हलदी सग देनेसे वग

भस्म रक्तपित्तका नाश करताहै,सहतसग देनेसे वल बढताहै मिश्री सग पित्तका नागरवेलके पानसग दहक जकडनेका॥५५॥पिप्पली सग अग्निमदका-हलदी सग ऊर्ध्व श्वासका—चपाके रससग दुर्गधिका॥५६॥और निंबके या नींबूके रस सग दाहका नाश करताहै,कस्तूरीके सग वगभस्म सेवनसे वीर्य्यस्तभ होताहै ॥५७॥ खैरके काथ और पक्षिमल सग देनेसे चर्म्मरोगका-सुपारीसग अजीर्णिका॥५८॥ और मक्खन सग अस्थिजीर्ण (हड्डियोंकी जीर्णता) का नाश करताहै, दुग्ध सग तुष्टि और भाग सग देनेसे वगभस्म स्तभन करताहै ॥५९॥ लहसुनसग वातव्याधि समुद्रफल और सभालूके सग देनेसे ॥६०॥ कुष्ठका और चिरचिट्टाकी जडके साथ देनेसे नपुसकताका नाश करताहै ॥६१॥ लौंग—समुद्रफल और वगभस्मको नागरवेलके पानके रसमें खलकरके लिंगपर लेप करे तो लिंग वृद्धि होय ॥६२॥ वगभस्मको गोरोचन और लवगमे मिलाकर तिलक करनेसे समोहन होय और एरडमूलसग वगभस्म घसकर ॥६३॥ ललाटपर लगानेसे शिरपीडा दूरहोय, कुब्ज (कुबडेपनके) रोगमें ऊगा (आधाझाडे) की जड सग तापतिल्लीमें सुहागेके सग ॥६४॥ यदि लहसुनके तैलमें वगभस्म मिलाकर नास देवे तो मृर्गी (अपस्मार) दूर होय, पुत्र प्राप्तिके लिये गधीके दूध सग वायगोलेमें छाछसग ॥६५॥ वादीमें अजवान अथवा आसगध सग जलोदरमें वकरीके दूध सग और कटि (कमर) के दुखनेमें जायफल और आसगध सग वगभस्म देना चाहिये ॥६६॥ ऐसा ग्रथातरमे लिखा है ॥

अथ जसदभस्मानुपानानि ।

शृणुसखेजसदस्यवदाम्यहंसुखकरंह्यनुपानमरंवर
म ॥ विविधतंत्रमतंसुविचार्यवैनिधनगस्यगदाप
हरंनृणाम् ॥ ६७॥ जसदभस्मजयेत्त्रिसुगंधिनान
नुसखेत्रिसलोद्भवसासयम् ॥ हरतिशालिहिमेन
तथाज्वरंसहमृदुच्छदयालघुसायुजम्॥६८॥शिख
रदीप्ययुतंशमयेज्ज्वरंजसदभस्मसखेशृणुशीत

जम् ॥ रुधिरजंत्वातिसारगदंवमिंकणसितायुतमा
शुनिहन्तिवै ॥६९॥ मथरसेनधनंजयमन्दतांनय
नरोगमथोषसिचांजितम् ॥ सृणिकयाध्रुवमाशुस
खेथवाहरतिगोहविषाप्रतनेनवै ॥७०॥ सुभसितं
ह्यशितंजसदंयदालघुनिहन्तिचमेहगदंतदा ॥ अ
हिलतादलयुक्तमिदंसदासहसखेमहिषीहाविषा-
थवा ॥ ७१ ॥ शिखरदीप्यकणैश्चसशर्करैर्हरातिशू
लगदंहिभयानकम् ॥ सहकवोष्णयवानिकयास
खेजयतिचाशुविबंधगदध्रुवम् ॥ ७२ ॥

भाषानुवादः—जसदभस्मअनुपान—हे मित्र ! मनुष्यके रोग हरनेवाला और सुख करनेवाला जो जसदभस्मका अनुपान उसे मैं अनेक ग्रथोंके मतको विचारके वर्णन करताहू तू सुन ॥ ६७ ॥ तज, पत्रज और इलायचीके साथ त्रिदोषका चावलोंके हिम और खर्जूरके साथ पित्तज्वरका जसदभस्म नाश करताहै ॥ ६८ ॥ हे मित्र ! औरभी सुनिये लवग और अजवान सग शीत ज्वरका तथा जीरा और शक्कर सग जसदभस्म रक्तातिसार और वमन (उल्टी) का शीघ्रही नाश करताहै ॥ ६९ ॥ अग्नी (अग्निमथ) के रससग मदाग्निका और प्रातःकाल या सौंफके सग अथवा पुराने गोघृत सग अजन करनेसे नेत्ररोगका जसदभस्म नाश करताहै ॥ ७० ॥ हे मित्र ! तांबूल (नागरबेलके पान) सग अथवा भैंसके दहीसग सेवन करनेसे जसदभस्म शीघ्रही प्रमेह (परमा) का नाश करताहै ॥ ७१ ॥ शर्करासहित लवग अजवान और जीरे साथ भयानक शूल तथा अजवान और कुछ उष्णपानी सग विबंधरोग (मलकी रुकावट करनी) का जसदभस्म नाश करताहै ॥ ७२ ॥

अथ नागानुपानानि ।

मृतंनागंवायुंहरतिमहमायुश्चनिनया शिरोरोगं
वाहंन्यनचिमथनेत्रामयसग्म ॥ प्रलापंसन्तापं

विविधगदतापंजयतिवै सखे देयं वैद्यैर्ननुगदग
णेऽन्येस्वसतिना ॥ ७३ ॥

भाषानु०--अत्र नागभस्मके अनुपान वर्णन करतेहैं—मिश्री साथ वातपित्त
एपीडा दाह अस्थि नेत्ररोग प्रलाप सन्ताप और अनेक रोगजन्य पीडाको
ाभस्म दूर करता है और हे मित्र ! इनसे व्यतिरिक्त रोगोपर वैद्योने अपनी
द्रेसे विचारके अनुपानके साथ नागभस्मको देना चाहिये ॥ ७३ ॥

अथ लोहानुपानानि ।

लोहंमृतंसर्वगदेषुदेयंसदासुवैद्यैश्चपलेनसाकम्।
सार्क्षंसधुव्योषयुतंजयेद्वैकृत्स्नंतथाधातुविकार
साशु ॥ ७४॥ पुनर्नवाक्काथयुतश्चपाण्डुमेहंनिशा-
क्षौद्रयुतंजयेद्वै ॥ कणासधुभ्यासथवानराणांशै-
लेययुक्तंननुसूत्रकृच्छम् ॥ ७५॥ नूनंकफंगंधर
सेन्द्रसाक्षिकैस्सार्द्धचतुर्जातिसितान्वितंजयेत्॥
वैरक्तपित्तंमृतलोहमाशुकंकुर्य्यात्पुनर्भूपयसात-
थावलम् ॥ ५६ ॥ द्राक्षाकणासिंहकमाक्षिकैः
कृताश्वासंजयेद्वैगुटिकासुखेधृता ॥ पारावतस्या
थमृतस्यसेवनान्मर्त्योभवेच्चासयहीनविग्रहः ॥
॥ ७७ ॥ जसदानुपानादारभ्यलोहानुपानपर्य्य
न्तंसत्कृतिरियंज्ञेयाऽनेकायुर्वेदीयग्रंथाद्धायात् ॥

भाषा०—अब लोहभस्मके अनुपान वर्णन करते है—वैद्योंने लोहभस्मको सब
रोगोंमें समस्त सम्भार शुद्ध पारे सग अथवा पारदभस्म सग सदा देना
चाहिये और भारगी—सहत—त्र्योष (सोंठ-मिरच-पीपल) इन सहित लोहभस्म
समस्त धातुविकारको दूर करताहै ॥ ७४ ॥ पुनर्नवा (साठी) के क्वाथ सग
पाण्डु रोगको हल्दी और सहत सग अथवा पीपल और सहत सग प्रमेहको और

शिलाजीत सग मूत्रकृच्छ्रको लोहभस्म दूर करताहै ॥ ७५ ॥ शुद्ध गधक शुद्ध पारा और सहत सग कफका तज-पत्रज- इलायची-नागकेशर और मिश्री सग लोहभस्म रक्तपित्तका नाश करता है और सौंठी (पुनर्नवा) के चूर्णयुक्त दूध सग वलवीर्यकी वृद्धि करताहै ॥ ७६ ॥ दाख (मनुक्का) पीपल अरुषा और सहत सग लोहभस्मकी गोली बनाकर मुखमें रखनेसे सब प्रकारका श्वास दूर होजाताहै और सर्वदा ताबूलादियुक्तानुपान सग लोहभस्मके सेवनसे मनुष्य रोगरहित आरोग्यसहित होजाताहै ॥ ७७ ॥ जसदभस्मके अनुपानसे लेकर लोहभस्मानुपानतक ये सब श्लोक मैंने अनेक वैद्यक ग्रन्थानुसार बनायेहैं ॥

अथ स्वर्णमाक्षिकानुपानानि ।

अनुपानंत्रराव्योषंतीक्ष्णंसाज्यंहिमाक्षिकम् ॥ ७८ ॥

भाषानुवादः—अब स्वर्णमाक्षिकके अनुपान वर्णन करतेहैं—त्रिफला (हर्ड-बहेडा—आमला) व्योष (सोंठ-मिरच-पीपल) केवल काली मिरच मक्खन और सहत ये सोनामक्खीके अनुपान हैं अर्थात् किसी रोगपर सोनामक्खी को देना हो तो उक्तवस्तुओंके साथ दे ॥ ७८ ॥

अथ रौप्यमाक्षिकानुपानानि ।

लीढोव्योषवरान्वितोविमलकोयुक्तोघृतैस्सेवितोहन्याद्दुर्भगकृज्ज्वराञ्श्वयथुकं पांडुप्रमेहारुचिम् ॥ मूलार्तिग्रहणीश्वशूलमतुलंयक्ष्मामयं कामलां सर्वान्पित्तमरुद्दान्किमपरैर्योगैरशेषामयान् ॥ ७९ ॥ विपव्योषवराज्येनविमलःसेवितोयदि ॥ भगंदरादिकारोगान्नृणांगच्छन्तिदुरन्तगः ॥ ८० ॥ इति ग्रंथांतरात ॥

भाषा०—अब रौप्यमाक्षिकके अनुपान वर्णन करतेहैं—अथवा—त्रिफला-[illegible] नकदनके साथ रूपामक्खीकी भस्मको खानेसे—स्वल्पका नाश

करनेवाली जरा (बूढापन) शोथ पाडु-प्रमेह-अरुचि-अर्श (बवासीर) सग्रहणी-भयकरशूल-राजयक्ष्मा (क्षयी) कामला (पीलिया) और सर्व पित्तज तथा वातज रोग दूर होते हैं, इसी प्रकार पृथक् २ अनुपानोंसे रूपामक्खीकी भस्म समस्त रोगमात्रोंको दूर करतीहै ॥ ७९ ॥ तथा सिंगियाविष–त्रिकटु त्रिफला और घीके साथ रूपामक्खीकी भस्म सेवन करनेसे भगदर आदि असाध्य रोगभी दूर होय ॥ ८० ॥ ऐसा ग्रथांतरमें उक्त अनुपान लिखे हे ॥

अथ तुत्थानुपानानि ।

घृतेनकण्डूविषकुष्ठरोगास्तांबूलयोगेनकफंतथो ग्रम् ॥ कृमिंकृमिघ्नेनचतुत्थभस्मक्षौद्रांजितंनेत्र गदंजयेद्वै ॥ ८१ ॥ सत्कृतिरियम् ॥

भाषानुवादः–गोघृत या माखनसग–कडू (खाज) विष और कुष्ठोको तांबूल सग कफको वायविडग साथ कृमिको तुत्थेभस्म दूर करताहै और महत मग नेत्रोमें आंजनेसे नेत्ररोगोंका नाश करताहै ॥ ८१ ॥ यह श्लोक वैद्यक ग्रथाशयानुसार मेरा बनाया हुवाहै ॥

अथ शिलाजत्वनुपानानि ।

एलापिप्पलिसंयुक्तंमासमात्रंतुभक्षयेत् ॥ मूत्र कृच्छ्रंमूत्ररोधंहन्तिमेहंतथाक्षयम् ॥ ८२ ॥ स र्वानुपानैःसर्वत्ररोगेषुविनियोजिते ॥ जयत्यभ्या सतोनूनंतांस्तान्रोगान्नसंशयः ॥ ८३ ॥

भाषानुवाद –अब शिलाजीतका अनुपान कहतेहै–छोटी इलायची और पीपलके सग एकमहीने पर्यन्त शिलाजीतका सेवन करनेसे मूत्रकृच्छ, मूत्ररोध, प्रमेह और क्षर्ण, ये सब दूर होये ॥ ८२ ॥ और इनसे व्यतिरिक्त रोगोंपर विचारपूर्वक पृथक् २ अनुपान सग शिलाजीतका सेवन करनेसे रोगमात्र दूर होजातेहै ॥ ८३ ॥ ऐसा ग्रथांतरमे लिखाहै

---

१ दूधको श्लोकमे–क्षीलातृधा तथा तृतियाभी कहतेहैं ।

अथ पारदभस्मानुपानानि ।

पिप्पलीमारिचैः शुंठीभारंगीमधुनासह॥कासश्वा सप्रशमनः शूलस्यचविनाशनः ॥ ८४ ॥ हारिद्रा शर्करासार्द्धरुधिरस्यविकारनुत् ॥ त्र्यूषणंत्रिफला वासा कामलापाण्डुरोगजित् ॥ ८५ ॥ शिलाज-तुतथैलाचसितोपलसमन्वितः ॥ मूत्रकृच्छ्रेप्रश स्तोयंसत्यंनागार्जुनोदितम् ॥८६॥ लवंगंकुसुमंप-त्रीहिंगुलंचाकलंकरा॥पिप्पलीविजयाचैवसमान्ये तानिकारयेत् ॥८७॥ कर्पूरादहिफेननिनागाद्धा-गार्द्धकंक्षिपेत् ॥ सर्वमेकत्रसंमर्द्यधातुवृद्धौप्रदाप येत् ॥ ८८ ॥ सौवर्चलंलवंगंचभूनिंवंचहरीतकी ॥ अस्यानुपानयोगेन सर्वज्वरविनाशनः ॥ ८९ ॥ तथारेचकरःप्रोक्तःसौवर्चलफलत्रिकम् ॥लवंगंकु सुमंचैवदरदेनचसंयुतम्॥९०॥ताम्बूलेनसमंभक्ष्यं धातुवृद्धिकरंपरम्॥विदारीचूर्णयोगेनधातुवृद्धिक रोमतः ॥ ९१ ॥ विजयादीप्यसंयुक्तोवमनस्यवि-कारनुत् ॥ सौवर्चलंहरिद्राचविजयादीप्यकंतथा ॥ ९२॥ अनेनोदरपीडांचसद्योत्पन्नांविनाशयेत् ॥ चतुर्वल्लीपलाशस्यबीजंचद्विगुणंगुडः॥९३॥अस्या-नुपानयोगेनकृमिदोषविनाशनः॥अहिफेनलवंगं चदरदंविजयातथा ॥९४॥ अस्यानुपानतः सद्यः सर्वातीसारनाशनः ॥ सौवर्चलेनदीप्येनअग्निमा

ध्यपरःपरः॥९५॥क्षुद्वोधजनकश्चैवसिद्धनागेश्वरो-
दितम्॥गुडूचीसत्त्वयोगेनसर्वपुष्टिकरःस्मृतः॥९६।

भाषानुवादः—अब पारेकी भस्मके अनुपान वर्णन करतेहै पीपल,कालीमि-रच, सोठ, भारगी, और सहतसग, कास, श्वास, और शूल रोगका पारदभस्म नाश करताहै॥८४॥हलदी और शक्करसग रुधिरविकारको, हर्ड, वहेडा,आवला, सोठ, मिरच पीपल और अडूसेके साथ कामला और पाडुरोगको ॥ ८५ ॥ शिलाजीत, छोटी इलायची, और मिश्रीसग मूत्रकृच्छ्रको पारदभस्म दूर करताहे ऐसा नागार्जुनजीने कहाहै ॥ ८६ ॥ लवग, केशर, तालीसपत्र, शुद्ध हिगुल अकलकरा, पीपल ये सब समान लेवे ॥ ८७ ॥ तथा कपूर, अफीम आधाभाग लेवे नागेश्वर १ भाग लेवे और इन सबके चूर्णसग पारद भस्म सेवन करे तो धातुवृद्धि होय ॥ ८८ ॥ सौंचलनोन, लौंग, चिरायता, हर्ड इनके चूर्ण सग सब ज्वरका नाश करताहै॥८९॥ और सौंचलनोन, त्रिफला, लोग, केशर और शुद्ध सिंगरफ इनके सग सेवनसे पारदभस्म दस्त लाताहै ॥९०॥ ताबूलसग अथवा विदारीकदके चूर्णसग पारदभस्म धातुवृद्धि करताहै ॥ ९१ ॥ भाग और अजवानसग वमन (उलटी) को दूर करताहै, सौंचलनोन हलर्दा, भाग, और अजवानसग ॥ ९२ ॥ पारदभस्म उदरपीडाको शीघ्र नाश करताहै, चारवल्ल—(१२ गुंजा) पलासके बीज उनसे दूना गुड ॥ ९३ ॥ इस अनुपानसे पारदभस्मका सेवन करे तो कृमिरोग दूर होय, अफीम, लोग, शुद्ध सिंगरफ, और भाग ॥ ९४ ॥ इस अनुपानके साथ सेवन करनेसे पारद भस्म शीघ्रही ग्रहणी अतिसारोका नाश करताहै और सौंचलनोंन और अजवान सग गलगंडको दूर करके ॥ ९५ ॥ क्षुधा बढाता तथा उत्पन्न करताहै, ऐसा सिद्धनागेश्वरजीने कहाहै और गुरच (गिलोय) के सत्त्व सग सेवनकरनेसे पारदभस्म पुष्टता करताहै ॥ ९६ ॥

पित्तेशर्करयामलेनसहसावातेचकृष्णासमंदद्या-
च्छ्लेष्मणि शृंगवेरसहितंजंबीरनीरंज्वरे ॥ रक्तोत्थे

मधुनाप्रवाहरुधिरेस्यान्मेघनादोदकेदद्याच्चाथक्षु
तातिसारविकृतौरोगान[illegible] ॥

भाषानुवादः—पित्तरोगमें खाडक आर आंवरेके चूर्णतग वातरोगमें पीपल के सग कफरोगमें अदरकके सग ज्वरमे जवीरीके रससग, रुधिरजन्य विकारमे सहतसग, रक्तस्राव तथा प्रवाहिका और अतिसारमे चीलाईके रससग पारेकी भस्मको देना चाहिये ॥ ९७ ॥

अथ रससिन्दूरानुपानानि ।

वातेसक्षौद्रपिप्पल्यापित्तकफरुजिन्यूषणंसाग्निचू
र्णापित्तेशैलासितेन्दुव्रणवातिचवरागुग्गुलुश्चारुव
द्धः ॥ चातुर्जातेनपुष्टौहरनयनफलाशाल्मलीपु-
ष्पवृन्तंकिंवाकान्तालललाटाभरणरसपतेस्स्यादनू
पानमेतत् ॥ ९८ ॥

भाषानुवाद—:अब रससिंदूरके अनुपान वर्णन करतेहैं वातरोगमें पीपल औ सहतसग, कफरोगमें त्रिकटु (सोंठ—मिरच—पीपल) और चित्रकके चूर्णसग पित्तरोगमें, शिलाजित, मिश्री और कपूरसग व्रणरोगमें त्रिफला और गुग्गुलसग और पुष्टताके लिये, चातुर्जातके अथवा त्रिफला और सेमरकद (शाल्मलीमूल के सग रससिंदूरको देवे ॥ ९८ ॥

अथ रसकर्पूरानुपानानि ।

वल्लंवल्लार्द्धमानेनजीर्णेगुडसमंददेत् ॥यथोचिता-
नुपानेनसर्वकर्मसुयोजयेत् ॥ ९९ ॥ दुग्धोदनंतुप
थ्यंदेयंचास्मिंश्चताम्बूलम् ॥ हरतिसमस्तान्रोगा
न्कर्पूराख्योरसोनृणाम् ॥ १०० ॥

भाषानुवादः—अब रसकपूरके अनुपान वर्णन करतेहैं पुराने गुडके स रत्ती अथवा डेढ रत्ती प्रमाण रसकपूर देवे अथवा रोगानुसार अनुपान वि

ग द ॥ ९९ ॥ और ऊपरसे पानका बीडा खिलावे तथा दुग्ध, मावल, खानेको पथ्य देवे तो समस्त रोगमात्र दूर होय ॥ १०० ॥

अथ गंधकानुपानानि ।

इत्थंविशुद्धस्त्रिफलाज्यभृंगमध्वान्वितश्शाणमितोवलीढः॥ गृध्राक्षितुल्यंकुरुतेक्षियुग्मंकरोतिरोगोज्झितदीर्घमायुः[॥१००॥]शुद्धंगन्धंनिष्कमात्रं सदुग्धैस्सेव्यंमासंशौर्यवीर्यप्रवृद्धये ॥ षण्मासात्स्यात्सर्वरोगप्रणाशो दिव्यांदृष्टिं दीर्घमायुस्वरूपम् ॥१०१॥ मोचाफलेनत्वग्दोषंचित्रकेणमहाबलम् ॥आढकरूपकषायेणक्षयकासाञ्जयेद्भृशम् ॥ ॥ १०२॥मन्दानलत्वंजयतित्रिफलाक्काथसंयुतः॥ ऊर्ध्वगान्सकलान्रोगान्हन्तिशीघ्रंसुगंधकः॥१०३॥ सर्वमिदंग्रंथांतराल्लिखितम् ॥

भाषानुवाद –अब गधकके अनुपान वर्णन करतेहै त्रिफला, घृत और भृंगरेके रससग ४ मासे शुद्ध आवलासार गधक सेवन करनेसे गृध्र (गीधत्रिका राजा- गुग्धु) के समान दूरतककी वस्तु देखनेवाली दृष्टि (नेत्र) होवे और वह पुरुष रोगरहित दीर्घायु होय [॥ १०० ॥] तथा दूधके सग निष्क ४ मासे) मात्र शुद्ध गधकका एक महीने पर्यन्त सेवन करनेसे शूरता और वीर्यकी वृद्धि होय इसी प्रकार ६ मास पर्यन्त खानेसे सब रोगोंका नाश, दिव्यदृष्टि और आयु तथा स्वरूपकी वृद्धि होय ॥ १०१ ॥ मोचा फलके साथ खानेसे त्वचाके दोषोंको चित्रसग निर्बलताको अडूसेके क्वाथसग कासको ॥ १०२ ॥ त्रिफलाके काढेसग मदाग्निको और देहके ऊर्ध्वभागगतरोगोंको शुद्ध गधक शीघ्रही दूर करताहै ॥ १०३ ॥ ये सब अनुपान ग्रथातरसे लेके यहा लिखेहै

सप्तधातुशोधनम् १।

स्वर्णतारारताम्राणांपत्राण्यग्नौप्रतापयेत् ॥
निषिञ्चेत्तप्ततत्तानितैलेतक्रेचकांजिके ॥ ११ ॥
गोमूत्रेचकुलत्थानांकषायेचत्रिधात्रिधा ॥
एवंस्वर्णादिलोहानांविशुद्धिस्संप्रजायते ॥ १२ ॥
शार्ङ्ग० सं० खं० २ अ० ११ ।

भाषानुवादः—धातुशोधन १ सुवर्णादि धातुओंके पत्रोंको अग्निमे तपातपा कर तेल, छाछ, काजी, गोमूत्र, और कुलथीका काढा इन प्रत्येकमें क्रमश. तीन तीन वार बुझाओ तो समस्त धातु शुद्ध हो विशेषत' सातधातुओंमेसे १ रागा २ सीसा और ३ जस्ता इन तीनों को गला गलाके तैल आदि उक्त पाचों पदार्थोमे बुझाना चाहिये ॥ ११ ॥ १२ ॥ यह शुद्धि शार्ङ्गधरके २ रे खटकी ११ वी अध्यायमे लिखी है।

उपधातुशोधनम् २ ।

१ सुवर्णमाक्षिकशो०-मातुलुंगद्रवैर्वाथजम्बीरस्यद्रवैः
पचेत् ॥ चालयेल्लोहजेपात्रेयावत्पात्रंसुलोहितम् ॥
भवेत्ततस्तुसंशुद्धिस्स्वर्णमाक्षिकमृच्छति ॥ १३ ॥
२ रौप्यमाक्षिकशो०—कर्कोटीमेषशृंग्युत्थैर्द्रवैर्जंबीरजैर्दिं
नम् ॥ भावयेदातपेतीव्रेविमलाशुद्ध्यतिध्रुवम् ॥१४॥
३ तुत्थशो०-विष्टयामर्दयेत्तुत्थंमार्जारककपोतयोः ॥
दशांशंटंकणंदत्त्वापचेन्मृदुपुटेततः ॥
पुटंदध्नापुटंक्षौद्रैर्देयंतुत्थविशुद्धये ॥ १५ ॥
४–५ कांस्यरीतिशो०-शोधनंकांस्यरीत्योश्चधातुशुद्धि-
समंभवेत् ॥ १६ ॥

६ सिंदूरशो०--दुरधाम्लयोगतस्तस्यविशुद्धिर्गदितावु धैः ॥ १७ ॥ भा० प्र० पू० खं० भा० ॥

७ शिलाजतुशोधनम्--शिलाजतुसमानीयग्रीष्मतप्तशिलाच्युतम् ॥ गोदुग्धैस्त्रिफलाक्काथैर्भृङ्गद्रावैश्चमर्दयेत् ॥ आतपेदिनमेकैकंतच्छुष्कंशुद्धतांव्रजेत् ॥ १८ ॥

उपधातुशोधनम् २ ।

१ सोनामक्खी शो०-भाषानुवादः-बिजोरे नींबूके रसमें अथवा जवीरीके रसमे सोनामक्खीको डालकर लोहेकी कडाहीमे पकाओ जब रस जलकर कडाही लाल होजावे तब उतारके शीतल होजानेपर निकालो सोनामक्खी शुद्ध होजावेगी ॥ १३ ॥

२ रूपामक्खी शो०--रूपामक्खीको, ककोडा, मेंढासिंगी और जवीरी इन प्रत्येकके रसमें एक दो दिन घोट घोटकर सूर्यकी तीक्ष्ण तापमे रक्खो तो रूपामक्खी शुद्ध होगी ॥ १४ ॥

३ नीलाथोथा शो०--बिल्ली और कबूतरकी बीठ (विष्ठा) मे नीलेथोथेको घोट करे पश्चात् उसमे उसीका दशांश सुहागा मिलाकर शरावसपुट करे अनतर जगली गोबरकी हलकी आच देवे पश्चात् निकालके दहीका पुट देकर पुन आच दे इसप्रिकार पुन सप्ततका पुट देकर आच देवे तो नीलाथोथा शुद्ध हो ॥ १५ ॥

रससंस्काराः ३ ।

अष्टादशैवसंस्काराऊनविंशतिकाःक्वचित् ॥
संप्रोक्तारसराजस्यवसुसंख्याःकचिन्मताः ॥ १९ ॥

१ तत्राष्टादशसंस्काराः—स्यात्स्वेदनंतदनुमर्दनमूर्च्छे
नंचस्यादुत्थितिःपतनरोधनियामनानि ॥ संदी
पनंगगनभक्षणमानसत्र सञ्चारणंतदनुगर्भगति
र्द्रुतिश्च ॥ २० ॥ वाह्यद्रुतिस्सूतकजारणास्याद्वा
सस्तथासारणकर्म्मपश्चात् ॥ संक्रामणंवेधविधि
श्शरीरयोगस्तथाष्टादशधातुकर्म्म ॥ २१ ॥

२—३ अथैकोनविंशतिसंस्कारास्तदन्तरगताश्चाष्टौ
स्वेदनमर्दनमूर्च्छनोत्थापनपातनबोधननियम
नसंदीपनानुवासनगगनादिग्रासप्रमाणचारण
गर्भद्रुतिवाह्यद्रुतियोगजारणरंजनसारणक्रामण
वेधनभक्षणाख्या ऊनविंशतिसंस्कारास्सूतसि
द्धिदाभवन्ति दीपनान्ता अष्टौसंस्कारावादेहासि
द्धिदाभवंति ॥ २२ ॥-ग्रं० त० ।

भाषानुवादः—पारेके कहीं १८ अटारह, कहीं १९ उन्नीस और कहीं ८ आठ सस्कार माने है ॥१९॥ पारेके १८—१९—८—सस्कारोंका क्रम—तैसे १ स्वेदन २ मर्दन ३ मूर्च्छन ४ उत्थापन ५ पातन ६ बोधन (वोधन) ७ नियमन ८ सदीपन ९ गगनभक्षण १० सचारण ११ गर्भगति १२ गर्भद्रुति १३ वाह्यद्रुति १४ सूतकजारण १५ ग्रास १६ सारणकर्म्म १७ सक्रामणवेधविधि और १८ शरीरयोग ये पारेके अठारह सस्कार हैं, इनमें एक भक्षणाख्य सस्कार योजित करनेसे १९ उन्नीस और १ छे स्वेदनसे ८

सदीपन पर्यन्तके आठभी सस्कार माने हैं. ये ८ आठ सस्कार अथवा समस्त सस्कार होनेसे पारा शुद्ध होता है ॥ २०-२१-२२ ॥

रसशोधनम् ३ ।

अथवाहिङ्गुलात्सूतंग्राहयेत्तान्निगद्यते ॥ जम्बीर निंबुनीरेणमर्दितोहिङ्गुलोदिनम् ॥२३॥ ऊर्ध्वपातनयंत्रेणग्राह्यःस्यान्निर्मलोरसः ॥ कंचुकैर्नागवंगाद्यैर्निर्मुक्तोरसकर्म्माणि ॥ विनाकर्म्माष्टकेनैव सूतोऽयंसर्वकर्म्मकृत् ॥ २४ ॥ ग्रं० त० ।

भाषानुवादः—सूचना—यद्यपि पूर्वोक्त सस्कारोसे पारा शुद्ध होताहै ? रसशोधन प्रकार—तथापि उन सस्कारोंको ग्रथविस्तारभयसे हम यहा न लिखकर सामान्य प्रकारसेही पारेका शोधन दर्शाते हैं कि जिससे थोडे परिश्रमके साथ उस अष्ट वा अष्टादश सस्कार शुद्ध पारेके समानही शुद्ध और गुणप्रद पारा हो जावे. हींगुल्ल (सिंगरफ) को जंबीरी अथवा नींबूक रससे एकदिनभर मर्दन करे पश्चात् ऊर्ध्वपातनयंत्रद्वारा उडाकर उससे निकले हुए पारेको ग्रहण करे, यह पारा विना आठ सस्कारकेही सातो कचुकी और नागवग आदि दोष रहित तथा निर्मल हो जाता है इसे समस्त कार्योंमे ग्रहण करना योग्यहै ऐसा ग्रथान्तरमें लिखाहै ॥ २३ ॥ २४ ॥

अन्यच्च—निम्बूरसैर्निम्बपत्ररसैर्वायाममात्रकम् ॥ पिष्ट्वादरदमूर्ध्वंच पातयेत्सूतयुक्तिवत् ॥ ततश्शुद्धरसं तस्मान्नीत्वाकार्येपुयोजयेत् ॥ २५ ॥ शार्ङ्ग० खि० अ० ?? ॥

अन्यच्च—कुमारिकाचित्रकरक्तसर्षपैः कृतैः कषायैर्वृ
हतीविमिश्रितैः ॥ फलत्रिकेणापिविमर्दितोरसो
दिनत्रयंसर्वमलैर्विमुच्यते ॥ २६ ॥ भा० प्र०
पू० खं० २ भा० ॥

दूसरा प्रकार—शार्ङ्गधरमे ऐसाभी लिखा है कि शिंगरफको नींबूके अथवा नींबूके पत्तोंके रससे १ एक प्रहर पर्यन्त खल करके डमरूयन्त्रसे २ तथा ३ प्रहरकी आंच देके उडा लेवे और उस शिंगरफसे उडकर निकले हुए शुद्ध पारेको लेकर सर्व कार्योंमें योजित करे ॥ २५ ॥

३ प्रकार—कुमारिका (गवारपाठा) चित्रक, लालसरसों और भटकटैया इनके क्वाथसे और त्रिफलासे तीनदिनपर्यन्त पारेको खल करनेसे समस्त मल रहित शुद्ध पारा हो जाता है ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है ॥ २६ ॥

उपरसशोधनम् ।

१ तत्र गंधकशोधनम्—लोहपात्रेविनिःक्षिप्यघृतमग्नौ
प्रतापयेत् ॥ तत्तेघृतेतत्समानंक्षिपेद्गन्धकजंरजः ॥
॥ २७ ॥ विद्रुतंगन्धकंद्वातनुवस्त्रेविनिःक्षिपेत् ॥
यथावस्त्राद्विनिःसृत्यदुग्धमध्येऽखिलंपतेत् ॥ एवं
सगन्धकश्शुद्धस्सर्वकर्म्मोचितोभवेत् ॥ २८ ॥

२ हिंगुलशो०—मेषीक्षीरेणदरदम्लवर्गैश्चभावितम् ॥
सप्तवारान्प्रलेपेनशुद्धिमायातिनिश्चितम् ॥ २९ ॥

३ अभ्रकशो०—कृष्णाभ्रकंघमेद्दग्धौ ततःक्षीरेविनिःक्षि
पेत् ॥ भिन्नपत्रतुतत्कृत्वातण्डुलीयाम्लयोर्द्रवैः ॥
भावयेदष्टयामतदेवमभ्रंविशुद्ध्यति ॥ ३० ॥

४ हरितालशो०—तालकंकणशः कृत्वातच्चूर्णंकाञ्जिके

चचेत् ॥ दोलायंत्रेणयामैकंततः कूष्माण्डजद्रवैः ॥
॥ ३१ ॥ तिलतैलेपचेद्यामंयामश्चलिफलाजले ॥
एवंयन्त्रेचतुर्यामंपकंशुध्यतितालकम् ॥ ३२ ॥
५ मनश्शिलशो०—पचेत्यहमजामूत्रे दोलायन्त्रेमन
श्शिलाम् ॥ भावयेत्सप्तधापित्तैरजायाःसापिशुध्य
ति ॥ ३३ ॥ भा० प्र० ॥
अन्यच्च—अगस्तिपत्रतोयेनभावितंसप्तवारकम् ॥
शृंगवेररसेवापिविशुद्ध्यतिमनश्शिला ॥३४॥ग्रं.त.।
६ खर्परशो०—नरमूत्रेचगोमूत्रेसप्ताहंरसकंपचेत् ॥ दो
लायन्त्रेणशुद्धस्यात्ततः कार्येषु योजयेत् ॥ ३५ ॥
७ कंकुष्ठादीनांशोधनम्—कंकुष्ठंगौरिकंशंखः कासीसं
टङ्कणंतथा ॥ नीलाञ्जनंशुक्तिभेदाःक्षुल्लकास्सवरा
टकाः ॥ ३६ ॥ जंबीरवारिणास्विन्नाः क्षालिताः
कोष्णवारिणा ॥ शुद्धिमायान्त्यमीयोज्याभिषग्भि
र्योगसिद्धये ॥ ३७ ॥ भा० प्र० ।
८ गन्धोपलानांशोधनम्—त्रिफलोरसजंदेयमम्लैर्नगं
धमपचेत् ॥ तदाचोपरसाश्शुद्धाजायन्तेऽचिरा
न्नराः ॥ ३८ ॥ ग्रं० त० ।

डाले ॥ २७ ॥ जब वह गधक घाम पिघल जावे तब एक पात्रमे दूध भरके उस पात्रके मुहँपर महिन कपडा बाधकर उसमे वह पिघला हुआ गधक डाल दे जिससे गधक छानकर दूधमें गिरे और जो कुछ कंकर मट्टीहो सो सब वस्त्रमे रह जावे फिर वह गधक दूधमे गिरकर शीतल होजावे तब उसे लेवे इस प्रकार गन्धक शुद्ध होता है ॥ २८ ॥

२ हिंगुलशो०—हिंगुल (शिंगरफ) को खलमे डालकर ७ सात पुट भेडीके दूध और ७ पुट नींबूके रसकी देवे तो निश्चय शुद्ध हो ॥ २९ ॥

३ अभ्रक शो०—काले अभ्रकको अग्निमे तपाकर गऊके दूधमे बुझाओ फिर चौंलाईके रसमे अथवा चावलोंके पानीमे और इमलीकी खटाईमे आठ प्रहर (एकदिनरात) भिगोये रक्खो तो अभ्रक शुद्ध हो ॥ ३० ॥

४ हरतालशो०—हरतालके छोटे २ टुकडे करके १ प्रहर काजीमे १ प्रहर सूरं कुम्हडेके रसमें १ प्रहर तेलमे और १ प्रहर त्रिफलाके क्वाथमे दोलायत्रसे आच देओ तो हरताल शुद्ध हो ॥ ३१ ॥३२ ॥

५ मनशिलशो०—मनशिलको बकरीके मूत्रसे दोलायंत्रमें ३ दिन औटावे पश्चात् खलमे डालकर बकरीके पित्तेकी ७ भावना देवे तो मनशिल शुद्ध हो, ये सब शोधन भावप्रकाशमें लिखे हैं ॥ ३३ ॥

दूसरा प्रकार—मनशिलको अनास्तिपत्र रसकी अथवा अदरकके रसकी ७ भावना देवे तो मनशिल शुद्धहो ऐसा ग्रथातरमें लिखाहै ॥ ३४ ॥

६ खपरियाशो०—खपरियाको मनुष्यके मूत्रमें अथवा गोमूत्रमे दोला यत्रसे ७ सात दिन पकाओ तो शुद्ध हो ॥ ३५ ॥

७ मुरदासंग आदि ८ उपरसोंका शोधन— १ मुरदासंग २ गेरू ३ शंख ४ हीराकसीस ५ सुहागा ६ काचासुरमा और ७ सींप भेदरूप जो शोखा—कोडी इ० आदि ॥ ३६ ॥ इनको जवीरीके रसमे शोधन करके गरम

---

१ दोलायत्र उसे कहते हैं कि जिस पात्रमें काजी आदि उस पात्रके मुखसे दुउ अंगुलभरके उसम जिस औषधको शुद्ध करना हो उसे भोजपत्रमें लपेट तिहेरे कपडेमे पोटली रूपसे बाध उसे एक लकडीमे डोरेसे बाधकर बीचोंबीच अधर लटका देवे पश्चात् उस पात्रको भट्टी या चूल्हेपर चढाके लिखेप्रमाण आच दे ॥

पानाने घोडाल्ो तो ये सब - उपरस शुद्ध हो जावेंगे ऐसा भा.प्रकाशमे लि-
ख्या हे ॥ ३७ ॥

८ शेष उपरसोका अथवा सर्वोपरसोका सक्षिप्त शोधन--सब उपरसो
को जम्बाखार, सज्जीखार, सुहागा, नोन और अम्लवर्ग इन प्रत्येकमें तीन ३
वार पचावे तो समस्त उपरस दोषरहित शुद्ध होवे ऐसा ग्रथातरमें लिखाहै॥३८॥

रत्नशोधनम् ।

तत्रादौवज्रस्यशो०-कुलत्थकोद्रवक्काथेदोलायन्त्रोवि
पाचयेत् ॥ व्याघ्रीकन्दगतंवज्रंत्रिदिनंतद्विशु
द्ध्यति ॥ ३९ ॥

अवशिष्टरत्नानांशो०-वज्रवत्सर्वरत्नानिशोधयेन्मा
रयेत्तथा ॥ ४० ॥ भा० प्र० ।

विषशोधनम्-कृत्वाचणकसंख्यानंगोमूत्रैर्भावयेत्त्र्य
हम् ॥ समटङ्कणसंपिष्टंमृतमित्युच्यतेविष-
म् ॥ ४१ ॥ रसे० सा० ।

उपविषशोधनम्-पञ्चगव्येषुशुद्धानिदेयान्युपविषा-
णिच ॥ विषाभावप्रयोगेषुगुणस्तुविषसम्भवः॥४२॥

जेपालशो०-नविषंविषमित्याहुर्जेपालोविषमुच्यते॥
शोधितश्चविरेकेचुचमत्कृतिकरःपरः ॥ ४३ ॥ जे
पालगहनंत्वगंकुरसंजाभिर्मलैमाहिषे निःक्षितं
त्र्यहमुष्णतोयविमलंवल्वंसवासोदिनम् ॥ लिप्तं
ननस्वमलैर्मुविगलद्धोरजःसंनिभो निर्मुक्तां
चविनाविनश्चवदुदाहृतशुद्धोगुणाच्छोभवेत् ॥४४॥

भाषानुवादः—अब रत्नोका शोधन लिखते हैं १ हीराशो०—हीरेको छोटी कटियालीके मूलमें रखकर कुलथी और कोदोके काढेसे दोलायत्रमे २ दिन पर्यन्त पकावे तो हीरा शुद्ध हो ॥ ३९ ॥

शेषरत्नोंका शो०—शेषरत्नोका शोधन और मारण हीरेके समानही जानो ॥ ४० ॥ ऐसा भाव प्रकाशमे लिखा है ।

विषोकाशो०—जिस विषका शोधन करना हो उसके छोटे २ चनेके समान टुकडे करके पश्चात् गोमूत्रसे दोलायत्रमे ३ दिनपर्यन्त आच देवे और फिर उसके समान सुहागा मिलाकर खल्कर लेवे तो वह विष निर्विष (शुद्ध) होजाता है ऐसा रसेन्द्रसारसग्रहमे लिखा है ॥ ४१ ॥

उपविषशो०—समस्त उपविषोको, दूध, दही, घृत, गोमूत्र और गोबरमे शोधन करके जहा विष न मिले वहा शुद्ध उपविषोंको योजित करना चाहिये ॥४२॥

जमालगोटेका शो०—पंडित (सत् असत् विचार करनेवाले) मनुष्य जैसा विषको विष नहीं समझते वैसा जमालगोटेको विष (जहर) मानते है और यही जमालगोटा शुद्ध होनेपर विरचन (दस्त—जुलाब) में चमत्कार प्रदर्शक अतिश्रेष्ट होजाता है ॥४३॥ जमालगोटेके छिलकोंको दूर करके उसके भीतर एक महीनपत्ती (जो जमालगोटेकी जीभ) होती है उसे निकालडाले पश्चात् एक वस्त्रमे बाधके २ दिनतक भैसके गोबरमें दबायरक्खे,फिर निकालकर गरम-पानीसे धोटाले फिर दूसरे अच्छे वस्त्रमें बाधके युक्तिसे खल करे कि जिससे उसका तेल २ वस्त्र शोपले, पश्चात् नवीन खपरेपर उसका लेपदेवे, जब तेल मात्र उसमें न रहकर धूलीके समान वह होजावे तब उसे नींबूके रसकी भावना देवे, तो जमालगोटा शुद्धहो ये सब ग्रथातरमें लिखाहै ॥ ४४ ॥

अथ स्वर्णादीना मारणम् ।

१ सुवर्णमा०-स्वर्णस्यार्द्धिगुणंसूतमम्लेनसहमर्दयेत् ॥
तद्गोलकसमंगंधं निदध्यादधरोत्तरम् ॥ ४५ ॥
गोलकं च ततोरुद्ध्वा शरावं दृढसंपुटे॥ त्रिंशद्व
नोपलैर्दह्यात्पुटान्येवंचतुर्दश ॥ ४६ ॥ निरुत्थं
जायतेभस्मगन्धोदेयःपुनःपुनः ॥ ४७ ॥

पानांमे घोडालो तो ये सब - उपरस शुद्ध हो जावेंगे ऐसा भा० प्रकाशमें लि-
ख्या है ॥ ३७ ॥

८ शेष उपरसोका अथवा सबोपरसोका संक्षिप्त शोधन--सब उपरसो को जवाखार, सज्जीखार, सुहागा, नोन और अम्लवर्ग इन प्रत्येकमें तीन ३ वार पचावे तो समस्त उपरस दोषरहित शुद्ध होवें ऐसा ग्रथातरमें लिखाहै॥३८॥

रत्नशोधनम् ।

तत्रादौवज्रस्यशो०-कुलत्थकोद्रवक्काथेदोलायन्त्रोवि
पाचयेत् ॥ व्याघ्रीकन्दगतंवज्रंत्रिदिनंतद्विशु
द्ध्यति ॥ ३९ ॥

अवशिष्टरत्नानांशो०-वज्रवत्सर्वरत्नानिशोधयेन्मा
रयेत्तथा ॥ ४० ॥ भा० प्र० ।

विषशोधनम्-कृत्वाचणकसंख्यानंगोमूत्रैर्भावयेत्त्य
हम् ॥ समटङ्कणसंपिष्टंमृतामित्युच्यतेविष-
म् ॥ ४१ ॥ रसे० सा० ।

उपविषशोधनम्-पञ्चगव्येषुशुद्धानिदेयान्युपविषा-
णिच ॥ विषाभावप्रयोगेषुगुणस्तुविषसम्भवः॥४२॥

जैपालशो०-नविषंविषमित्याहुर्जैपालोविषमुच्यते॥
शोधितश्चविरेकेपुचमत्कृतिकरःपरः ॥ ४३ ॥ जै
पालंरहितंत्वगंकुररसैर्जाभिर्मलेमाहिषे निःक्षिसं
न्यहमुष्णतोयविमलंखल्वेसवासोर्दितम् ॥ लिप्तं
नूतनखर्परेपुविगतस्नेहोरजःसंनिभो निर्धूमां
गुविभावितश्चचतुराश्शुद्धोगुणाच्छोभवेत् ॥४४॥
भै. त. ।

भाषानुवादः—अब रत्नोंका शोधन लिखते हैं १ हीराशो०—हीरेको छोटी कटियालीके मूलमें रखकर कुलथी और कोदोके काढेसे दोलायन्त्रमें ३ दिन पर्यन्त पकावे तो हीरा शुद्ध हो ॥ ३९ ॥

शेषरत्नोंका शो०—शेषरत्नोंका शोधन और मारण हीरेके समानही जानो ॥ ४० ॥ ऐसा भाव प्रकाशमे लिखा है ।

विषोंकाशो०—जिस विषका शोधन करना हो उसके छोटे २ चनेके समान टुकडे करके पश्चात् गोमूत्रसे दोलायन्त्रमें ३ दिनपर्यन्त आच देवे और फिर उसके समान सुहागा मिलाकर खलकर लेवे तो वह विष निर्विष (शुद्ध) होजाता है ऐसा रसेन्द्रसारसग्रहमे लिखा है ॥ ४१ ॥

उपविषशो०—समस्त उपविषोको, दूध, दही, घृत, गोमूत्र और गोवरमें शोधन करके जहा विष न मिले वहा शुद्ध उपविषोंको योजित करना चाहिये ॥४२॥

जमालगोटेका शो०—पडित । सत् असत् विचार करनेवाले वैद्य जैसा विषको विष नहीं समझते वैसा जमालगोटेको विष (जहर) मानते है और यही जमालगोटा शुद्ध होनेपर विरचन (दस्त—जुलाव) में चमत्कार प्रदर्शक अतिश्रेष्ट होजाता है ॥४३॥ जमालगोटेके छिलकोंको दूर करके उसके भीतर एक महीनपत्ती (जो जमालगोटेकी जीभ) होती है उसे निकालडाले पश्चात् एक वस्त्रमे बाधके २ दिनतक भैसके गोवरमे दबायरक्खे,फिर निकालकर गरम-पानीसे धोडाले फिर दूसरे अच्छे वस्त्रमे बाधके युक्तिसे खल करे कि जिससे उसका तेल २ वस्त्र शोषले, पश्चात् नवीन खपरेपर उसका लेपदेवे, जब तेल मात्र उसमें न रहकर धूलीके समान वह होजावे तब उसे नींबूके रसकी भावना देवे, तो जमालगोटा शुद्धहो ये सब ग्रथातरमें लिखाहै ॥ ४४ ॥

अथ स्वर्णादीना मारणम् ।

१ सुवर्णमा०—स्वर्णस्याद्विगुणंसूतमम्लेनसहमर्दयेत् ॥
तद्गोलकसमंगंधं निदध्यादधरोत्तरम् ॥ ४५ ॥
गोलकं च ततोरुद्धा शरावं दृढसंपुटे॥ त्रिंशद्ध
नोपलैर्दहेत्पुटान्येवंचतुर्दश ॥ ४६ ॥ निरुत्थं
जायतेभस्मगन्धोदेय.पुनःपुनः ॥ ४७ ॥

भाषानु०—अब सोनेआदिके मारण (भस्म करने) की विधि दर्शातेहैं ।

१ सोनेकी भस्म—शुद्धकिये हुए सोनेसे दूना शुद्ध पारा लेकर दोनो नीबूके रससे खल करके गोला बनावे और उस गोलेके समान शुद्ध गंधकके चुरेको शरावसंपुटमे नीचे, ऊपर और गोलेको बीचमें रक्खे पश्चात् कपडमट्टीसे शरावसंपुटको दृढकरके ३० जंगली गोबरी (कंडों) की आंच देवे, इसप्रकार चौदह पुट (१४ बार आंच) देनेसे सोनेकी निरुत्थ (पक्क) भस्म होय, पर प्रत्येक आंचके साथ गंधक संपुटमे नीचे ऊपर अवश्य रक्खे ॥ ४५–४६–४७ ॥

२ रौप्यभा०—रौप्यकंतालकंमर्द्यशाभमम्लेनकेनचित् ॥
तेनभागत्रयं तारपत्राणिपरिलेपयेत् ॥ ४८ ॥
धृत्वामूषापुटेरुद्धापुटेन्निशङ्खनोपलैः ॥ समुद्धृत्य
पुनस्तालंदत्त्वारुद्धापुटेपचेत् ॥ एवंचतुर्दशापुटै
स्तारभस्मप्रजायते ॥ ४९ ॥

२ भाषानु०—चांदीकी भस्म २भाग शुद्ध हरतालको नीबूके रसमे १प्रहरपर्यन्त खल करके पश्चात् ३ भाग चांदीके अत्यन्त पतले और छोटे २पत्रों (टुकडों) पर उसका लेपकरे और उनको शरावसंपुटमे रखकर ३० जंगली गोबरीकी आंच दे इस प्रकार १४ बार आंच देनेसे चांदीकी भस्म होय ॥ ४८–४९ ॥

३ ताम्रभा०—सूक्ष्माणितास्रपत्राणिकृत्वासंस्वेदयेद्बुधः ॥
त्रासरत्रयमम्लेनततःखल्वेविनिःक्षिपेत् ॥ ५० ॥

---

१ मट्टीके परस्पर दो सिकोरे (सराई दीये) को लेकर उनको युक्तिसे पत्थर पर रगडकर दोनोंको ऐसे जोडे कि जिनकी कोर बराबर मिलजावे और कुछ भी न रहे जामें जो भस्म करनेकी वस्तु होय उसे रखकर दोनों सराईको जोड कपडमट्टीसे लपेट करदे कि जिसमे भीतर रक्खी हुई वस्तु बाहर न निकलने पावे इसे शरावसंपुट कहते हैं

२ जिसे चंदन, खस और सुहागा इन रखकरके आंच देनेसेभी जो जीवित नहीं होते कि जिसका अर्थ

पादांशसूतकंदत्त्वायामसम्लेनमर्दयेत् ॥ तत
उद्धृत्यपत्त्राणिलेपयेद्द्विगुणेनच ॥ ५१ ॥ गन्ध
केनाम्लघृष्टेनतस्यकुर्याच्चगोलकम् ॥ ततः
पिष्ट्वाचसीनाक्षींचाङ्केरींवापुनर्नवाम् ॥ ५२ ॥
तत्कल्केनबहिर्गोलंलेपयेदङ्गुलोन्मितम् ॥ शु
ष्कंतद्गोलकंभाण्डेशरावेणचरोधयेत् ॥ ५३ ॥
वालुकाभिः प्रपूर्य्याथविभूतिलवणांबुभिः ॥ द
त्त्वाभांडमुखेसुद्रांततश्चुल्ल्यांविपाचयेत् ॥५४॥
क्रमवृद्धाग्निनासम्यग्यावद्यामचतुष्टयम् ॥ स्वा
ङ्गशीतंसमुद्धृत्यमर्दयेच्छूरणद्रवैः ॥ ५५ यामैकं
गोलकंतच्चनिःक्षिपेच्छूरणोदरे ॥मृदालेपस्तुकर्त
व्यस्सर्वतोऽङ्गुष्टमात्रकः॥५६॥पाच्यंगजपुटेक्षि
तंमृतंभवतिनिश्चितम्॥वमनंचविरेकंचभ्रमंक्लम
मथारुचिम् ॥ ५७ ॥ विदाहंस्वेदमुत्क्लेदंनकरोति
कदाचन ॥ ५८ ॥

३ तांबेकी भस्म–भाषानुवाद –शुद्धतांबेके महीन छोटे २पत्र (टुकडे) करके उनको २ दिनपर्यन्त नींबूके रसमें डालकर मंद २ आचसे पकावे पश्चात् उनको खरलमें डाल ॥ ९० ॥ उन शुद्ध ताम्रपत्रोंसे चतुर्थांश पारामी उन्हींके साथ मिलाकर १ प्रहरपर्यन्त नींबूके रसमें खल करे (घोटे), जब उसका गोला बनजावे तब उसे निकालकर उसमें दूनी ॥ ९१ ॥ नींबूके रसमें घुटी हुई शुद्ध गंधकका उस गोलेपर लेप करे तदनंतर, सकोह, अथवा

---

१ रसेन्द्रेणविनातांत्र यः करोतिपुमानिह ॥ उद्वेगस्यकीटानिजायन्तेनात्रसंशय.॥ ॥ १ ॥ जिसने पारेके बिना पारेके योगके तांबेकी भस्म करतांहै उसशरीरमें कीडे उत्पन्न होतांहैं ऐसा शास्त्रकार कहतांहैं ।

चूका अथवा सॉठी इनमेंसे किसीएकको पीसकर ॥ ५२ ॥ उसके कल्कका उसी गोले पर दो अगुल लेप करे पीछे उसे किसी भाडे (पात्र) में रखकर उसे सकोरेसे ढाकदे जिससे कि वह गोला वहीं रुकजाय ॥५३॥ पश्चात् उस पात्रको वालू रेतसे पूरित और उसका मुख राख वा नमक पानीसे मुद्रित कर चूल्हेपर चढावे ॥ ५४ ॥ पीछे क्रमवर्द्धित अग्निसे ४ प्रहरपर्यन्त उसे पकावे जब स्वागशीतल होजावे तब उस गोलेको निकालकर जमीकदके रससे मर्दित (खल) करे ॥ ५५ ॥ जब एक प्रहर घोटते घोटते होजाय तब उसका फिर गोलाबनाकर उसे जमीकदके भीतर युक्तिसे रक्खे और उस जमीकदपर१ अगूठे मात्र ऊँचा चहुँओर मृत्तिकाका लेप करे ॥ ५६ ॥ फिर उसे गजपुटमें पकावे तो निश्चय ताम्र भस्म होजावेगा और यह शुद्ध ताम्रभस्म उलटी सिरे चन ' दस्त भग थकावट अरुचि ॥ ५७ ॥ दाह पसीनेका निकलना और ज्वर का मलकना इत्यादि किसी उपद्रवको नहीं करता है ॥ ५८ ॥

४ वंगमा०-मृत्पात्रेद्रावितेवंगेचिञ्चाश्वत्थत्वचारजः॥
क्षिप्त्वावङ्गचतुर्थांशमयोदव्यांप्रचालयेत् ॥ ५९ ॥
ततोद्वियाममात्रेणवङ्गभस्मप्रजायते ॥ अथभस्म
समंतालंक्षिप्त्वाऽम्लेनाविमर्द्दयेत् ॥ ६० ॥ ततोग-
जपुटेपक्त्वापुनरम्लेनमर्द्दयेत् ॥ तालेनदशमां-
शेनयाममेकंततः पुटेत् ॥ एवंदशपुटैः पक्वंवङ्गंभ-
वेन्मारतम् ॥ ६१ ॥

४ रागे (कथील) की भस्म-भाषानुवाद-मृत्तिकाके पात्रमें (मट्टीके बडे टिकटे में शुद्धकथीलको पिघलाकर उससे चतुर्थांश अमली और पीपलके आके क्षारीय चूर्णको उसमें डालते जावे और लोहेकी कडछीसे हलाते जावे ॥ ६२ ॥ इस प्रकार २ प्रहरकी आचसे वग (राग) भस्मरूप हो-

जावेगा फिर उस भस्मरूप वगकी समान शुद्ध हरताल लेकर दोनोको नींबूके रससे घोटे ॥ ६० ॥ जब दोनोंका एकजीव होजाय तब गोला बनाकर शराव सपुटमे रखके गजपुटमें फूक (पका) देवे, स्वागशीतल होजानेपर उसे निकाल उससे दशमाश शुद्ध हरताल लेकर दोनोको १ प्रहरपर्यंत पुनः नींबूके रससे घोटे पहिलेके समान पुन सपुटकर गजपुटमे फूकदे, इस प्रकार १० दशबार फूकनेसे वगभस्म होय ॥ ६१ ॥

५ यशदमा०—यशदस्यवंगवन्मारणंभवति ॥ ६२ ॥

६ नागमा०तांबूलरससंपिष्टशिलालेपात्पुनः पुनः ॥
द्वात्रिंशद्भिः पुटैर्नागोनिरुत्थंभस्मजायते॥६३॥

५ जस्तेकीभस्म—रागेकी भस्म करनेकी समान क्रियासेही जस्तेकीभी भस्म बनाओ ॥ ६२ ॥

६ सीसकीभस्म—पानके रसमें मैनशिल घोटकर शुद्धसीसेके कटकवेधी पत्रोपर लेपकर शरावसपुटमें रखकर फूकदे, इसप्रकार ३२ वार फूकदेनेसे सीसेकी निरुत्थ भस्म होवे ॥ ६३ ॥

७ लोहमा०—क्षिपेच्चद्वादशांशेनदरदंतीक्ष्णचूर्णतः ॥
मर्दयेत्कन्याद्रावैर्यामयुग्मंततःपुटेत् ॥ ६४ ॥
एवंसप्तपुटैर्मृत्युंलोहंचूर्णमवाप्नुयात् ॥ ६५ ॥
कृत्स्नमिदमुक्तंभा०प्रका०पूर्वखंडस्याद्वितीयभागे ।

इति सप्तधातुमारणम् ।

७ लोहभस्म—भाषानुवाद—शुद्धलोह (पोलादके) चूर्णका द्वादशांश (बारयाहिस्सा) शुद्ध हिंगुल लेकर दोनोंको गवारपाठेके रससे २ प्रहरपर्यन्त खरल करे पश्चात् शरावसंपुट करके गजपुटमे फूकदे ॥ ६४ ॥ इस प्रकार सातवार फूकनेसे लोह भस्म होय ॥ ६५॥ यह सातोधातुमारणविधि भावप्रकाशके पूर्वखटके दूसरे भागमें लिखी है ॥

---

* सम्यगौषधकल्पानालोहकल्प. प्रशस्यते ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन लोहमादौविमारयेत् ॥१॥ नाग. पंचत्वचपलाद्वौगृध्रीत्रयोदशात् ॥ आर्द्रा भास्तत कर्मकर्तव्यम भिधीयते ॥२॥ ' ओंनमोभगवतेवासुदेवायस्वाहा इतिमंत्रान्तरे ।

अथोपधातूना मारणम् ।

८ स्वर्णमा०मा०-कुलत्थस्यकषायेणघृद्वातैलेनवापुटेत्॥
तक्रेणवाजमूत्रेणम्रियतेस्वर्णमाक्षिकम् ॥६६॥शार्ङ्ग०
९ रौप्यमाक्षिकमा०-स्वर्णमाक्षिकमारणप्रकारेणरौप्य
माक्षिकस्यापिमारणम् ॥ ६७ ॥

भाषानुवाद.—अब उपधातु मारण दर्शाते हैं—

८ **सोनामक्खीकीभस्म**—शुद्ध सोनामक्खीको कुलथीके क्वाथसे अथ॥ तेलसे अथवा छाछसे अथवा बकरीके मूत्रसे खल करके शरावसपुटमें रखकर गजपुटमें फूकदे तो सोनामक्खी भस्म होय॥ ६६ ॥ ऐसा शार्ङ्गधरमें लिखाहै.

९ **रूपामक्खीकीभस्म**-रूपामक्खीकी भस्म सोनामक्खीकी भस्म बनानेकी क्रियानुसार बनाओ ॥ ६७ ॥

१०तुत्थमा०—लकुचद्रावगंधाश्मटङ्कणेनसन्वितम् ॥
वज्रमूषागतंद्विन्निकुक्कुटैर्म्रीतिमाप्नुयात्।६८।र०त०।
११—१२ कांस्यरीत्योर्मा०—कांस्यरीत्योर्मारणमनुपानं
चापिताम्रवज्ज्ञेयम् ॥ ६९ ॥
१३ सिंदूरमारणनिषेधः—सिन्दूरस्यप्रयोगोहिनदृष्टःकु
त्रचित्पृथक् ॥ तस्माद्युक्तस्थलेयोज्यमुपदेशोगुरो
रिति ॥ ७० ॥ र्मं० त० ।
१४ शिलाजतुमा०—शिलायांगंधतालाभ्यांमातुलुंगर
सेनच ॥ पुटितंहिशिलाधातुम्रियतेष्ठोपलेनच ७१॥
॥ र्मं० त०

थुक्क्ष (कठल) के रसमें खरलकरके वज्रमूषामे रखकर कुक्कुटपुटम दो तीनवार फूंक तो नीलथोथेकी भस्म होय ॥ ६८ ॥

११-१२ कासे और पित्तलकी भ०—कासे और पित्तलकी भस्म बनानेकी क्रिया और उसके अनुपानादि तांबेकी भस्म और उसके अनुपानोके समान जानो ॥ ६९ ॥

१३-सिंदूरभस्म अभाव—सिंदूर भस्म बनानेकी विधि कहीं नहीं दृष्ट पडती इसलिये शुद्ध सिंदूरको महलम आदिमे युक्तकरना चाहिये ऐसा सद्वैद्योका उपदेश है ॥ ७० ॥

१४ शिलाजीतम०—शिलाजीतमें शुद्ध गंधक और शुद्ध हरिताल मिलाकर बिजोरे नींबूके रसमें घोटकर शरावसपुटमे रखकर आठ उपली (जगली गोवरी) की आंचदे इस प्रकार ८ आंचदेनेसे शिलाजीतकी भस्म होय ऐसा ग्रंथांतरमें लिखाहै ॥ ७१ ॥

अथ मण्डूरविधि ।

अक्षाङ्गारैर्धमेत्किट्टंलोहजंतद्रवांजलैः ॥ सेचये त्ततत्तंतत्सप्तवारंपुनःपुनः ॥७२॥ चूर्णयित्वात तःक्वाथैर्द्विगुणैस्त्रिफलाभवैः ॥ आलोड्यभर्जये द्वह्नौमण्डूरंजायतेवरम् ॥ ७३ ॥ शार्ङ्ग० ।

अथ हंसमंडूरविधिः ।

मण्डूरंमर्दयेच्छ्लक्ष्णंगोमूत्रेष्टगुणेपचेत् ॥ त्र्यूषणं त्रिफलामुस्ताविडंगंचव्यचित्रकैः ॥ ७४ ॥ दार्वी

---

१ दोभागतृणमरम—१ भाग बावीची मिट्टी—१ भागलोहकीट—१भाग वेतपाषाण-चूर्ण इनसबोंको बकरीके दूधमें औटाके पश्चात्दो प्रहरपर्य्यन्त अच्छे प्रकारसे खरलमे पीसे जब सब एकजीवहोकर अत्यंत महीन होजावे तब उसकी गोली बनाकर गोले और लंबी टिकन रहित मुख बनावे इसे वज्रमुषा और सन्धिमुषाभी कहते हैं ।

२ लोहारकी भाठी और उसमेंका गहरा गड्ढा खोदकर उसमे गोबरी आधेतक भर पश्चात् शरावसपुट उसमे रखकर ऊपर तक गोबरीभरदे इसे कुक्कुटपुट कहते

अन्थीदेवदारुतुल्यंतुल्यंविमर्दयेत् ॥ एतन्मण्डूर तुल्यंचपाकान्तेसिश्रयेत्तत्तः ॥ ७५ ॥ भक्षयेत्कर्ष मात्रंतुजीर्णान्तेतक्रभोजनम् ॥ पाण्डुशोफंहलीमंचह्यरुस्तंभंचकामलाम् ॥ अर्शांसिहन्तिनोचि त्रंहंसमण्डूरकाह्वयम् ॥ ७६ ॥ ग्रं० त०

१ मंडूर बनानेकी विधि-भाषानुवाद.—बहेडेकी लकडीके कोलसोंकी अंगारमे लोहेके कीटको खूब तपा तपा कर ७ बार गोमूत्रमे बुझावे ॥ ७२ ॥ पश्चात् महीन पीसकर उससे दूने त्रिफलाके काथमें उसे मिलाके १ हडीमें भरदे और हडीका मुख सराईसे बदकर कपडमट्टीसे दृढ करदेवे पीछे उसे गजपुटमे फूकदे तो उत्तम मंडूर होय ॥ ७३ ॥ ऐसा शार्ङ्गधरमें लिखाहै, इस मडूरके अनुपान लोहभस्मके समान जानो

२ हंसमंडूर—पूर्वोक्तप्रकारसे बनाये हुए मडूरको प्रथम त्रिफलाके काथमें भावनेके पश्चात् अष्टगुण गोमूत्रमे मिलाकर हडीमे भरकर पकावे । पूर्वोक्त विधिमे फूंके, जब पककर स्वांगशीतल होजाय तब सोंठ, मिरच, पीपल, चित्रा, नागरमोथा, वायविडंग, वच्च, चित्रक, दारुहल्दी, पीपलामूल, और देवदारु इन सब समानका महीन चूर्ण उसमे मिलाकर खरल करे जब एकजीव होजाय तब इसमेसे १ कर्ष भर नित्य सेवन करे और उसके पचनेपर ऊपरसे मांस पीवे तो पाडु, शोथ, हलीमक, ऊरुस्तम (पैरोका रहजाना) कोमला और अर्श (बवासीर) इन रोगोंको यह हसमंडूर नाश करता है इसमे संशय नहीं है ऐसा ग्रन्थान्तरमे लिखाहै ॥ ७४ । ७५ । ७६ ॥

रसमाक्षिकम् ।

धात्रीदुंबरिकादुग्धैरसंकिंचिद्विमर्दयेत्। तद्गुग्धंतु प्रहिंगोश्चमूपायुगंप्रकल्पयेत् ॥७७॥ क्षिप्त्वातत्संपुटेसूतंतत्रमुद्रांप्रदापयेत् ॥ धृत्वातंगोलकंप्रा शोन्मूषासम्पुटेधिके ॥ ७८ ॥ पचेद्गजपुटैनैव मृतकंयातिनिस्मताम् ॥ ७९ ॥

अन्यच्च—नागवल्लीरसैर्घृष्टःकर्कोटीकंदगर्भितः॥
मूषामूषालंपुटेपचत्वासूतोयात्येवअस्मताम्॥८०॥
भा० ग्र० पू० खं० २ भा० ॥

भाषानुवादः—अब पारेकीभस्म बनानेकी क्रिया लिखते हैं—
१ पाराभस्म—कालेगूलरके दूधमें शुद्धपारेको कुछकालतक घोटे, जब उसकी गोली बनजावे तब गूलरके दूधमें हींगको खरलकरके उसके २ मूष बनावे और उसगोलीको मूषमें रखकर उन दोनो मूषोंको गूलरके दूधमें खरल की हुई हींगसेही दृढजोड (मुद्रा) देवे, पश्चात् मुलतानीमट्टीकी मूषोंमें या शरावसपुटमें उसपारेकी गोलीसहित पूर्वोक्त मूषको रखकर पक्की मुद्रा (कपडमट्टी) से दृढ मुद्रित करदे और सुखाकर गजपुटमें फूंकदे तो पाराभस्म होय॥७७-७८-७९॥

२ प्रकार—शुद्धपारेको नागरवेलीके पानके रसमें घोटकर बाजकके डीके कदमें रखकर उसे शरावसपुटमें रक्खे और उसे कपडमट्टीसे दृढकर सुखाये पश्चात् गजपुटमें फूंकदे तो पारेकी भस्म होय ॥ ८० ॥ ऐसा भावप्रकाशमें लिखाहै.

२ रससिंदूरविधि ।

सूतंपञ्चपलंस्वदोषरहितंतत्तुल्यभागोवलिर्द्वौटंकौ
नवसादरस्यतुवरीकर्षश्चसंमर्दितः॥ कुप्यांकाच
भुविस्थितश्चसिकतायंत्रेनिभिर्वासरैः पक्कोवह्नि
निरुद्धवत्यरुणसः सिन्दूरनामारसः॥८१॥ग्रं०त० ।

३ रसकर्पूरविधि ।

पिष्टांशुद्धगाढमम्लवज्रांबुनाचैकसत्सूतंधातु
पुटांतर्दृढसंलिप्तंतत्संपुटेरोधयेत्॥ अंतःस्थंलवण
[illegible]प्रज्वाल्यचर्हिहट्टाद्धस्तंग्राह्यमथेन्दु
कुन्दधवलंरसोपरिस्थंशनैः॥ ८२ ॥ ग्रं० त० ।

२ रससिंदूरविधिः, भाषानुवादः—५ पल शुद्धपारा ५ पल शुद्ध गंधक २ टंकनक्षसागर १ कर्षफिटकरी इन सबोंको ३ दिनपर्य्यन्त घोटकर अग्नि सहन शीला (आतशी) शीशीमें भरदे और उसपर कपडमट्टी देकर ३ दिनपर्यन्त वालुकायन्त्रमें मद मध्य और तीव्र आंच देवे तो रक्तवर्णका रससिंदूर बनजावेगा ॥ ८१ ॥ ऐसा ग्रथांतरमें लिखाहै

३ रसकपूरविधिः—शुद्धपारेको खारीनोन और थूहरके दूध संग घोटकर लोहेके संपुटमें रक्खे और उस लोहसंपुटका मुख खडिया मट्टीसे दृढ बंदकर इस संपुटको एकहंडीमें रखकर उसमें नोन भरदे और उसे भट्टीपर चढाकर १ दिनभर आंचदे, जब स्वांग शीतल होजावे तब उस संपुटको युक्तिसे निकालकर ऊपरके संपुटमें जो श्वेतभस्म जमे उसे निकालले इसे रसकर्पूर कहते ऐसा रसमंजरीमें लिखाहै ॥ ८२ ॥

४ हिंगुलमा०—वल्लमात्रंतालपिष्टंशरावेस्थापयेत्ततः॥
तस्मिन्कर्षसमंदेयंसकलंदरदस्यच ॥८३॥ पूरये
दार्द्रकरसैर्द्विगुणंतत्रबुद्धिमान् ॥पुष्पाणिशाणमा
त्राणिपरितःस्थापयेत्ततः ॥ ८४ ॥ शरावसंपुटंद
त्त्वाचुल्ल्यांमध्याग्निनापचेत् ॥ घटिकात्रयपर्यन्तं
ततउत्तार्यपेषयेत् ॥ ८५ ॥ ताम्बूलेगुंजमात्रंतुदेयं
पुष्टिकांपरम् ॥ पांडोश्चयेचशूलेचसर्वरोगेपुयोज
यत् ॥ ८६ ॥ ग्र० त०।

पश्चात् उसपर दूसरा शराव रखकर सपुट कपडमट्टीसे दृढ करदे और चूल्हे-पर रखके ३ घडी मदाग्निसे पकावे जब स्वाग शीतल होजाय तब सपुटमें से हिंगुल, भस्मको निकालके खरल करले, इसमेंसे १ रती भस्म पानके सग सेवन करे तो पुष्ट होय ओर पाडु, क्षयी, शूल ये सब रोग दूर होवें.इस भस्म-को समस्त रोगमात्रपर विचारके देना चाहिये ऐसा ग्रथातरमे लिखा है ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥

५ अभ्रकमा०—कृत्वाधान्याभ्रकंतच्चशोषयित्वाथमर्दयेत् ॥ अर्कक्षीरैर्दिनंखल्वेचक्राकारंचकारयेत् ॥ ८७ ॥ वेष्टयेदर्कपत्रैश्चसम्यग्गजपुटेपचेत् ॥ पुनर्मर्द्यपुनः पाच्यंसप्तवारान्पुनःपुनः ॥ ८८ ॥ ततोवटजटाक्वाथैस्तद्वद्देयंपुटत्रयम् ॥ म्रियतेनात्रसंदेहः प्रयोज्यंसर्वकर्म्मसु ॥ ८९ ॥ भा० प्र० पू० खं० २ भा० ।

अन्यच्च-पीतामलकसौभाग्यपिष्टंचक्रीकृताभ्रकम् ॥ पुटितंपिष्टिवाराणिसिंदूराभंप्रजायते ॥ क्षयाव्यखिलरोगघ्नंभवेद्रोगापनुत्तये ॥ ९० ॥ ग्रं० त० ।

६ हरितालमा०—पलमेकंशुद्धतालंकौमारीरसमर्दितम् ॥ शरावसंपुटेक्षिप्त्वायामान्द्वादशकंपचेत् ॥९१॥ स्वांगशीतंसमादायतालकंचमृतंभवेत् ॥ गलत्कुष्ठंहरेच्चैवतालकंचनसंशयः॥९२॥ ग्रं०त० ।

अभ्रकभस्म-भाषानुवाद—प्रथम धान्याभ्रकको आकडेके दूधमें १

---

१ शुद्ध अभ्रकसे चतुर्थांश चावल लेकर दोनोंको कपडेके टुकडेमें बाध ३ दिन रात पानीमें भीगनेदे पश्चात् उस पोटलीको उस पानीमे खूब मर्दन करे जब पोटलीमेसे सब अभ्रक जलमे आजावे तब उस जलके पात्रको टेटा करदे उसमें जो नीचे अभ्रक जमजावे उसे लेले और ऊपरके पानीको फेकदे इसे धान्याभ्रककहतेहैं।

दिन खरल करके उसकी छोटी २ टिकिया बनाके सुखावे ॥ ८७ ॥ पश्चात् उन टिकियोंको आकडेके पत्तोसे लपेट २ कर गजपुटमे फुकदे, जब स्वांगशीतल होजावे पुनः अर्कदूधमे घोटकर पूर्ववत् फूके इसप्रकार ७ वार आकडेके दूधमे घोटघोटके फूकतेजावे ॥ ८८ ॥ पीछे वडकी जडके क्वाथमें पीस २ कर तीनवार फूके तो अभ्रकभस्म होय. इसे समस्त रोगोंमें पृथक् २ अनुपानोंसे देना चाहिये ऐसा भावप्रकाशमे लिखाहै ॥ ८९ ॥

दूसरा प्रकार—वान्याभ्रकमे शुद्ध हरताल आवलेका रस और शुद्ध सुहागा मिलाकर घोटे और उसकी छोटी २ टिकिया बनाकर सुखावे पीछे गजपुटमे फुकदे, इसप्रकार ६ आचदेनेसे सिंदूरके समान अभ्रककी लालभस्म होय यह भस्म दादि सकलरोगोंको नाश करनेमे समर्थ है ऐसा ग्रथांतरमे लिखाहै॥९०॥

६ हरितालभस्म—१ पल शुद्ध हरतालको गंधारपाठेके रसमे घोटकर उसकी छोटी २ टिकिया बनाकर उन्हे सुखाकर शरावसपुटमे रख १२ प्रहरकी आचे तो हरतालभस्म होय यह गलित कुष्ठादि रोगोका नाश करनेमे समर्थ है ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ग० त० ।

७ वज्रमारणम्—मेषशृङ्गभुजंगास्थिकूर्मपृष्ठाम्लतैलसान् ॥ शशदन्तंसमंपिष्ट्वावज्रीक्षीरेणगोलकम् ॥ कृत्वातन्मध्यगंवज्रंम्रियतेऽभ्रमतोऽन्यथा ॥ ९३ ॥ भा० प्र० ॥

८ प्रवालमारणम्—स्वर्णमाक्षिकवन्मुक्ताप्रवालानिचमारयेत् ॥ ९४ ॥ शार्ङ्ग० ।

८ मूंगेकीभस्म०—सोनामक्खाके समान क्रियासे मोती और मूंगेभी भस्म होतेहैं ऐसा शार्ङ्गधरमे लिखाहै ॥ ९४ ॥

इति श्रीमत्पंडितज्ञारसरामविरचिते भाषानुवादविभूषितेऽनुपानदर्पणे धातूपधातुरसोपरसरत्नोपरत्नविषोपविषाणा शोधनमारणविवेककथने सप्तम प्रमोदः ॥ ७ ॥

अथातस्सुवर्णादीनांपक्वापक्वभस्मनोगुणागुणविवेकं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥

१ पक्वस्यसुवर्णभस्मनोगुणाः—स्वर्णशीतंपवित्रंक्षयवामिकासनश्वासमेहास्रपित्तं क्षैण्यंक्ष्वेडक्षतास्रप्रदरगदहरंस्वादुतिक्तंकषायम् ॥ वृष्यंमेधाग्निकान्तिप्रदमधुरसकं कार्श्यहानित्रिदोषोन्मादापस्मारशूलज्वरजयवपुषोवृंहणंनेत्रपथ्यम् ॥ २ ॥ ग्रं० त० ।

सुवर्णका पक्वाभस्म—भाषानुवादः- अब हम इसके आगे सुवर्ण आदिके पक्व (पक्की) भस्मके गुण और अपक्व (कच्ची) भस्मके दोषोंको वर्णन करेंगे ॥ १ ॥

१ सुवर्णके पक्वेभस्मके गुण—सुवर्णभस्म शीतल (ठंढी), शुद्ध, स्वादिष्ट, तीक्ष्ण, कसैला, और मिष्ट है क्षयी, वमन, खाँसी, श्वास, प्रमेह, रक्तपित्त, क्षीणता, विष, दाह, रक्त (लाल) प्रदर, कृशता, त्रिदोष, उन्माद, अपस्मार (मृगी), शूल और ज्वर इन रोगनाशक बल, बुद्धि, कांति, पुष्टि, दिव्यदृष्टि, प्रकाशक है ॥ २ ॥

अपक्वस्वर्णभस्मदोषाः—बलंचवीर्यंहरतेनराणारोगव्रजान्पोषयतीहकाये ॥ असौख्यकार्यंचसदैवहेमाऽपक्वंसदोषं मरणं करोति ॥ ३ ॥

सुन्नेके कच्चेभस्मके दोष–भाषानुवाद–सुन्नेका कच्चाभस्म वल, वीर्य और सुखकीहानि रोगगणकी वृद्धि, और मनुष्योंको मरण करताहै ॥३॥ ग्र० त०।

२ पक्कस्यरजतभस्मनोगुणाः-तारंचतारयतिरोगसमुद्रपा रंदेहस्यसौख्यदमिदं पलितंनिहान्ति ॥ हन्तीहरो गविषदोषमलंग्रसह्य वृष्यंपुनर्नवकरंकुरुतेचिरायुः ॥ ॥ ४ ॥ ग्रं० त० ।

२ रूपेकेपक्केभस्मके गुण–रूपेका पक्काभस्म रोगसमुद्रसे पारलगानेवाला देहको सुखप्राप्त करनेवाला वृद्धता और विषदोपका नाशकरनेवाला तरुणता और आयुष्य देनेवाला है ॥ ४ ॥

अपक्करौप्यभस्मदोषाः-अशुद्धंरजतंकुर्यात्पांडुकंडुगल ग्रहान् ॥ विविधंवीर्यनाशंचबलहानिञ्शिरोरु जम् ॥ ५ ॥ ग्रं० त० ।

रूपेकेकच्चे भस्मके दोष–भाषा०–रूपेका कच्चा भस्म पाडु, खुजली, गलग्रह, कब्जि, वीर्यनाश, वलहानि और शिरोरोगको करताहै ॥ ५ ॥

३ पक्कस्यताम्रभस्मनोगुणाः-कुष्ठप्लीह ज्वरकफमरुच्छ्वास कासार्तिशोफस्तन्द्राशूलोदरकृमिवर्मीपांडुमेहाति सारान् ॥ अर्शोगुल्मक्षयभ्रमाशिरोव्याधिमेहा दिहिक्काश्शुष्कंशुल्वंहरति सततंवह्निवृद्धिंकरोति ॥ ॥ ६ ॥ ग्र०त० ।

अपक्कताम्रभस्मदोषाः-एकोदोषोविषेताम्रेत्वसम्यङ्मा रितेऽष्टते ॥ दाहःस्वेदोऽरुचिर्मूर्च्छाक्लेदोरेकोवामि भ्रमः ॥७॥ भा० प्र० ।

३ तावेकेपक्केभस्मके गुण–तावेका पक्काभस्म कुष्ठ, प्लीहा, कृमि, वमन, पाडु, प्रमेह और हुचकीका नाश और अग्निवृद्धि करताहै ॥ ६ ॥ ऐसा ग्रथातरमें लिखाहै

तांबेके कच्चेभस्मके दोष–तांबेका कच्चाभस्म दाह, स्वेद, अरुचि, मूर्च्छा, जीका मलकना, रेचन, वमन और भ्रम इन आठ दोषोंको करताहै ॥ ७ ॥ ऐसा भावप्रकाशमें लिखाहै.

४ पक्वस्यवंगभस्मनोगुणाः–बल्यंदीपनपाचनंरुचिकरं प्रज्ञाकरंशीतलं सौंदर्यकविवर्द्धनंहृतरुजंचारोगता कारकम् ॥ धातुस्थैर्यकरंक्षयक्षयकरंसर्वप्रमेहापहं वंगंभक्षयतोनरस्यनभवेत्स्वप्नेपिशुक्रक्षयः ॥ ८ ॥

श्रं० त०।

अपक्वस्यवंगभस्मनोदोषाः–पाकेनहीनः खलुवंगको सौकुष्ठानिगुल्मानिमहांतिरोगान् ॥ पांडुप्रमेहा पच्चिवातशोणितंवलापहारंकुरुतेनराणाम् ॥ ९ ॥

श्रं० त०।

५ पक्वयशदभस्मगुणाः– यशदंतुवरंतिक्तंशीतलंकफ पित्तहृत् ॥ चक्षुष्यंपरमंमेहंपांडुश्वासंचनाशयेत् ॥ १० ॥ भा० प्र०।

अपक्वयशददोषाः––अपक्वंयशदंरोगान्प्रमेहाजीर्ण-मारुतान् ॥ वमिंभ्रमिंकरोत्येनंशोधयेन्नागवत्ततः ॥ ॥ ११ ॥ श्रं० त०।

६ पक्वनागभस्मगुणाः-क्षयपवनविकारेगुल्मपाड्वामये पुंस्त्रमकृमिकफशूलेमेहकासामयेषु ॥ ग्रहणिगुदग दैवनष्टवह्नौप्रशस्तः शुभविधकृतनागः कामपुष्टिंद दाति ॥ १२ ॥ श्रं० त०।

अपक्वनागभस्मदोषाः--कुष्ठानिगुल्मारुचिपांडुरोगान्क्ष
यंकफंरक्तविकारकृच्छ्रम् ॥ ज्वराश्मरीशूलभगंदरा
ढ्यं नागंत्वपक्वंकुरुतेनराणाम् ॥ १३ ॥

४ कथीलके पक्केभस्मके गुण–भापानु०–वग (कथील) का पक्का भस्म वल, रुचि,बुद्धि, शीतलता, सौंदर्यता, कविता,आरोग्यता और वातुस्थिरताकारक तथा क्षयी, प्रमेहादि समस्तरोगहारक और दीपन पाचन है. वंगभस्म भक्षण करनेवाले मनुष्यका स्वप्नमेभी वीर्य स्खलित नहीं होता ॥ ८ ॥

कथीलके कच्चेभस्मके दोष–कथीलका कच्चाभस्म कुष्ट, गुल्म, पाडु, प्रमेह, अपाचि, वातरक्त इत्यादि महान् रोगकारक और वलहारक होता है॥९॥ ऐसा ग्रथातरमें लिखा है

५ जस्तेके पक्केभस्मके गुण–जस्तेका पक्काभस्म कसेला, कडवा और ठढा है, कफ, पित्त, प्रमेह, कामला और श्वासनाशक तथा दिव्यदृष्टि प्रकाशक है ॥ १० ॥ ऐसा भावप्रकाशमें लिखाहै.

जस्तेके कच्चेभस्मके दोष–जस्तेका कच्चा भस्म प्रमेह, अजीर्ण और भ्रमआदि अनेकरोगोंको उत्पन्न करता है ॥ ११ ॥

६ शीशेके पक्केभस्मके गुण–शीशेका पक्काभस्म क्षयी, वादी, गुल्म, कामला, भ्रम, कृमि, कफरोग, शूल, प्रमेह, खासी, सग्रहणी, ववासीर, गुदारोग और मदाग्निको दूरकरताहै तथा वलको वढाताहै ॥ १२ ॥

शीशेके कच्चेभस्मके दोष–शीशेका कच्चाभस्म, कुष्ठ, गोला, अरुचि, पाडु क्षयी, कफरोग, रक्तविकार, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, पक्षी, शूल और भगदर इन रोगोंको प्रगट करताहै ॥ १३ ॥

७ पक्कलोहभस्मगुणाः--लोहंमृतंकज्जलसंनिभंतुभुंक्ते
सदायोरसराजयुक्तम् ॥ तस्यैवदेहेनभवन्तिरोगामृ
तोपिकामः पुनरेतिधाम्य ॥ १४ ॥ आयुः प्रदातावलवीर्यकर्तारोगस्यहर्तामदनस्यकर्ता ॥ अयस्समानंनहिकिंचिदन्यद्रसायनंश्रेष्ठतमंवदन्ति ॥ १५ ॥

अपक्वलोहभस्मदोषाः-अल्पौषधस्तोकपुटैर्हीनगं धकपारदैः ॥ अपक्वलोहजंचूर्णमायुःक्षयकरंपरम् ॥ १६ ॥ षण्ढत्वकुष्ठामयमृत्युदं भवेद्धृद्रोगशूलौ कुरुतेश्मरींच ॥ नानारुजानांचतथाप्रकोपंकरो तिहल्लासमशुद्धलोहम् ॥ १७ ॥ ग्रं० त० ।

७ लोहेके पक्वभस्मके गुण–श्यामवर्णवाले लोहेके पक्वभस्मको पारदभस्म सहित जो नित्य सेवन करे उसके शरीरमें कभी रोग उत्पन्न नहीं होते और नष्टहोगया कामभी पुन शरीरमे प्राप्त होताहै ॥ १४ ॥ आयु, बल, वीर्य और कामको बढानेवाला, रोगनाशक जैसा लोहभस्महै वैसा और कोई श्रेष्ठ रसायन नहिहै ऐसा बडे २ वैद्य कहते है ॥ १५ ॥

लोहेकेकच्चेभस्मकेदोष–जिसमें लिखित औषध और पुटोंसे न्यून तथा पारे गधक रहित लोहेका कच्चाभस्म सो आयुको क्षीण करताहै ॥ १६ ॥ तथा नपुसकता, कुष्ट, हृद्रोग, शूल, और पत्थरी आदि रोगोको उत्पन्न करता और मृत्युको प्राप्तकरताहै ॥ १७ ॥ ये सब ग्रथातरमें लिखाहै.

८ पक्वसुवर्णमाक्षिकभस्मगुणाः-स्यान्माक्षिकस्तिक्तोदीपनः कटुर्दुर्नामकुष्ठामयभूतनाशनः ॥ पांडुप्रमेहक्षयनाशनोलघुस्सत्त्वंमृतंतस्यसुवर्णवद्गुणैः ॥ १८ ॥ ग्रं० त० ।

अपक्वसुवर्णमाक्षिकभस्मदोषाः-अपक्वमाक्षिकेणाशुदेहः संक्रमतेरुजा ॥ तद्दोषविनिवृत्त्यर्थमनुपानं प्रदीर्घ्यहम् ॥ १९ ॥ ग्रं० त० ।

९ पक्वरौप्यमाक्षिकभस्मगुणाः–माक्षिकोरजतहाटकप्रभःशोधितोऽतिगुणदस्सुसेवितः ॥ मेहकुष्ठकृमिशोफपांडुतापस्मृतिंहरतिसोश्मरीञ्जयेत् ॥ ॥ २० ॥ ग्रं० त० ।

अपक्करौप्यमाक्षिकभस्मदोषाः-अपक्करौप्यमाक्षिकै-
णामयाअनेकाश्चभवन्ति ॥ २१ ॥
१० पक्कापक्कतुत्थभस्मगुणदोषाः—तुत्थभस्मकफंह-
न्तिपामांकुष्ठंविषंकृमीन् ॥ चक्षुष्यंलेखनंभेदि
शुद्धिहीनं हि दोषकृत् ॥ २२ ॥ ग्रं० त० ।
११ शुद्धशिलाजतुगुणाः—पांडुरंसिकताकारंकर्पूरा-
भंशिलाजतु ॥ मूत्रकृच्छ्राश्मरीमेहकामलापाडु-
नाशनम् ॥ २३ ॥ ग्रं० त० ।
अशुद्धशिलाजतुदोषाः--अशुद्धंदाहमूर्च्छादिभ्रमपि
त्तास्रशोणितम् ॥ शिलाजतुप्रकुरुतेमांद्यमग्नेश्च
विड्ग्रहम् ॥ २४ ॥ ग्रं० त०

८ **सोनामक्खीके पक्केभस्मकेगुण**—सोनामक्खी तीक्ष्ण, दीपन, कटु और हलकी है, यह, अर्श, कुष्ठ, पाडु प्रमेह और क्षयीका नाश करती है इसका पक्काभस्म सुवर्णभस्मके समान गुणकारकहै ॥ १८ ॥

सोनामक्खीकेकच्चेभस्मकेदोष—सोनामक्खीके कच्चे भस्मके खानेसे देहमें अनेकप्रकारके रोग उत्पन्न होतेहैं उनकी शांतिका उपाय आगे ९ वें प्रमोदमें वर्णन करेंगे ॥ १९ ॥

९ **रूपामक्खीकेपक्केभस्मकेगुण**—रूपामक्खी रूपे और सोनेके समान कांतिमती होतीहै यह शोधित अत्यत गुणदात्री और इसके पक्कभस्मसेवनसे प्रमेह, कुष्ठ, कृमि, शोथ, कामला, अपस्मार तथा पथरी आदि अनेक रोग दूर होते हैं ॥ २० ॥

रूपामक्खीकेकच्चेभस्मकेदोष—रूपामक्खीके कच्चे भस्म भक्षण करनेसे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं ॥ २१ ॥

१० **नीलेथोथेकेपक्केभस्मकेगुण औरकच्चेकेदोष**-नीलेथोथेका पक्काभस्म कफ, खुजली, कुष्ठ, विष, नेत्ररोग और वित्तका नाश करताहै और नीले-थोथेका कच्चाभस्म रोगकारकहै ॥ २२ ॥

११ शुद्धशिलाजीतके गुण–शुद्धशिलाजीत मूत्रकृच्छ्र, पथरी, प्रमेह कामला और पाडुका नाश करताहै ॥ २३ ॥

अशुद्धशिलाजीतकेदोष–अशुद्धशिलाजीत दाह, मूर्च्छा, भ्रम, रक्तपित्त, रुधिरकोप, मदाग्नि और मलावरोध करताहै॥ २४ ॥

१२ पक्कपारदभस्मगुणाः–यावन्नहरवीजंतुभक्षयेत्पा रदंमृतम् ॥ तावत्तस्यकुतोमुक्तिर्भोगाद्रोगान्नवा दपि ॥ २५ ॥

अन्य०–मूर्च्छातोगदहत्तथैवखगतिंधत्तेविवद्धोऽर्थ दस्स्याद्भस्मामयवार्धकादिहरणंदृक्पुष्टिकान्तिप्र दम् ॥ वृष्यंमृत्युविनाशनंबलकरंकान्ताजनानंद दंशार्दूलातुलसत्त्वकृच्चभुविजान्रोगानुसारीस्फु टम् ॥ २६ ॥

अशुद्धापक्कपारदभस्मदोषाः संस्कारहीनःखलुसूतरा जोयस्सेवतेतस्यकरोतिबाधाम् ॥ देहस्यनाशंवि दधातिनूनंकुष्ठादिरोगाञ्जनयेन्नराणाम् ॥ २७ ॥

१२ पारेकेपक्केभस्मके गुण–भापानुवादः–जबतक मनुष्य पारेके भस्मका सेवन नहीं करता तबतक भोग, रोग और ससारसे छुटकारा नहीं पाता॥ २५॥

अन्यच्च–मूर्च्छितपारा रोगोंका नाश और आकाशमार्गमें चलनेकी शक्ति करदेताहै, बद्ध (बँधाहुआ) पारा धनप्रद होताहै मृतपारा तरुणता, दिव्यदृष्टि, कांति, वीर्य, बल, स्त्रीसंभोगमें आनद देनेवाला मृत्युनाशक सिंहसमान पराक्रम कारक और समस्त रोगहारक होताहै ॥ २६ ॥

अशुद्ध तथा अपक्कपारेके दोष–अशुद्ध पारेके सेवनसे शरीरपीडा कुष्ठ आदि अनेक रोग और मृत्युभी होना संभव है ॥ २७ ॥

१३ शुद्धरससिंदूरगु०–हरतिचरससिंदूरंकासश्वासा ग्निमान्द्यमेहगणान् ॥ रक्तविकारंकृच्छ्रंज्वरादिरो गान्यथानुपानयुतम् ॥ २८ ॥

अशुद्धरससिंदूरदोषाः—रससिंदूरमशुद्धाद्रसांद्विजातं पारदवद्रोगान् ॥ कुर्याच्चेतच्छान्त्यैवृतमरिचरजः पिबेत्तुसप्तदिनम् ॥ २९ ॥ ग्रं० त० ।

१४ रसकर्पूरगु०—देवकुसुमचन्दनकस्तूरिकुंकुमैर्युक्तम् ॥ खादन्हरतिफिरंगंव्याधिं सोपद्रवंघोरम् ॥ विन्दतिवह्नेर्दीप्तिंपुष्टिवीर्यंबलंविपुलम् ॥ रमयतिरमणीशतकंरसकर्पूरस्यसेवकःसततम् ॥ ३० ॥ भा० प्र० ।

अशुद्धरसकर्पूरदोषाः—सेवितोऽविधिनाकुष्ठंसन्धिवातंकफाधिकम् ॥ रसकर्पूरकंकुर्यात्तस्माद्यत्नेनसेवयेत् ॥ ३१ ॥ ग्रं० त० ।

१५ शुद्धगन्धकगुणाः—शुद्धोगन्धोहरेद्रोगान्कुष्ठमृत्युज्वरादिकान् ॥ अग्निकारीमहानुष्णोवीर्य्यवृद्धिंकरोतिहि ॥ ३२ ॥ ग्रं० त० ।

अशुद्धगंधकदोषाः—अशुद्धगंधःकुरुतेचकुष्ठंतापंभ्रमंपित्तरुजांतथैव॥रूपंसुखंवीर्यबलंनिहन्तितस्माद्विशुद्धोविनियोजनीयः ॥ ३३ ॥ ग्रं० त० ।

१६ शुद्धहिंगुलगुणाः—तिक्तंकषायंकटुहिंगुलस्याच्छ्रेत्राम यघ्नंकफपित्तहारी ॥ हृल्लासकुष्ठज्वरकामलाचप्लीहामवातौचगदंनिहन्ति ॥ ३४ ॥ ग्रं० त० ।

अशुद्धहिंगुलदोषाः—अशुद्धोदरदःकुर्यात्कुष्ठंक्लैव्यंक्लमंभ्रमम् । मोहंचशोधयेत्तस्मात्सिद्धवैद्यस्तुहिङ्गुलम् ॥ ३५ ॥ ग्रं० त० ।

१३ शुद्धरससिंदूरकेगुण—शुद्धरससिंदूर कास, मदाग्नि, प्रमेह, रक्तविकार मूत्रकृच्छ्र और ज्वर आदि अनेकरोगोंका पृथक् २ अनुपानसे नाश करताहै ॥ ॥ २८ ॥

अशुद्धरससिंदूरकेदोष—अशुद्धरससिंदूर अशुद्धपारकेसमान रोगोंको उत्पन्न करताहे॥ २९ ॥ यह सब ग्रथांतरमे लिखाहे)

१४ शुद्धरसकर्पूरगुण—लवंग चंदन कस्तूरी और केशर संग शुद्ध रस-कपूर सेवनकरनेसे घोरउपद्रवोंसहित फिरंगरोग दूर होताहै और इसका सेवन करनेवाला पुरुष अग्निदीपन, पुष्टि, बल, वीर्य और शतस्त्रीरमणशक्तिको प्राप्त होताहै ऐसा भावप्रकाशमे लिखाहै ॥ ३० ॥

अशुद्धरसकर्पूरदोष—अशुद्धरसकर्पूरसेवनसे कुष्ठ, साधिनात (गाठिया) और कफबाहुल्य आदि रोग उत्पन्न होतेहैं ॥ ३१ ॥

१५ शुद्धगंधकगुणा —शुद्धगंधक कुष्ठ, मृत्यु, ज्वर आदि रोगनाश अग्निप्रकाश और वीर्यवृद्धिको करताहै ॥ ३२ ॥

अशुद्धगंधकदोष—अशुद्धगन्धक कुष्ठ, ताप, भ्रम और पित्तरोगको उत्पन्न और रूप सुख बल तथा वीर्यका नाश करताहै ॥ ३३ ॥

१६ शुद्धहिंगुलकेगुण—शुद्धहिंगुल तीखा, कपैला और कटवा है, नेत्र-रोग, कफरोग, पित्तरोग हृद्रोग, कुष्ठज्वर, कमल (पीलिया) तापतिल्ली और आमवात इन रोगोंका नाश करताहै ॥३४॥

अशुद्धहिंगुलदोष—अशुद्धहिंगुल नपुंसकता, परिश्रम भ्रम और मोह उत्पन्न करताह इसलिये इसे सदैव उत्तमप्रकारसे सोधे ॥ ३५ ॥

१७ पक्वाभ्रकभस्मगुणाः--सृता कंकामबलप्रदंचविषं-
मरुच्छ्वासभगन्दराख्यम्॥मेहभ्रमंपित्तकफंचकासं
क्षयंनिहन्त्येवयथानुपानात् ॥ ३६ ॥ ग्रं० त० ।

अपक्वाभ्रकभस्मदोषाः-चन्द्रिकासहितमभ्रकंयदाजीवि
तंझटितिनाशयेत्तदा ॥ व्याधरोनइवचोदरास्थि-
तंवातनौचितनुतेगदान्वहून् ॥ ३७ ॥ ग्रं० त० ।

१ [illegible]

१८ पक्कहरितालभस्मगुणाः-अशीतिवातान्कफपित्त रोगान्कुष्ठंचमेहंचगुदामयांश्च ॥ निहन्तिगुंजार्द्ध मितंतुतालं षड्वल्लखंडेनसमंचयुक्तम् ॥ ३८ ॥

अपक्कहरितालभस्मदोषाः—अशुद्धतालंखलुपीतवर्णंसधू मकंवातचयंचपित्तम् ॥ पङ्गुत्वकुष्ठंतनुतेचतेनदेहस्य नाशंप्रकरोतिसद्यः ॥ ३९ ॥

१९ शुद्धमनश्शिलागुणाः—मनश्शिलासर्वरसायनाख्या तिक्ताकटूष्णाकफवातहंत्री ॥ सत्त्वात्मिकाभूतवि षाग्निमांद्यंकंडूंचकासक्षयहारिणीच ॥ ४० ॥

अशुद्धमनःशिलादोषाः—मनश्शिलामंदबलंकरोतिजंतू न्ध्रुवंशोधनमन्तरेण ॥ मलस्यबन्धंकिलमूत्ररोगंस शर्करंकृच्छ्रगदंचकुर्यात् ॥ ४१ ॥

२० शुद्धसौवीरगुणाः—सौवीरंग्राहिमधुरंचक्षुष्यंकफवा-तजित् ॥ सिध्मक्षयास्रनुच्छीतंस्रोतोञ्जनमपीदृशम् ॥ ४२ ॥ म० प० नि० ।

अशुद्धसौवीरदोषाः—अशुद्धसौवीरादेहेनेत्रेचभवन्तिरो गाः ॥ ४३ ॥

१७ अभ्रकके पक्केभस्मके गुण—अभ्रकका पका भस्म काम और बलप्रद तथा विष, वातश्वास, भगदर, प्रमेह, भ्रम, पित्त, कफ, कास और क्षयी नाशकहै ॥ ३९ ॥

अभ्रकके कच्चेभस्मके दोष—अभ्रकका कच्चा चमकदार भस्म खानेसे थोडेही कालमें अनेक रोग शरीरमें उत्पन्न होतेहैं और प्राणहानि हो तोभी कोई आश्चर्य नहीं जैसे सिंहका केश (बाल) पेटमे जानेसे अनेक रोग होजातेहैं वैसे ॥ ३७ ॥

१८ हरितालकेपक्कभस्मकेगुण–हरितालकापक्काभस्म ८० प्रकारके वातरोग, पित्तरोग, कफरोग, कुष्ट, प्रमेह और गुदाके रोगोका नाश करताहे इसकी आधी चिरमिठी मात्रा ६ रती मिश्री सग खाना चाहिये ॥ ३८ ॥

हरितालकेकच्चेभस्मकेदोष–पीत अग्निपर डालनेसे जिससे धूवा निकले ऐसा हरतालका कच्चा भस्म वातव्याधि. पित्त पगुलरोग और कुष्ठको उत्पन्न करता तथा देहका नाश करता हे ॥ ३९ ॥

१९ शुद्धमनशिलके गुण–शुद्धमनशिल–सर्व रसायनमे, तीक्ष्ण, कटु, उष्ण और सत्त्व (सत) रूपहै यह कफ, वात, भूत, विष, अग्निमाद्य, खुजली, कास और क्षयीको दूर करताहै ॥ ४० ॥

अशुद्धमनशिलके दोष–अशुद्धमनशिल–अत्यबल, कृमि, मलावरोध, मूत्ररोग और पथरी सहित मूत्रकृच्छ्रको उत्पन्न करता है ॥ ४१ ॥

२० शुद्धकालेसुरमेकेगुण–शुद्ध काला सुरमा (सोवीर) ग्राही, मधुर, ठढा नेत्ररोगहारक, कफ, वात, सिव्या (विभूति) क्षयी और रक्तज रोग नाशकहै. इसी प्रकार स्त्रोतोजनभी होताहै ॥ ४२ ॥

अशुद्धकालेसुरमेकेदोष–अशुद्धकाले सुरमेसे देहमे और नेत्रमें अनेक रोग उत्पन्न होते हैं ॥ ४३ ॥

२१ शुद्धखर्परगुणाः–त्रिदोषाजित्पित्तकफातिसारक्षयज्व
रघ्नोरसकोतिरूक्षः ॥ नेत्रामयानांग्रकारोतिनाशं
स्याद्रंजकःकामलनाशनश्च ॥ ४४ ॥ ग्रं० त० ।
अशुद्धखर्परदोषाः–अशुद्धःखर्परःकुर्याद्भांतिंभ्रांतिवि
शेषतः ॥ तस्माच्छोध्यःप्रयत्नेनयावद्भान्तिविव
र्जितः ॥ ४५ ॥ ग्रं० त० ।

२२ वज्रभस्मगुणाः–आधुः प्रदंसङ्गुणदंचवृष्यंदोषत्रय
प्रशमनंसफलामयघ्नंतेन्द्रबंधवधसङ्गुणदंग्रही
संमृत्युंजयेत्तदमृतोपमेववज्रम् ॥ ४६ ॥ ग्रं० त०

अशुद्धापक्कवज्राभस्मदोषाः--पीडांविधत्तेविविधांनराणां
कुष्ठंक्षयंपांडुगदंचदुष्टम् ॥ हृत्पार्श्वपीडांकुरुतेतिदुः
स्सहामशुद्धवज्रंगुरुवात्महंत्यजेत् ॥ ४७ ॥ ग्रं०त० ।

२३ पक्कवैक्रांतभस्मगुणाः—वैक्रांतवज्रसदृशोदेहलोहक
रोमतः ॥ विषज्वरसराजस्य ज्वरकुष्ठक्षयव्रणुत्
॥ ४८ ॥ ग्रं०त० ।

अशुद्धपक्कवैक्रांतभस्मदोषाः-अशुद्धवैक्रांतोवज्रवदो
षकर्ताभवति ॥ ४९ ॥

२४ शुद्धप्रवालभस्मगुणाः—प्रवालंमधुरंसाम्लंकफपि
त्तातिंदोषनुत् ॥ वीर्यकांतिकरंस्त्रीणांधृतेसंगलदा
यकम् ॥ ५० ॥

क्षयपित्तास्रकासघ्नंदीपनंपाचनंलघु ॥ विषभूतादि
शमनंविद्रुमंनेत्ररोगहृत् ॥ ५१ ॥

अशुद्धप्रवालदोषाः अशुद्धप्रवालभक्षणाद्भवन्तिरोगा
ह्यनेकाः ॥ ५२ ॥

२१ शुद्धखपरियाके गुण—शुद्ध खपरिया रुखाहै त्रिदोष, पित्त, कफ, अतिसार, क्षयी, ज्वर, नेत्ररोग कामला नाशक और कांतिविकाशक है ॥४८॥

अशुद्धखपरियाके दोष—अशुद्ध खपरिया वांति चांतिकारक होताहै इस लिये वांतिकारक दोष दूर होनेपर्यन्त इसका शोधन करना चाहिये ॥ ४९ ॥

२२ हीरेके पक्कभस्मके गुण—हीरका पक्का भस्म वायु नाशक, वल वीर्य कारक, त्रिदोष सकल रोग तथा मृत्युहारक, पारद मारक और अमृत समान गुणकारक है ॥ ५० ॥

अशुद्ध हीरेकेतथाकच्चेभस्मके दोष—अशुद्ध हीरा तथा इसका कच्चा भस्म मनुष्योंके अनेक प्रकारकी पीडा कुष्ठ, क्षयी, पाडु, दुष्पीडा पार्श्वपीडा और मृत्युभी कर देताहै ॥ ४७ ॥

२३ वैक्रान्तके पक्केभस्मके गुण—वैक्रातका पक्का भस्म हीरेके भस्मसमान गुणकर्ता देह दृढ करनेवाला और पारेका विष, ज्वर, कुष्ठ, तथा क्षयी इनका नाशकरनेवाला है ॥ ४८ ॥

वैक्रातकेकच्चेभस्मके दोष—वैक्रातका कच्चा भस्म हीरेके भस्म समान दोषकारक है ॥ ४९ ॥

२४ शुद्धमूंगेके गुण—शुद्धमूगा मधुर और कुछ अम्ल है कफ पित्तजन्य पीडा क्षयी रक्तपित्त, काश विष, भूतबाधा और नेत्ररोग इनको दूर करनेहारा स्त्रियोंके मगलदायक और दीपन तथा पाचन है ॥ ५० ॥ ५१ ॥

अशुद्धमूंगेकेदोष—भापानु०—अशुद्धमूगेके भक्षणसे अनेकरोग होतेहैं ५२

२५ विषस्यगुणागुणप्रदर्शनम्—विषंप्राणहरंप्रोक्तंव्य
वायिचविकाशिच ॥ आग्नेयंवातकफहृद्रोगवाहि
मदावहम् ॥ ५३ ॥ तदेवयुक्तियुक्तंतुप्राणदायिर
सायनम् ॥ पथ्याशिनांत्रिदोषघ्नंवृहणंवीर्यवर्द्धनम्
॥५४॥ येदुर्गुणाविषेऽशुद्धेतस्यहीनाविशोधनात् ॥
तस्माद्विषंप्रयोगेषुशोधयित्वाप्रयोजयेत् ॥५५॥ग्रं०त०

२५ विषकेदोषऔरगुणोंकादर्शाव—अशुद्ध विष प्राण हर्ता सर्व देहमें प्राप्त होकर पश्चात् पचनेवाला ओजको सुखाकर सधियोंको ढीला करदेनेवाला अत्यन्त उष्ण, वात, कफहारक, देहमे रमजानेवाला और मदकारक है ॥ ५३ ॥ और यही शुद्ध विष युक्तिसे सेवित प्राण, वय, वीर्य, बुद्धिदायक, त्रिदोषनाशक और पथ्यसे खानेवालोंका वीर्यवर्द्धक है ॥ ५४ ॥ जो अशुद्ध विषमे दुर्गुण (दोष) वर्णन किये वे सकल दोष शोधनसे दूर होजातेहै इसलिये विषको शुद्ध कर- [illegible] जिसतरह चाहिये ॥ ५५ ॥ यह सब ग्रथातरमें लिखाहै.

इति श्रीमिश्रविनोदसहितेभाषानुवादविभूषितेऽनुपानदर्पेसुवर्णा
दिनाशकपक्वभस्मनोगुणागुणनिरूपकोऽष्टम प्रमोद ॥ ८ ॥

अथातोऽपक्कधात्वादिदोषशान्तिविवेकं व्याख्यास्यामः ॥ १ ॥

१ अपक्कस्वर्णदोषशांतिः--अभयासितयाभुक्तात्रिदिनं नृभिरंगजे॥हेमदोषहरीख्यातासत्यंसत्यंनसंशयः२

२ अपक्करौप्यदोषशांतिः--शर्करामधुसंयुक्तासेवयेद्यो दिनत्रयम्॥ अपक्करौप्यदोषेणविमुक्तःसुखमश्नुते३

३ अपक्कताम्रदोषशांतिः--मुनिव्रीहिसितापानंवाधा न्याकंसिताश्चकैः ॥ ताम्रदोषमशेषंवैपिवन्हन्यादि नत्रयैः॥ ४ ॥

४ अपक्कवंगदोषशांतिः-मेषशृंगींसितायुक्तांयस्सेवति दिनत्रयम्॥वंगदोषविमुक्तोसौसुखंजीवतिमानवः५

५ अपक्कयशददोषशांतिः--वलाभयांसितायुक्तांसेवये द्योदिनत्रयम् ॥ यशदस्यविकारोस्यनाशमायाति नान्यथा ॥ ६ ॥

६ अपक्कनागदोषशांतिः-हेमाहरीतकींसेवेत्सितायुक्तां दिनत्रयम्॥अपक्कनागदोषेणविमुक्तस्सुखमेधते ७॥

७ अपक्कलोहदोषशांतिः--मुनिरसापिष्टाविडंगंमुनिरस लीढंचिरस्थितेवर्म्मे ॥ द्रावयतिलोहदोषान्वह्निर्नव नीतपिण्डमिव ॥ ८ ॥

८ अपक्कलोहजन्यकीटशांतिः-आरग्वधस्यमज्जातुरेच नंकीटशांतये ॥ भवेदप्यतिमारश्चपीत्वादुग्धंनुत-त्यजेत् ॥ ९ ॥

नवमःप्रमोदः ९ ।

अब कच्चीधातु आदिके खानेसे जो विकार होतेहैं उनके शान्तिका विवेक वर्णन करेंगे ॥ १ ॥

अपक्वसुवर्णदोषशाति–भाषानुवादः- हर्ड और मिश्रीको तीन दिन खानेसे अशुद्ध (कच्चे) सुवर्णभस्म सेवनसे जो विकार हुए हो वे सब शान्त होयँ ॥२॥

अपक्वरौप्यदोषशाति–मिश्री और सहतका तीन दिन सेवनकरनेसे चाँदीके कच्चे भस्मजन्य विकार शात होयँ ॥ ३ ॥

३ अपक्वताम्रदोषशाति–मुनिवीहि (सावाँ) अथवा धनियेको मिश्री सग मिलाकर जलके साथ ३ दिनतक पानकरे तो कच्चे ताम्रजनित दोष शात (दूर) होय ॥ ४ ॥

अपक्वंगदोषशाति–मेढासिंगीको मिश्री सग तीन दिनतक सेवनकरने से कच्चे वग (कथील) विकार शान्त होवे ॥ ५ ॥

५ अपक्वयशददोषशाति--छोटी हर्ड और मिश्रीका तीन दिन पर्यन्त सेवन करनेसे कच्चे जस्त भस्मके खानेसे जो विकार हुए हों वे समस्त शान्त होयँ ॥ ६ ॥

६ अपक्वनागदोषशाति–चोख और हर्ड मिश्री सग ३दिनपर्यन्त सेवनकरनेसे अपक्व नाग (सीसा) विकार शात होय ॥ ७ ॥

७ अपक्वलोहदोषशाति–अगस्त्यवृक्षके रसमें वायविडगके चूर्णको मिला कर सेवन करे और बहुत कालतक धूपमें बैठे तो कच्चे लोहभस्म जन्य दोष (विकार)दूर होयँ जैसे अग्नि माखनको पिघला देतीहै वैसेही यह उपचार अपक्व लोहविकारको पिघलाकर जडसे दूर करदेताहै ॥ ८ ॥

८ अपक्वलोहजन्यकीटशाति–अपक्व (कच्चे) लोह भस्मसे यदि पेटमे कृमि (कीडे) पटजावें तो अमलतासका गूदा खावे जिसमें रेचन (दस्त) होनेसे समस्त पेटके कीडे बाहर निकल जावेंगे पश्चात् दूधको पानकरे और उस अपक्व लोह-भस्म सेवनका त्यागनकरदेवे ॥ ९ ॥

९ अपक्वस्वर्णमाक्षिकदोषशांतिः–कुलत्थस्यकषायेणमाक्षिविकृतिशान्तिकृत् ॥ तथैवडाडिमंत्वग्वैदेयंदेहसुखार्थिने ॥ १० ॥ ॐ० त० ॥

१० अपक्करौप्यमाक्षिकदोषशांतिः--विकारोयदिजायेत विमलायानिषेवणात् ॥ शर्करासहितांभक्ष्यामेष शृंगीदिनत्रयम् ॥ ११ ॥ अं. त. ॥

११ अपक्कतुत्थदोषशांतिः-जंबीररसमादायय:पिवेच्चादि नत्रयम् ॥ तस्यतुत्थकशांतिःस्यात्तद्वल्लाजाजवारि णा ॥ १२ ॥ अं. त. ।

१२ अशुद्धशिलाजीतदोषशांतिः—मरीचंघृतसंयुक्तंसेवये द्दिनसप्तकम् ॥ शिलाजतुभवंदोषंशान्तिमाप्नोति निश्चितम् ॥ १३ ॥ अं० त. ।

९ कच्चीसोनामक्खीकेदोषोंकीशांति—भाषानुवादः-कुलथीके काटेसे अथवा अनारकी छालके काथसे कच्ची सोनामक्खीके विकार शांत होयँ ॥ १० ॥

१० कच्चीरूपामक्खीकेदोषोंकीशांति—मिश्री सहित मेढासिंगीका चूर्ण ३ दिन खानेसे कच्ची रूपामक्खीके विकार शांत होयँ ॥ ११ ॥

११ कच्चेनीलाथोथेकेदोषोंकीशांति-३दिनपर्य्यन्त जंबीरके रस अथवा लाही (धानकीखील) के जल पीनेसे कच्चे नीलेथोथेजन्य विकारोंकी शांति होय १२॥

१२ अशुद्धशिलाजीतकेदोषोंकीशांति—काली मिरच और घृत ७ दिनपर्यन्त सेवन करनेसे अशुद्ध शिलाजीतके भक्षणसे जो विकार हुए हों उनकी शांति होय ॥ १३ ॥

१३ अशुद्धापक्कपारददोषशांतिः--विकारायदिजायन्तेगा रदान्मलसंयुतात् ॥ गन्धकंसेवयेद्धीमान्पाचितंवि धिपूर्वकम् ॥ १४ ॥ अं० त० ।

१४ अशुद्धरससिंदूरदोषशांतिः- रससिंदूरशान्त्येघृतम रिचरजःपिवेत्सप्तदिनम् ॥ १५ ॥

१५ अशुद्धरसकर्पूरदोषशांतिः-महिषीक्षुतोनिंबान्या
कंवासितायुतम् ॥ पिबेन्नीरेणमुक्तःस्याद्रसकर्पूरजै
र्गदैः ॥ १६ ॥ ग्रं. त. ।

१६ अशुद्धगंधकदोषशांतिः-विकारोयदिजायेतगन्धका
ख्येत्तदापिबेत् ॥ गोघृतेनान्वितंक्षीरंसुखीस्यात्स-
चमानुषः ॥ १७ ॥ ग्रं० त. ।

१७ अशुद्धहिंगुलदोषशांतिः-उत्पद्यतेयदाव्याधिर्दरद-
स्यनिषेवणात् ॥ तदासूतकवत्सर्वंकुर्य्याच्छान्ति
प्रतिक्रिया ॥ १८ ॥ ग्रं. त. ।

१८ अपक्वाभ्रकभस्मदोषशांतिः-उमाफलंवनेपिष्ट्वासेवये
द्योदिनत्रयम् ॥ अशुद्धाभ्रकदोषेणविमुक्तस्सुखमे
धते ॥ १९ ॥ ग्रं. त. ।

१९ अपक्वहरितालभस्मदोषशांतिः-अजाजीशर्करायुक्तं
सेवयेद्योदिनत्रयम् ॥ विकृतिस्तालजाहन्याद्यथा
दारिद्र्यमुद्यमे ॥ २० ॥ ग्रं. त. ।

२० अशुद्धमनश्शिलादोषशांतिः-गोक्षीरंमाक्षिकयुतं
पिबेत्त्र्योदिनत्रयम् ॥ कुनटीतस्यदेहेचविकारंन
करोतिहि ॥ २१ ॥ ग्रं. त. ।

२१ अशुद्धसौवीरदोषशांतिः-त्रिफलासेवनाद्भवतिसौ
वीरजनितविकाराणाशांतिः ॥ २२ ॥

२२अशुद्धखर्परदोषशांतिःरसकनिषेवणतोयदिरोगाः प्रादुर्भवन्तिमनुजानाम् ॥ तेनाशमाप्नुवन्तिपीतं गोमूत्रसप्ताहम् ॥ २३ ॥ अं. त. ।

१३ अशुद्धतथाकच्चेपारेकेदोषोंकीशांति—शुद्ध गधकके सेवनसे अशुद्ध तथा अपक्व (कच्चे) पारेसे जो विकार उत्पन्न हुएहों उनकी शातिहोय ॥१४॥

१४अशुद्धरससिंदूरकेदोषोंकीशाति—७ दिनपर्यन्त काली मिरचका चूर्ण घीके सग सेवनकरनेसे अशुद्ध रससिंदूर खानेसे जो विकार उत्पन्न हुएहो उनकी शाति होयॅ ॥ १५ ॥

१५ अशुद्धरसकर्पूरदोषशांति—भैसके गोबरका रस अथवा मिश्री सहित धनियॉ जलसे पान करेतो अशुद्ध रसकर्पूर जन्य विकार शात होयॅ ॥ १६ ॥

१६ अशुद्धगंधकदोषशाति—गोघृत सहित दूध पीनेसे अशुद्ध गधकके विकार शात होयॅ ॥ १७ ॥

१७ अशुद्धहिंगुलकेदोषोंकी शांति—अशुद्ध पारेके विकारोंकी शातिको जो उपाय पूर्व कह चुकेहैं वही अशुद्ध हिंगुलके विकारोंकी शातिका उपाय जानो ॥ १८ ॥

१८ कच्चेअभ्रककेदोषोंकीशांति—आमलेको पानीमें पीसके ठंढाईके समान छानकर ३ दिनतक पीवेतो अशुद्ध अभ्रकजन्य दोष (विकार) शात होय ॥ १९ ॥

१९ हरितालकेकच्चेभस्मकेदोषोंकीशाति—जीरा और मिश्री मिलाकर ३ दिनतक सेवन करेतो अशुद्ध (कच्चे) हरितालके विकार शात होयॅ ॥ २० ॥

२० अशुद्धमनशिलकेदोषोंकीशाति—३ दिनपर्यन्त गौके दूधमें सहत मिलाकर पीनेसे अशुद्ध मनशिलके विकार शात होयँ ॥ २१ ॥

२१ अशुद्धसुरमेकेदोषोंकीशाति—त्रिफला सेवन करनेसे अशुद्ध सुरमेके विकार शात होयॅ ॥ २२ ॥

२२ अशुद्धखपरियेकेदोषोंकीशाति— ७ दिनपर्यन्त गोमूत्र पीनेसे अशुद्ध खपरियाके दोष (विकार) शात होयँ ॥ २३ ॥

३ अशुद्धापक्कवज्रभस्मदोषशांतिः--सितामधुघृतैस्सा
कंगोदुग्धंदिनसप्तकम् ॥ विधिनासेवितंहंतिवज्रदो
षंचिरोत्थितम् ॥ २४ ॥

२४ अशुद्धापक्कवैक्रांतभस्मदोषशांतिः--शुद्धवैक्रांतभ
स्मशांतिर्वज्रवज्ज्ञेया ॥ २५ ॥

२५ अशुद्धप्रवालदोषशांतिः-अशुद्धप्रवालमौक्तिकयोर
पिविकारशांतिर्वज्रवज्ज्ञेया ॥ २६ ॥

२६ विषदोषशांतिः—अतिमात्रंयदाभुक्तंवमनंतस्यका
रयेत् ॥ अजादुग्धंददेत्तावद्यावद्वांतिर्नजायते ॥
॥ २७ ॥ ग्रं० त० ।

अजादुग्धंयदाकोष्ठेस्थिरीभवतिदेहिनः ॥ विषवे·
गंततोजीर्णजानीयात्कुशलोभिषक् ॥ २८ ॥ ग्रं. त.

२७ जैपालदोषशांतिः—धान्याकंसितयायुक्तंदधिनास
हयःपिवेत् ॥ देहेजैपालजोव्याधिर्नाशमाप्नोतिनि
श्चितम् ॥ २९ ॥ ग्रं. त. ।

२३ अशुद्धतथाकच्चहीरकेदोषकीशांति—७दिनतक मिश्री सहत और गौसहित गौका दूध पीनेसे अशुद्ध तथा अपक्व (कच्चे) हीरेके समस्त विकार शांत होय ॥ २८ ॥

२४ अशुद्धवैक्रांतदोषशांति—हीरेके विकारशांति उपायसे वैक्रांति विकारकी शांति होतीहै ॥ २९ ॥

२५ अशुद्धमूंगेकदोषकीशांति—अशुद्ध मूंगे और मोतीके विकार शांतिका उपचारभी अशुद्ध हीरेके विकार शांतिके उपचार समान जानो २६ ॥

२६ विषदोषशांति–बच्चेनाग आदि अशुद्ध दि अधिक मात्रामें आजावे तो उसे वमन (डलटी) करावे और बकरीके दूधका दि न जावे जब वह दूध पचकर वमन न हो तब जानलो कि, विष दोष शांतहुआ ॥२७॥ २८॥

२७ अशुद्धजमालगोटेकेदोषोकीशांति–बनियॉ और मिश्री दहीमें मिलाकर खिलानेसे अशुद्ध जमालगोटेके समस्त विकार शांत होयँ ॥ २९ ॥

ये सब उपाय ग्रथान्तरमें लिखेहैं

गीतिः ।

अङ्काब्ध्यङ्काब्जेब्दे चैत्रेशुभ्रेचरामजन्मनिथौ ॥
ज्ञारसरामश्चक्रेऽनुपानदर्पणमसुंकुजेपूर्णम् ॥ ३० ॥

इति श्रीमत्पण्डितज्ञारसरामविरचितेभाषानुवादविभूषितेऽनुपानदर्पणेऽ

पक्वाशयादिदोषशांतिविवेककथनेनसम प्रमोदः ॥ ९ ॥

समाप्तोऽयंग्रन्थः ।

इस ग्रंथकर्ताका जन्मसंवत्सरादि ।

श्रीमद्विक्रमवत्सरेवसुधरांकेन्दावभूदुद्भव
स्तातःश्रीबलदेवसूरिरमलेवंशोदधीचःप्रभोः ॥
चेषेविश्वतिथौविधौसितदलेसद्धर्टिकाढ्यामलो
ऽनेनोज्ञारसरामनामजगतिश्रीकृष्णनाम्नाकृतः ॥१॥

पुस्तक लिखनेका ठिकाणा–

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस बंबई.

अथ हिंगुलानुपानानि ।

वामावश्यकरस्तथामयहरस्संमारितोहिंगुलःक-
न्दर्पत्रिसुगंधिनाशुतनुतेवह्निम्बलंसन्मतिम्॥ ता
म्बूलेनसखेनिहन्तिकसनंश्वासंसमस्ताञ्ज्वरान्दे
योऽन्येषुविचार्यसद्गुणयुतैरोगेषुवैद्यैर्धिया॥१०४॥

भाषानुवादः—अब हिंगुलके अनुपान वर्णन करते है. स्त्रीवशकार सकलरोगहारक, हिंगुलभस्म त्रिसुगधि सग देनेसे कामको, अग्निको, वल बुद्धिको वढाता है और ताबूल सग देनेसे हे मित्र कास, श्वास और स ज्वरोंका नाश करता है इनसे व्यतिरिक्त रोगोपर अपनी बुद्धिसे सद्वैद्योंनें वि कर देना चाहिये ॥ १०४ ॥ यह श्लोक हमने अनेक वैद्यक ग्रथाशयानु वनाकर लिखा है.

अथाभ्रकानुपानानि ।

शुद्धाभ्रंननुवल्लकद्वयमितंकृष्णामधुभ्यांयुतंमेहंश्वा
सविषंचकुष्ठमतुलंवातंचापित्तंकफम् ॥ कासक्षीण
क्षनक्षयंग्रहाणिकांपाण्डुंभ्रमंकामलांगुल्माद्यंचतथा
नुपानविधिनामृत्युंचजेजीयते ॥ १०५ ॥ अन्य
च्च ॥ अभ्रकंचनिशात्यक्तेपिप्पलीमधुनासह ॥
विंशतिंचप्रमेहानांनाशयेन्नात्रसंशयः ॥ १०६ ॥
अभ्रकंहेमसंयुक्तंक्षयरोगावनाशनम् ॥ रौप्यहेमा
भ्रकंचैवधातुवृद्धिकरंपरम् ॥ १०७ ॥ गोक्षीरशर्क
रायुक्तंपित्तरोगविनाशनम् ॥ शैलजांपिप्पलीचूर्ण-
माक्षिकैस्सर्वमेहहृत् ॥ १०८ ॥ अभयागुडसंयुक्तं
वातरक्तं नियच्छति ॥ स्वर्णयुक्तंक्षयंहन्तिधातुवृ

ञ्छिकरोतिच ॥ रक्तपित्तंनिहन्त्याशुचैलाशर्करया सह ॥ १०९ ॥ अन्यच्च ॥ सितामृतासत्त्वयुतंमेहंना शयतेध्रुवम् ॥ वरामधुघृतैश्शाकंवीर्य्यकृच्चक्षुरोग हृत् ॥ ११० ॥ एलागोक्षुरभूधात्रीशर्करासहितं तथा ॥ गोदुग्धेनयुतंहन्तिमूत्रकृच्छ्रंप्रमेहकम् ॥ ॥१११॥ त्रिषुगन्धवराव्योषशर्करानागकेसरम् ॥ माक्षिकेणानिहन्त्याशु पाण्डुरोगंक्षयंज्वरम् ११२ अन्यच्च ॥ वल्लंव्योषसमन्वितंघृतयुतंवल्लोन्मितं-सेवितंदिव्याभ्रंक्षयपाण्डुसंग्रहणिकाशूलंचकुष्ठा-मयम् ॥ सर्वश्वासगदंप्रमेहमरुचिंकासामयंदु-र्द्धरंमन्दाग्निंजठरव्यथांपरिहरेच्छोषामयान्निश्चि तम् ॥ ११३ ॥

भाषानुवादः—अब अभ्रकके अनुपान वर्णन करतेहै पीपल और सहतसग १ रत्तीसे लेकर ६ रत्ती पर्य्यन्त शुद्ध अभ्रकभस्म भक्षण करनेसे प्रमेह, श्वास, विष, कुष्ठ, वात, पित्त, कफ, खाँसी, क्षीणता, क्षयी, व्रण, सग्रहणी, पाडु, भ्रम, कामला, और गुल्म,ये रोग दूर होयँ विशेषतो क्या, पर यदि उक्तानुपान विधिसे अभ्रक सेवन करनेवाला मनुष्य मृत्युकोभी जीतताहै ॥ १०५ ॥ प्रात काल पीपल और सहतसग अभ्रकभस्म सेवनसे २० प्रकारके प्रमेह दूर होयँ ॥ १०६ ॥ सोनेके पत्तों (वर्कों) के सग क्षयीका नाश करताहै—चादी सोनाकी भस्मसग अभ्रकभस्म खानेसे धातुवृद्धि होय ॥ १०७ ॥ गोदुग्ध और मिश्रीसग पित्तरोगका, शिलाजीत, पीपल, सुवर्णमाक्षिक भस्म इनके सग सब प्रमेहोका ॥ १०८ ॥ हर्ड और गुडके सग वातरक्तका—और सोनेके वर्कोके सग अभ्रकभस्म क्षयीका नाश करताहै तथा धातुको बढाताहै तथा इलायची और शर्करासग रक्तपित्तका नाश करताहै ॥ १०९ ॥ मिश्री और गुरचसत्त्वके सग अभ्रकभस्म प्रमेहको दूर करताहै—त्रिफला, सहत और घृतसग वीर्यको

बढाताहे और नेत्ररोगको हटाताहै ॥ ११० ॥ इलायची, गोखरू, भूआवला, मिश्री, और गोके दूध सग अभ्रकभस्म मूत्रकृच्छ्र और प्रमेहका नाश करताहै ॥ १११ ॥ त्रिसुगध, तज, पत्रज, इलायची, त्रिफला, त्रिकटु, मिश्री और नागकेशर इनके चूर्णको सहतमें मिलाकर उसके सग अभ्रकभस्म खावे तो पाडु, क्षयी और ज्वर ये सब दूर होयँ ॥ ११२ ॥ इसीप्रकार बायविडग, सोंठ, मिरच, पीपल, और गौका घी इनके साथ ३ रत्ती अभ्रकभस्म भक्षण करे तो, क्षयी, पाडु, सग्रहणी, शूल, कुष्ट, समस्त श्वास, प्रमेह, अरुची, कास, मदाग्नि, उदरव्याधि और शोथरोग ये सब दूर होयँ यह निश्चय जानिये ॥ ११३ ॥

अथ हरितालानुपानानि ।

अनुपानान्यनेकानियथायोगंप्रयोजयेत् ॥ गुडू-
च्यादिकषायेणगदानेतान्व्यपोहति ॥११४॥ सो
पद्रवंवातरक्तंकुष्ठान्यष्टादशापिवा ॥ सर्वरक्तवि-
कारेषुदेयमाम्रहरिद्रया ॥ ११५ ॥ सुहालाहल
जीराभ्यामपस्मारहरंपरम् ॥ समुद्रफलयोगेनज-
लोदरविनाशनः ॥ ११६ ॥ देवदालीरसैर्युक्तंभगं
दरहरंपरम् ॥ फिरंगदोषजंरोगंजातंहन्तिसुदुस्तर-
म् ॥ ११७ ॥ मंजिष्ठादिकषायेणकुष्ठमष्टादशंज-
येत् ॥ त्रिफलाशर्करायुक्तंपाण्डुरोगंजयत्यसौ ॥
॥११८॥ शुण्ठीचूर्णयुतंहन्यादामवातंसुदुर्जयम् ॥
सौवर्णभस्मयोगेनरक्तपित्तविकारनुत् ॥ ११९ ॥
तन्दुलीयरसैश्शाकंज्वरमष्टाविधंजयेत् ॥ एवंस-
र्वेषुरोगेषुस्वबुद्ध्याकल्पयेद्भिषक् ॥ १२० ॥

भाषानुवादः—अब हरितालभस्मके अनुपान वर्णन करतेहैं. हरितालभ रोगानुसार यथायोग्य अनुपान सग देना चाहिये. गुडूच्यादि काथ सग हरित

१ गुडूच्यादि काथ शार्ङ्गधरादि ग्रन्थोंमें देखलो

भस्म॥ ११४ ॥ उपद्रव सहित वातरक्तका तथा १८प्रकारके कुष्ठका नाश करताहै,ॲवियां हरिद्रासग सव्र रुधिरविकारमे हरितालभस्म देना चाहिये॥११५॥ विष और जीरेके सग अपस्मार (मृगी) का समुद्रफलसग जलोदर (जिसे लोकमे जलधर) कहतेहै उसका ॥११६॥ देवदालीके रससग भगदरका तथा फिरगवातका ॥११७॥ मजीष्ठादिक्काथसग १८ प्रकारके कुष्ठोंका त्रिफला और मिश्री सग पाडुरोगका ॥ ११८ ॥ सोठके चूर्णसग आमवातका-सुवर्णभस्मसग रक्तपित्तजन्य विकारका ॥ ११९ ॥ और चौलाईके रससग देनेसे हरितालभस्म ८ प्रकारके ज्वरोका नाश करताहै इसीप्रकार सव्ररोगोमे वैद्य अपनी बुद्धिसे अनुपानोंकी कल्पना करके उनके साथ हरिताल भस्म देवे ॥ १२० ॥

अथ मनाश्शिलानुपानानि ।

मनाश्शिलासुमाक्षिकेणशुक्रमाशुपिच्चिटंनिहन्ति वासरांध्यमामयंसखेनसंशयः ॥ कणामरीचचूर्ण संयुताश्शिलांबुनांजितान्त्रिदोषजंज्वरंव्यथाश्चभूत संनिवेशजाम् ॥ १२१ ॥ दध्यंबुनाहन्तितथा वुंदंश्शिलाश्वासंचभार्ङ्गीकटुभद्रसंयुता ॥ वासार सव्योषयुताजयेच्छिला कासंबलासंकनकेनवैवि षम् ॥ १२२ ॥ मत्कृतिरियम् ॥

भाषानुवादः—अव मन शिला (मनाशिल) के अनुपान वर्णन करतेहैं हे मित्र ! शुद्ध मनश्शिलाको सहतसग नेत्रमें लगानेसे, नेत्रमें की फूली, तिमिर, (दिनोंधि) और नेत्रका चिपकना ये सव दूर होतेहैं तथा छोटीपीपल, और काली मिरचके चूर्ण सग शुद्ध मन शिलाका जलसे नेत्रमे आजनेसे त्रिदोषज (सन्निपात) ज्वर और भूतवाधा दूरहोय ॥१२१॥ दहीके पानीसग अर्बुदरोगका, भारगी और सोंठसग श्वासका, अडूसेके रस और त्रिकटुसग खांसी तथा कफका और सुवर्णसग विषका शुद्धमन शिला नाश करतीहै शेषरोगोंपर वैद्य अपनी बुद्धिसे अनुपान विचारके देवे यह दोनो श्लोक मैंने अनेक वैद्यकग्रथोके आश्रयसे बनायेहै ॥ १२२ ॥

अथ सौवीरानुपानानि ।

नीलाजनंशुंठ्यभयागुडैःकफंपित्तंनिहन्त्याज्यासि
तायुतंध्रुवम् ॥ वायुंकणाविश्वमरीचमाक्षिकैर्देयं
धियान्येषुगदेषुपण्डितैः ॥१२३॥ मत्कृतिरियम्॥

भाषानुवादः—अब सुरमेके अनुपान वर्णन करतेहैं.शुद्धसुरमा नेत्रोंमें लगानेसे नेत्रोंके अनेकरोगोको दूर करताहै यह बात तो प्रसिद्धहीहै पर, सोंठ, हर्ड और गुडसग कफको घी शक्करसग पित्तको छोटीपीपर, सोंठ, कालीमिरच, और सहतसग वादीको शुद्धसुरमा दुर करताहै. अपरोगोपर बुद्धिमानोंने अपनी बुद्धिसे अनुपान विचारकर देना चाहिये यह श्लोकभी मेरा बनायाहुआ है १२३

अथ खर्परानुपानानि ।

तद्भस्ममृतकांतेनसमेनसहयोजयेत् ॥ अष्टगुंजा
मितंचूर्णत्रिफलाक्काथसंयुतम् ॥१२४॥ कांतपात्र
स्थितंरात्रौतिलजप्रतिवापकम्॥निषेवितंनिहन्त्या
शुमधुमेहमपिध्रुवम् ॥ १२५ ॥ पित्तक्षयंचपाण्डुं
चश्वयथुंगुल्ममेवच ॥ रक्तगुल्मश्चनारीणांप्रदरं
सोमरोगकम् ॥ १२६ ॥ योनिरोगानशेषांश्चविष
मांश्चज्वरानपि ॥ रजःशूलंचश्वासश्चहिध्मना
श्चविशेषतः ॥ १२७ ॥

भाषानुवादः—अब खर्परभस्मके अनुपान वर्णन करतेहैं खपरियेकी भस्मके समान कातलोहकी भस्म लेने और इनदोनोंको ८ गुजाप्रमाण त्रिफलाके क्काथ ॥ १२४ ॥ और तिलके तेलमें मिलाकर रात्रिभर कांतिलोहके पात्रमे रहने दे पश्चात् इसका सेवन करे तो मधुप्रमेहभी दूर होय ॥ १२५ ॥ तथा पित्तरोग,

---

१ जिस लोहेके पात्रमें दूध भरके औटावे उसपात्रसे उफान खाकर दूध बाहर न निकलनेपावे उसे कांतिलोहपात्र जानो ।

क्षयी, कामला, (पांडु) शोथ वायगोला, रक्तगुल्म, स्त्रियोंका प्रदर, सोमरोग ॥ १२६ ॥ सर्व योनिरोग, विषमज्वर, रज.शूल, (मासिक धर्महोनेके समय स्त्रियोंकी योनिमे शूल होताहै सो) श्वास और हुचकी इन सब रोगोंको खापरियेका भस्म उक्त अनुपानसे दूर करताहै ॥ १२७ ॥ ऐसा ग्रथातरमें लिखाहै.

अथ हीरकभस्मानुपानानि ।

कुष्ठेखादिरत्वग्व्यथापवनजेसृक्शृंगवेरंमधुदेयंका
सवलासश्वासविकृतौवासोषणात्वक्कणा ॥ पित्ते
दाहसितासमंज्वरगणेछिन्नाजलेतिक्तकेवज्रंमा
रितशुक्तभस्मगदहृद्योज्यंभिषग्युक्तिभिः॥१२८॥

भाषानुवादः—अब हीरेकी भस्मके अनुपान वर्णन करतेहैं खैरकी छालके सग कुष्ठरोगमें अदरख केसर और मधुसग वातव्याधि तथा वातरक्तरोगमे अडूसा, कालीमिरच, दालचीनी और पीपलसग कास, श्वास, और बलास, (कफ) इन रोगोमे मिश्रीके सग पित्त और दाहमे गिलोय और चिरायतेके सग समस्तज्वरमात्रमें हीरेके भस्मको देनेसे उक्तरोग नाश होय और इनसे व्यतिरिक्त रोगोंमें वैद्य अपनी बुद्धिसे अनुपान विचारके उसके साथ देवे ऐसा ग्रथातरमे लिखाहै ॥ १२८ ॥

अथ वैक्रांतानुपानानि ।

भस्मत्वंसमुपागतोविकृतकोहेम्नामृतेनान्वितोपा
दांशेनकलाज्यवल्लसहितोगुंजोन्मितस्सेवितः ॥
यक्ष्माणंज्वरणश्चपांडुगुदजंश्वासश्चकासामयंदु-
ष्टांवैग्रहणीमुरःक्षतमुखान्रोगाञ्जयेद्देहकृत्॥१२९॥

भाषानुवादः—अब वैक्रातके अनुपान वर्णन करतेहैं १ रती वैक्रातकी भस्मको उससे चतुर्थांश (चौथाई रती) सुवर्णभस्म, तथा पीपल, कालीमिरच

और मक्खनके साथ सेवन करे तो क्षयी,ज्वर, पाडु, अर्श,श्वास, कास,असाध्य सग्रहणी, उर क्षत (छातीकाघाव) और मुखरोग ये सब दूर होयँ ॥ १२९ ॥

अथ नीलवैक्रातभस्मानुपानानि ।

सूतभस्मार्द्धसंयुक्तंनीलवैक्रांतभस्मकम् ॥ मृता-
भ्रसत्त्वमुभयोस्तुलितंपरिमर्दितम् ।१३०। क्षौद्रा-
ज्यसंयुतंप्रातर्गुञ्जामात्रंनिषेवितम् ॥ निहन्ति-
सकलान्रोगान्दुर्जयानन्यभेषजैः ॥ त्रिसप्तदिवसै
र्नृणांगंगांभइवपातकम् ॥ १३१ ॥

भाषानुवादः—पारेकी भस्म १ भाग नीलवैक्रातभस्म आधा भाग इन दोनोंके तुल्य अभ्रकभस्म ॥ १३० ॥ इन सबको मिलाकर खरल करे और उसमेंसे १ रतीमात्र लेकर सहत और घृतके सग प्रात काल सेवन करे तो समस्त असाध्य रोगभी जो कि अन्य औषधियोसे दूर नहीं होसक्ते इससे दूर होयँ, यदि उक्त-भस्मका २१ दिनपर्यन्त सेवन करे तो जैसे गगाजल समस्तपातकोंको नाश कर-देता है तैसेही यह भस्म रोगोंका नाश करदेताहे,ऐसा ग्रथातरमे लिखाहै॥ १३१॥

अथ प्रवालभस्मानुपानानि ।

प्रवालभस्ममाक्षिकेणसागधीयुतेनवैनिहन्तिमा
रुतंचकोष्ठगंज्वरंपुरातनम् ॥ जयेत्सुपक्कवारणीफ
लेनशुक्रसंक्षयंददाति पुष्टिमाशु शर्कराज्यसंयुतं
नृणाम् ॥ १३२ ॥ सितापयोयुतंनिहंतिपित्तमा
शुदारुणंसखे सुशालिजैर्हिमैश्वमूत्रकृच्छ्रामय
म् ॥ चिकित्सकैर्विचार्य्यदेयमामयेषुवैधियाखिले
ष्वनेकतंत्रसम्मतेनमत्कृतिस्त्वयम् ॥ १३३ ॥

भाषानुवादः—अब प्रवालभस्मके अनुपान वर्णन करतेहैं छोटी पीपरी और सहतसग कोष्ठगत वायुका तथा जीर्णज्वरका और पक्के केलेसग धातुक्षयका

प्रवालभस्म नाश करताहै, शर्करा और घृतसग प्रवालभस्म पुरुषोको पुष्टता देताहै ॥१३२॥ मिश्री और दूधसग पित्तको और चावलोके हिमसग हे मित्र ! भयकर मूत्रकृच्छ्रकोभी प्रवालभस्म दूर करताहै.शेषरोगोपर वैद्योने अपनी बुद्धिसे अनुपान विचारके प्रवालभस्म देना चाहिये, ये दोनों श्लोक मैने अनेक तत्रोके सम्मतसे वनायेहैं ॥ १३३ ॥

अथ सामान्यतोऽखिलरसोपरसादीनांकति
पयरोगेष्वनुपानान्याहग्रन्थकर्त्ता कविः
श्रीलोलिंबराजानुमतेनात्र ।

शूलेहिंगुघृतान्वितंमधुयुताकृष्णापुराणज्वरेवाते
साज्यरसोनकःश्वसनकेक्षौद्रान्वितंत्र्यूषणम् ॥
शीतेव्याललतादलंसमरिचंमेहेवरासोपलादोषा
णां त्रितयेऽनुपानमुचितं सक्षौद्रमाद्रौंदिकम् ॥
॥१३४॥ अन्यच्च–घनपर्पटकंज्वरेग्रहण्यांमथितं
हेमगरेवमीषु लाजाः ॥ कुटजोऽतिसृतोवृषौऽस्र
पित्तेगुदकीलेष्वनलःक्रमोकृमिघ्नः ॥१३५॥ वै.नी.

भाषानुवादः–जव इसके अनन्तर ग्रथकर्त्ता कवि कितनेक रोगोंपर सामान्य प्रकारसे सवरस और उपरस आदिके अनुपान लोलिंबराजजीके मतानुसार वर्णन करतेहैं यद्यपि हम इस पाचवें प्रमोदमे मृत्युजयादि रसोके तथा सुवर्णादि सप्तधातु उपधातुओंके और पारदादि रसोपरसोंके पृथक् २ अनुपान वर्णन करचुकेहैं तथापि साधारणप्रकारसे प्रत्येक भस्मको निम्नलिखित अनुपानोके सग उन २ रोगोपर कि जिन २ के नाम दर्शातेहै वैद्य दे सक्तेहै, शूलरोगमे घी और हीगसग, जीर्णज्वरमे छोटी पीपल और सहतसग, वातव्याधिमे घी और लहसन सग, श्वासमे सोठ, मिरच, पीपल, और सहत सग, शीतागमे काली मिरच और नागरवेलके पानसग प्रमेहमें मिश्री और त्रिफला सग और सन्निपातमे अदरकके रस और सहत सग प्रत्येक रसादिकी भस्म देना

चाहिये ॥ १३४ ॥ ज्वरमें नागरमोथा और पित्तपापडे सग सग्रहणीमें छाछ सग त्रिपरोगमें धत्तूरेके पान सग, वमन (उलटी) में धानकी लाही (खील) के पानी सग, अतिसारमें कुडालकी छाल सग, रक्तपित्तमें अरुपेके रस सग, अर्श (मूलव्याधि) में चित्रक सग, और कृमि रोगमें वायविडग सग, प्रत्येक रसादिभस्म देना चाहिये ॥ १३५ ॥ ऐसा वैद्यजीवनमे लिखाहे.

अथ विषानुपानानि ।

शिखिकार्किरसोपेतंविषमज्वरजिद्विषम् ॥ विषय-
ष्ट्याह्वयंरास्नासेव्यमुत्पलकंदकम् ॥ १३६ ॥ तंदु-
लोदकपीतानिरक्तपित्तस्यभेषजम् ॥रास्नाविडंग
त्रिफलादेवदारुकटुत्रयम् ॥१३७॥ पद्मकंक्षौद्रम-
मृताविषश्चश्वासकासजित् ॥ सितारसविषक्षीर
प्रवालमधुभिःकृताः ॥ १३८ ॥ वान्तिंनिहन्तिगु
टिकामनुजानांनसंशयः। मधुमद्यनिशारेणुसैन्ध-
वैःकुटत्वग्युतम् ॥ च्यवनप्राशनोपेतंविषंक्षपय
ति क्षयम् ॥ १३९ ॥

भाषानुवादः—अब विष (वैच्छनाग आदि) के अनुपान वर्णन करतेहैं— शुद्ध नीला तूथा, और शुद्ध, पारेके सग विषका सेवन करनेसे ज्वर दूर होय मुलहटी, राना, कमलगट्टा ॥ १३६ ॥ इनके चूर्ण सग चावलोंके पानीसाथ विष सेवनसे रक्तपित्त दूर होय, रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देहदारु, त्रिकटु ॥ १३७ ॥ कमलगट्टा सहत, और गिलोय(गुरच) सग विष, सेवनसे श्वास, कास दूर होय, मिश्री, शुद्धपारा, विष, दूध, मूगेकी भस्म, और सहत इनकी गोली बनाकर ॥ १३८॥ उसे खावे तो मनुष्योंकी वाती (उलटी) दूरहोय,सहत,

---

१ वच्छनागको सस्कृतमें वत्सनाभ कहतेहैं विषके कहनेसे विषमात्रका ग्रहण होताहै पर विशेषत. वच्छनागकेही अनुपान जानिये ।

मद्य, हलदी, पित्तपापडा, सैंधव, और कूडेकी छाल इनके साथ अथवा च्यवन-प्राश अवलेह सग विपका सेवन करनेसे क्षयी (राजयक्ष्मा जिसे गुजरातीभी कई कहतेहैं) दूर होय ॥ १३९ ॥

विजयापिप्पलीमूलंपिप्पलीद्वयचित्रकैः ॥ पुष्क
राह्वसठीद्राक्षायवानीक्षारदीप्यकैः ॥ १४० ॥
सितायष्टीद्विवृहतीसैन्धवैःपालिकैःपचेत् ॥ सवि
षार्द्धपलैःप्रस्थंघृताक्तंजीर्णभुक्तपिवेत् ॥ १४१ ॥
दुर्नाममेहगुल्मार्शतिमिरक्रिमिपांडुकाः ॥ गल
ग्रहग्रहोन्मादकुष्ठानिचनियच्छति ॥ १४२ ॥ मु-
स्तावत्सकपाठाग्निव्योषप्रतिविषाविषम् ॥ धात-
कीमोचनिर्यासंचूर्ताास्थिग्रहणीहरम् ॥ १४३ ॥
कृच्छ्रघ्नाविषपथ्याग्निदंतीद्राक्षाविषावृषाः ॥ शि-
लाजितुविषंन्यूषमुदावर्ताश्मरीहरम् ॥ १४४ ॥

भाषानुवादः—भाग, पीपलामूल, छोटीपीपल, गजपीपल, चित्रक, पोकर मूल, कचूर, दाख, अजवायन, जवाखार, अजमोदा ॥ १४० ॥ मिश्री, मुलहटी, दोनों कटियाली, सैंधानोंने, और पालिक (पालका) इन सब औषधियोंको आधा पल लेवे ओर आधा पलही विष लेवे, पश्चात् सबका चूर्ण करके उसे १ प्रस्थ (५२ तोले ४ मासे) घृतमें पकावे और उसमेसे अनुपानयोग्य नित्य सेवन करे जब वह विष पचजावे तब ऊपरसे औरभी स्वशक्ति अनुसार घृत पानकरे ॥ १४१ ॥ तो असाध्य मेह, गुल्म, तिमिर, कृमि, पांडु, ग्रहग्रह, उन्माद, और कुष्ठ सबरोग दूर होयँ ॥ १४२ ॥ नागर-मोथा, कूडेकी छाल, पाठा, चित्रक, त्रिकटु, अतीस, धायटेके फूल, मोचरस, और आमकी गुठली इनके सग विष सेवनसे सग्रहणी दूर होय ॥ १४३ ॥ हर्ड, चित्रक, दंती, दाख और अरंपेके सग विष सेवनसे मूत्रकृच्छ-

---

१ च्यवनप्राशन अवलेह प्रथातरसे जानो।

का तथा शिलाजीत सोंठ, मिरच और पीपल सग विष सेवनसे उदावर्त और पथरीका नाश होय ॥ १४४ ॥

गोमूत्रक्षारसिंधूत्थविषपाषाणभेदकम् ॥ वज्र
वद्दारयत्येतदेकतःपीतमश्मरीम् ॥ १४५ ॥ त्रिफ
लासर्जिकाक्षौरैर्विंघगुल्मप्रभेदनम् ॥ पिप्पली
पिप्पलीमूलंविषंशूलहरंपरम् ॥ १४६ ॥ विषंद्रवंती
मधुकद्राक्षाराम्नासठीकणाः ॥ विषवेल्लामिशि
क्षीरंगुल्मप्लीहानिबर्हणम् ॥ १४७ ॥ प्लीहोदरघ्नंप-
यसाशताह्वाकृमिजिद्विषम् ॥ वायसीमूलकाथेन
पीतंकुष्ठहरंविषम् ॥ १४८ ॥ पयसाराजवृक्षत्वक्
त्रायंतीवाकुचीबलात् ॥ प्लीहघ्नंवाकुचायांचविषं
काथेनकुष्ठजित् ॥ १४९ ॥ अवल्गुजैलाकजया
विडक्षारद्वयंविषम् ॥ लेपस्ससैन्धवःपिष्टोवारि-
णाकुष्ठनाशनः ॥ १५० ॥

भाषानुवादः—सेंधानोंन, और पाषाणभेद युक्त गोमूत्र सग विषको पान करे तो जैसे वज्रपर्वतोंको विदीर्ण करदेताहै तैसे विष पत्थरीको विदीर्ण करदेता है ॥ १४५ ॥ त्रिफला और सज्जीखार सग गुल्मका, पीपलामूल सग शूलका ॥ १४६ ॥ द्रवती, महुआ, दाख, रास्ना, कचूर, पीपल, वायविडग, सोंफ और दूध सग विष गोला और तापतिल्लीका नाश करताहै ॥ १४७ ॥ केवल दूधके साथ विष पीनेसे प्लीहोदर (तापतिल्ली) और सौंफ सग विष सेवनसे कृमिरोगका नाशहोय, कजेकी जडके काथ सग विष सेवनसे कुष्ठभी दूरहोय ॥ १४८ ॥ अमलतासकी छाल त्रायती (त्रायमाणा) वावची, सरेंठी, इनके चूर्णसहित दूध सग, अथवा उक्तौषधियोंसे सिद्धकिये हुए दुग्धसग विषपान करे तो तापतिल्ली दूर होय और उक्तौषधियोंके काथमें सुहागे सहित विषपान करेतो

कुष्ठभी दूर होय ॥१४९॥ एलुवा सज्जीखार और जवाखार सेंवानोन इनके सग विष(सिंगियाविष) मिलाकर पानीसे खरलकर लेप करे तो कुष्ठ दूर होय॥१५०॥

एरंडतैलत्रिफलागोमूत्रंचित्रकंविषम् ॥ सर्पिषा सहितंपीतंवातार्तित्वमपोहति ॥ १५१ ॥ स्वरसं वीजपूरस्यवचाब्राह्मीरसंघृतम् ॥ वंध्यापिबतिस विषंसुपुत्रैःपरिवार्य्यते ॥१५२॥ वीरालांगलिकी दंतीविषपाषाणभेदकैः ॥ प्रयोज्यमूढगर्भाणांप्र लेपोगर्भमोचनः ॥ १५३ ॥ देवदारुविषंसर्पिर्गो मूत्रंकंटकारिका॥ वचावाक्स्खलनंहन्तिबुद्धेश्चप रिवर्धनम् ॥१५४॥ विषंसर्पिःसिताक्षौद्रंतिमिरा पहमंजनम् ॥ विषंचैकमजाक्षीरकल्पितंघृतधूपि तम् ॥ १५५ ॥ विषंधात्रीफलरसैरसकृत्पारिवारि तम् ॥ अंजनंशंखसहितंप्रगाढंतिमिरंजयेत्१५६ विषमिन्द्रायुधंस्तन्येघृष्टंकाचभिदंजनम् ॥ वीज पूररसैर्घृष्टंविषंतद्वत्सितान्वितम् ॥ १५७ ॥ विषं मागधिकाद्वेचनिशेकाचघ्नमंजनम् ॥ शुक्लार्म्मश्च विषंकृष्णायुक्तंगोमूत्रभावितम् ॥ १५८ ॥ भल्ला तकाग्निशम्पाकविषैर्वासूत्रपेषितैः ॥ लेपोविचर्चिं कादद्रुरासिकाकिटिभापहा ॥ १५९ ॥ स्वर्जिका क्षारसिंधूत्थशुक्तशुक्तंवरंविषम् ॥ कर्णयोः पूरणं तीव्रकर्णशूलनिवर्हणम् ॥ १६० ॥ प्रपौंडरीकमं जिष्ठाविषतिंदुसमुद्भवैः ॥ निहन्तिसाधितंतैलंगं

ड्वेणमुखामयान् ॥ १६१ ॥ शालाखदिरकंकोल
जातीकर्पूरचंदनैः ॥ वोलाब्दवालैर्द्विगुणविषैस्सा
रांबुपेषितैः ॥ १६२ ॥ समूत्रवटिकाकल्कसाधृताभ्र
न्तिमुखामयान् ॥ कटुतैलंविषंनस्यंपलिकारुंषि
कापहम् ॥ १६३ ॥ गुंजाटंकणशिग्रुमूलरजनी
शम्पाकभल्लातकस्नुह्यर्कांग्निकरंजसैंधववचाकुष्ठा
भयालाङ्गली ॥वर्षाभूषडभूशिरीषवरणव्योषाश्व
मारोविषंगोमूत्रंशमयेद्विलुप्तमपचीं ग्रंथ्यर्बुदश्लीं
पदान् ॥१६४॥ ग्रंथांतरादिदंलिखितमखिलम् ॥

भाषानुवादः—एरंडतैल, त्रिफला, गोमूत्र, चित्रक, और विषका घृतके साथ पान करे तो वातकी पीडाका नाश होय ॥ १६१ ॥ विजोरेका अगरम वच, ब्राह्मीका रस, नवीनघृत, इनमें विषको युक्त करके पान करनेसे वध्या-स्त्रीभी गर्भवती अवश्य होय ॥ १६२ ॥ सफेद कनेर, कलियारी, दती, वच्छनाग, (विष) और पाषाणभेद इनका लेप करनेमे मूढगर्भकाभी विमोचन (निकलजाना) होय ॥ १६३ ॥ देवदारु, विष (वच्छनाग) कटियाली, और वच इनके सेवनसे जिह्वाके समस्तरोग (विकार) दूरहो और बुद्धि बढे ॥ १६४ ॥ घी, मिश्री, और सहतमे शुद्ध विषको घिसकर नेत्रमे लगावे तो तिमिर (दिनौंधी) दूर होय, यदि केवल विषकोही बकरीके दूधमें घिसकर नेत्रमे आजे और वीकी वूनी दे तोभी तिमिर रोगका नाश होय ॥ १६५ ॥ तथा शखकी नाभीसहित, विषको आवलेके रसकी बहुतसी भावना देकर अजन प्रस्तुत (तयार) करे और उसे नेत्रमें लगावे तो घोर तिमिर रोगकाभी नाश होय ॥ १६६ ॥ हीरा और विषको स्त्रीके दूधमें घिसकर नेत्रमे लगानेसे, अथवा विजोरेके रसमें मिश्री डालकर उसमे विषको घिसकर नेत्रमें लगानेसे ॥ १६७ ॥ तथा छोटीपीपल, दोनों हलदी, और विष इनका अजन बनाकर

१ विषके अनुपानमें जहां२ विष लिखाहै वहां२ शुद्ध कियाहुआ विष लेना चाहिये।

नेत्रमे लगानेसे नेत्रमे जो काचरोग होताहै वह दूरहोत, और छोटी पीपल सग विषको गोमूत्रसे घिसकर नेत्रपे लगानेस शुक्लार्म्म नामक नेत्ररोग दूरहोय ॥ १५८ ॥ भिलावे, चित्रक, अमलतासके गूदे सग विषको पीसकर लेप करनेसे विचर्चिका (व्योंचि) दाद, रसिका, और किटिभकुष्ठ ये सब दूर होय ॥ १५९ ॥ सज्जी, सेधानोन, गिरका, और वाजी, इनके सग वच्छनाग विषको खल करके कानोमे डाले तो कर्णशूल नाश होय ॥ १६० ॥ कमलपुष्प, मजीठ, विष, और कुचला इनसे तेलको बनाकर उसके कुल्ला करे तो समस्त मुखरोग दूरहोय ॥ १६१ ॥ अथवा शालकी छाल, कत्था, कक्कोल, जायफल, भीमसेनकिपूर, चदन, वोल, नागर मोथा और सुगधवाला ये सब ओषधि समान लेवे और उक्त ओषधियोसे दूना विष लेकर सबको खेरसारके पानी ॥१६२॥ ओर गोमूत्रसे खल करके गोलिया बनावे उस गोलीको मुखमें रक्खे तो मुखके समस्तरोग दूर होय, कडवे तेलमे विष मिलाकर नासलेवे तो नासिकाके, पालिका और अक्षिकादि समस्त रोग दूर होय ॥ १६३ ॥ चिरमी (गुमचीगुजा) सुहागा, सहजने (मुगने) की जड, हल्दी, अमल्तास, भिलावा, थूहर, आक, चित्रक, कजा, सेंधानोन, वच, कूठ, हर्ड, कलियारी, वर्षाभू (पुनर्नवा—सॉठी) पटभू, शिरसकी छाल, सोंठ, मिरच, पीपल, कनेर और वच्छनाग (विष) इन सबको गोमूत्रमें पीसकर लगानेसे इद्रलुप्त (मस्तकके वालोके न आने मर्यारोग) अपचीरोग, गाठ, अर्बुद और श्लीपद (हातीपावभी जिसे कहतेहैं) इन सब रोगोका नाश होय ॥ १६४ ॥ ये विषके अनुपानके समस्त श्लोक हमने ग्रथान्तरसे लिखेहैं, इनमें कहीं पाठ अशुद्ध जान पडे तो विद्वान् मुझे दोष न देवें, मैंने जैसा पाठ था वैसाही लिखदियाहै ॥

इति श्रीमत्पण्डितज्ञारसरामविरचित भाषानुवादविभूषितेऽनुपानदर्पणे
मृत्युजयादिरसवातूपधातुपारदादिरसोपरसाना विषस्य-
चानुपानविवेककथने पञ्चम. प्रमोद ॥ ५ ॥

अथातो योगराजगुग्गुलुनारायणचूर्ण-मृत्युंजयादिरसानां निर्म्माणविवेकं व्याख्यास्यामः १ ।

अथ योगराजगुग्गुलुविधिः ।

नागरंपिप्पलीचव्यंपिप्पलीमूलचित्रकैः ॥ भ्रष्टंहिंग्वजमोदंचसर्षपाजीरकद्वयम् ॥१॥ रेणुकेंद्रयवाः पाठाविडंगंगजापिप्पली॥ कटुकातिविषाभार्ङ्गीव-चामूर्वेतिभागतः ॥ २ ॥ प्रत्येकंशाणिकानिस्युर्द्रव्याणीमानिविंशतिः ॥ द्रव्येभ्यस्सकलेभ्यश्चात्रि फलाद्विगुणाभवेत् ॥३ ॥ एभिश्चूर्णीकृतैःसर्वैस्स मोदेयस्तुगुग्गुलुः॥ वंगंरौप्यंचनागंचलोहसारंत-थाभ्रकम् ॥ ४ ॥ मंडूरंरससिंदूरंप्रत्येकंपलसंमि तम्॥गुडपाकसमंकृत्वाइमंदद्याद्यथोचितम् ॥५॥ एकपिंडंततःकृत्वाधारयेद्घृतभाजने ॥ गुटिकाः शाणमात्रास्तुकृत्वाग्रह्यायथोचिताः ॥ ६ ॥ गुग्गु लुर्योगराजोयंत्रिदोषघ्नोरसायनम् ॥मैथुनाहारपा नानांत्यागोनैवात्रविद्यते ॥ ७ ॥ सर्वान्वातामया न्कुष्ठानर्शांसिग्रहणीगदम् ॥ प्रमेहंवातरक्तंचना भिशूलंभगंदरम् ॥८॥ उदावर्तक्षयंगुल्ममपस्मा रमुरोग्रहम् ॥ मंदाग्निश्वासकासांश्चनाशयेदरुचिं तथा ॥ ९ ॥ रेतोदोषहरःपुंसांरजोदोषहरः स्त्रि याम् ॥ पुंसामपत्यजनकोवंध्यानांगर्भदस्तथा ॥ १० ॥

भाषानुवादः—अब इसके आगे योगराजगुग्गुल, नारायणचूर्ण, और मृत्युंजय आदि रसोंको बनानेके विवेकको वर्णन करेंगे—प्रथम योगराजगुग्गुल बनानेकी विधि वर्णन करतेहै—१ सोंठ, २ छोटीपीपल, ३ चव्य (चव) ४ पीपलामूल, ५ चित्रक, ६ अग्निपक्क हींग, ७ अजमोदा, ८ सर्षप (शिरस—सरसों) ९ सपेदजीरा, १० कालाजीरा, ॥ १ ॥ ११ रेणुकबीज, १२ इन्द्रजव, १३ पाठा, १४ बायविडंग, १५ गजपीपल, १६ कुटकी, १७ अतीस, १८ भारंगी, १९ वच और, २० मूर्वा ॥ २ ॥ यह २० प्रत्येक औषध शाण २ (४ मासे) प्रमाण लेवे और इन उक्त सर्व औषधियोंसे दूना त्रिफला लेकर ॥ ३ ॥ सबका चूर्ण करे पश्चात् इस चूर्णके समान (बराबर शुद्धगुग्गुलु और वंगभस्म, रौप्यभस्म, नागभस्म, लोहभस्म, अभ्रकभस्म, ॥४॥ मंडूर और रससिंदूर ये सात भस्म पल २ प्रमाण लेवे, पश्चात् गुडकी चासनी-की तुल्य शुद्ध गुग्गुलकी चासनी बनाकर पूर्वोक्त औषधियोंका चूर्ण और उक्त-भस्मोंको उस शुद्ध गुग्गुलकी चासनीमें मिलावे ॥५॥ जब वे सब मिलकर एक पिंड बनाजावे तब उसकी चार मासेकी गोलिया बनाकर उन्हे घीकी मटकीमें रक्खें और उसमेंसे जितनी रोगीको सेवन करना योग्य समझे ग्रहण करे ॥६॥ इसे योगराजगुग्गुलु कहतेहैं, यह त्रिदोषको दूर करनेवाला और रसायन (आयु, बल, बुद्धि वृद्धिकारक और रोगसंहारक) है, इसके सेवनमें मैथुन (स्त्रीसंग) तथा किसी पदार्थके खाने पीनेकी मनाई नहीं है ॥ ७ ॥ यह योगराजगुग्गुलु समस्त वातजन्य रोगोंका, कुष्ठोंका, अर्शो (मूलव्याधि) मसोंका ग्रहणी (संग्रहणी) प्रमेह, वातरक्त, नाभिशूल, भगंदर ॥ ८ ॥ उदावर्त, क्षयी, गुल्म, अपस्मार (मृगी) उरग्रह, मंदाग्नि, श्वास, कास, और अरुचि इतने रोगोंका नाश करताहै ॥ ९ ॥ यह योगराजगुग्गुलु पुरुषोंके वातुविकार स्त्रियोंके रजो-धर्मसंबंधी विकारोंको हरण करनेवाला तथा पुरुषोंकी धातुवृद्धिद्वारा पुरुषोंको पुत्र और वंध्या स्त्रियोंकोभी गर्भ देनेवाला है ऐसा शार्ङ्गधरके दूसरे खंड के ७ वे अध्यायमें लिखाहै ॥ १० ॥

---

१ दशमूलके अथवा त्रिफलाके साथमें गुग्गुलको शुद्ध करके लेना चाहिये ।

अथ नारायणचूर्णविधिः ।

चित्रकस्त्रिफलाव्योषंजीरकंहपुषावचा ॥ यवानी पिप्पलीमूलंशतपुष्पाजगंधिका ॥ ११ ॥ अजमो दाशठीधान्यंविडंगंस्थूलजीरकम् ॥ हेमाह्वापौष्क रंमूलंक्षारौलवणपञ्चकम् ॥ १२ ॥ कुष्ठंचैतिसमां शानिविशालास्याद्विभागिका ॥ त्रिवृत्त्रिभागा विज्ञेयादन्त्याभागत्रयंभवेत् ॥१३॥ चतुर्भागासा तलास्यात्सर्वाण्येकत्रचूर्णयेत् ॥ पाचनस्नेहनाद्यै श्चस्निग्धकोष्ठस्यरोगिणः ॥ १४ ॥ दद्याच्चूर्णंविरे कायसर्वशूलव्रणाशनम् ॥ हृद्रोगेपाण्डुरोगेचका सेश्वासेभगंदरे ॥ मंदाग्नौचज्वरे कुष्ठेग्रहण्यांच गलग्रहे ॥ १५ ॥ शार्ङ्ग० खं० २ अ० ६ ॥

भाषानुवादः—अथ नारायणचूर्ण बनानेकी विधि वर्णन करतेहैं- १ चित्रक, २ त्रिफला, ३ सोठ, ४ मिरच, ५ पीपल, ६ जीरा, ७ हपुषा (हाऊबेर), ८ वच, ९ अजवान, १० पीपलामूल, ११ बडीशोंफ, १२ वनतुलसी, ॥ ११ ॥ १३ अजमोदा, १४ कचूर, १५ वनियॉ, १६ बायविडंग, १७ कलौंजी, १८ चोग्व, १९ पोकरमूल, २० सज्जीखार, २१ जवाखार, २२ पाचों नोन, ॥ १२ ॥ और कूठ यह २७ औषध बराबर, एकएकभाग तथा इंद्रायन दो-भाग, निसोत तीनभाग, तथा दंती (दात्युणी) भी तीनभाग ॥ १३ ॥ ४ चारभाग पीले थूहरकी जड अथवा पीला थूहरही लेवे, पश्चात् उक्त समस्त औषधोंको कूटके महीन कपडछान चूर्ण बनावे और रोगीको प्रथम पाचन

---

१ इसे महाराष्ट्रभाषामें शेरणीभी कहतेहैं, यह नदीके समीप होतीहै प्रसिद्धहै ।

२ थूहर के प्रकारका होताहै पर नारायणचूर्णमें कौडीदार थूहर जिसकी शाखें काटी जानेसे दो निकलती हैं कुछ पीतापनभी रहताहै उसे लेना चाहिये ।

अनतर स्निग्ध (घृत) पान विधिपूर्वक कराके जब उसका कोठा सचिक्कण हो-
जावे तब यह नारायणचूर्ण रेचन (दस्त) होनेके लिये देवे, इससे सब
प्रकारके शूल हृद्रोग, पाडु, कास, श्वास, भगदर, मदाग्नी, ज्वर, कुष्ठ, सग्रहणी
और गलग्रह आदि समस्त रोग दूर होतेहैं ॥ १५ ॥ ऐसा शार्ङ्गधरके दूसरे
खडके ६ वे अध्यायमे लिखाहै ॥

अथ मृत्युंजयरसनिर्म्माणविधिः ।

अव्यक्तः सिद्धिदश्शुद्धो रोगघ्नः कीर्तिवर्द्धनः ॥
यशःप्रदश्शिवःसाक्षान्मृत्युञ्जयरसःस्मृतः ॥१६॥
विषस्यैकंतथाभागंमरिचंपिप्पलीकणा ॥ गन्ध-
कस्यतथाभागंभागंस्याट्टङ्कणस्यच ॥१७॥ सर्वत्र
समभागंस्याद्धत्तूरस्तुद्विभागिकम् ॥ चूर्णये
त्खल्वमध्येतुमुद्गमानांवटीश्चरेत् ॥ १८ ॥ जंबी-
रस्यरसेनात्रकार्यहिङ्गुलशोधनम् ॥ रसश्चेत्समभ
भागःस्याद्घृतंगुलंनेष्यतेतदा ॥ १९ ॥ गोमूत्र
शोधितंचात्रविषंसौरविशोधितम् ॥मृत्युरूपंज्व-
रंहन्तिमृत्युञ्जयरसस्स्मृतः ॥ २० ॥ तीव्रज्वरे
महाघोरेपुरुषेयौवनान्विते ॥ पूर्णमात्राप्रदातव्या
पूर्णवटीचतुष्टयम् ॥ २१ ॥ स्त्रीबालवृद्धक्षीणेषु-
ह्यर्द्धमात्राप्रकीर्तिता ॥ अतिवृद्धेचक्षीणेचशिशौ
चाल्पवयस्यपि ॥ २२ ॥ तुर्य्यमात्राप्रदातव्या-
व्यवस्थासारनिश्चिता ॥ नवज्वरेमहाघोरेयामैका
नाशयेद्ध्रुवम् ॥ २३ ॥ मध्यज्वरेतथाजीर्णेत्रिरा-
त्रान्नाशयेद्ध्रुवम् ॥ ससाहात्सन्निपातोत्थंज्वरंजी

र्णकसंज्ञकम् ॥ २४ ॥ रसेन्द्रसारसंग्रहेज्वराधि कारेह्युक्तमिदम् ॥

भाषा०—अब मृत्युजयरस बनानेकी विधि वर्णन करते हैं अतुलित प्रभाव युक्त सिद्धिप्रद निर्मल (दोषरहित) रोगनाशक, कीर्तिविकाशक, यश देनेहारा, कल्याणस्वरूप यह मृत्युजय रस है ॥ १६ ॥ इसको इस प्रकारसे बनाना चाहिये—१ भाग विष (वच्छनाग) १ भाग कालीमिरच १ भाग छोटीपीपल १भाग शुद्ध आवलासार गंधक १ भाग शुद्ध सुहागा ॥ १७ ॥ ये सब समान लेवे और हिंगुल २ भाग लेवे पश्चात् सबको नागरबेलीके पानके रसमें अथवा अदरकके रसमें खल करके मूगके बराबर गोलिया बनावे ॥ १८ ॥ इस मृत्युजय रसमे जो हिंगुल डाले सो जंबीरीके रससे शुद्धकरके डाले, यदि सब औषधियोंके समान १ भाग शुद्धपारही डाले तो फिर हिंगुलको न डाले॥१९॥ और विष (वच्छनाग) जो इसमें डाले उसेभी गोमूत्रमें शुद्धकरके धूपमे सुखा कर डालना चाहिये, इसप्रकारसे बनायाहुआ यह रस मृत्युरूप ज्वरका नाश करताहै इसीलिये इसको मृत्युजयरस कहतेहैं ॥ २० ॥ यदि रोगी तरुण (जवान) अवस्थावाला हो तो उसे अतिवेगयुक्त भयकर ज्वरमेंभी इस मृत्युजयरसकी पूर्ण मात्रा देनी चाहिये, चारगोलीकी पूर्ण (पूरी) मात्रा इस रसकी होतीहै ॥२१॥ स्त्री, बालक, वृद्ध, और क्षीणरोगीको अर्द्धमात्रा (२ गोली) तथा अत्यत बूढेको, अत्यत क्षीणको और अति छोटेबालकको ॥२२॥ उक्त रसकी चौथाई मात्रा (१ गोली,) ही देनाचाहिये, क्योंकि मात्राका नियम अवस्थानुसारही निश्चय कियागयाहै—नवीन महाभयकर ज्वरको १ प्रहरमे ॥ २३ ॥ मध्यज्वरको अजीर्णज्वरको पुराणज्वरको, ३दिनमे, सन्निपातको और जीर्णज्वरको ७दिनमें यह मृत्युजयरस दूर करताहै ॥ २४ ॥ ऐसा रसेन्द्रसारसग्रहके ज्वराधिकारमें लिखाहै.

---

१ ज्वर आगमनसे ७ दिनतक तरुण (नवीन) ज्वर ७ दिनसे १४ दिनतक मध्यज्वर १५ दिनसे २१ दिनतक पुराणज्वर और २१ दिन पश्चात् जीर्णज्वर कहाताहै ।

अथ वसन्तकुसुमाकररसनिर्म्माणविधिः ।

प्रवालरसमौक्तिकांवरमिदंचतुर्भागभावपृथक्पृ थगथस्मृतेरजतहेमनीद्वयंशके ॥ अथोभुजगरंग कंत्रिलवकंविमर्द्याखिलं शुभेहानिविभावयेद्भिष गिदंधियासर्वशः ॥ २५ ॥ द्रवैर्वृषनिशेक्षुजैः कमलमालतीपुष्पजैः पयःकदलिकंदजैर्मलयजै णनाभ्युद्भवैः ॥ वसन्तकुसुमाकरोरसपतिर्द्विव ल्लोन्मितस्समस्तगदहृद्भवेत्किलानिजानुपानैरय म् ॥ २६ ॥ ग्रथान्तरतः ॥

भाषानुवादः-अब वसन्तकुसुमाकर रस बनानेकी विधि वर्णन करते है. मूगा, चद्रोदय, मोती और अभ्रकभस्म ये प्रत्येक ४ भाग (४ तोले) लेवे रूपेकी और सोनेकी भस्म २ भाग (दोदोतोला) पृथक् २ लेवे लोहभस्म (सार) सीसेकी भस्म, और वगभस्म (रागेकी भस्म) ये प्रत्येक तीनभाग (तीन तीन तोले) लेवे पश्चात् शुभदिन सुमुहूर्तमें वैद्य इन सबको एकत्रकर खल (खलपत्ते) में डाले और निम्न लिखित रसोकी यथायोग्य अपनी बुद्धिसे विचारके भावन देवे ॥ २५॥ अडूसा, हलदी, साठेका रस, कमलपुष्प, मालतीपुष्प, गोदुग्ध, केलाकद, चदन, और कस्तूरी इनमेंसे जिसका रस निकलसके उनके रसकी और जिनका रस न निकलसके उनकी वैसेही भावना देनेसे सब रसोका राजा यह वसत्कुसुमाकर रस बतनाहै इसकी ४ रत्तीकी मात्रा न्यारे २ अनुपानोके साथ देनेसे समस्त रोगोंका नाश होय ॥ २६ ॥ ऐसा ग्रथातरमें लिखाहै

अथ लोकनाथरसनिर्म्माणविधिः ।

शुद्धोवुभुक्षितस्सूतोभागद्वयमितोभवेत् ॥ तथा गंधस्यभागौद्वौकुर्य्यात्कज्जलिकांतयोः ॥ २७ ॥ सूताच्चतुर्गुणेप्वेवकपर्दंपुविनिःक्षिपेत् ॥ भागैकंटं

कणंदत्त्वागोक्षीरेणविमर्दयेत् ॥ २८ ॥ तथाशंख स्यखण्डानांभागानष्टौप्रकल्पयेत् ॥ क्षिपेत्सर्वं पुटस्यान्तश्चूर्णलिप्तशरावयोः ॥ २९ ॥ गर्तेहस्तो न्मितेधृत्वापचेद्गजपुटेनच ॥ स्वांगशीतंसमुद्धृ त्यपिष्ट्वातत्सर्वमेकतः ॥ ३० ॥ षड्गुंजासंमितं चूर्णमेकोनत्रिंशदूषणैः ॥ घृतेनवातजेदद्यान्नवनी तेनापित्तजे ॥ ३१ ॥ क्षौद्रेणश्लेष्मजेदद्यादतीसा रेक्षयेतथा ॥ अरुचौग्रहणीरोगेकाश्र्येमंदानलेत था ॥ ३२ ॥ कासेश्वासेषुगुल्मेषुलोकनाथोरसो हितः ॥ तस्योपरिघृताक्तंचभुंजीतकवलत्रयम् ॥ ॥३३॥ मंचेक्षणैकमुत्तानःशयीतानुपधानके ॥ अ नम्लमन्नंसघृतंभुंजीतमधुरंदधि ॥ ३४ ॥ प्रायेण जांगलंमांसंभेदयंघृतपाचितम् ।सुदुग्धभक्तंदद्या च्चजातेग्नौसाध्यभोजने ॥३५॥ सघृतान्मुद्गवटका न्व्यंजनेष्वेवचारयेत् ॥ तिलामलककल्केनस्ना पयेत्सर्पिषाथवा ॥ ३६ ॥ अभ्यंजयेत्सर्पिषाचस्ना नंकोष्णोदकेनच ॥ कचित्तैलंनगृह्णीयान्नविल्वं कारवेल्लकम् ॥ ३७ ॥ वार्ताकुंशफरींचिंचांत्यजे द्व्यायामंमैथुनम् ॥मद्यंसंधानकंहिंगुशुण्ठीमाषा न्मसूरकान् ॥ ३८ ॥ कूष्मांडंराजिकांकांपकांजि कंचैववर्जयेत् ॥ त्यजेदयुक्तनिद्रांचकांस्यपात्रेच भोजनम् ॥ ३९ ॥ ककारादियुतंसर्वंत्यजेच्छाक

फलादिकम् ॥ पथ्योऽयंलोकनाथस्तुशुभनक्षत्रवा
सरे ॥४०॥ पूर्णातिथौशुक्लपक्षेजातेचंद्रबलेतथा॥
पूजयित्वालोकनाथंकुमारींभोजयेत्ततः ॥ ४१ ॥
दानंदद्याद्विघटिकामध्येग्राह्योरसोत्तमः ॥ रसा
त्संजायते तापस्तदाशर्करयायुंतम् ॥४२॥ सत्त्वं
गुडूच्यागृह्णीयाद्वंशरोचनयायुतम् ॥ खर्जूरंदाडि
मंद्राक्षामिक्षुखंडानिचारयेत् ॥ ४३ ॥ शार्ङ्ग०
खं० अ० १२ ।

भाषानुवादः—अब लोकनाथरसके बनानेकी विधि वर्णन करते हैं २ भाग शुद्ध जो बुभुक्षित[1] पारा—और १ भाग शुद्ध गंधक इन दोनोंको मिलाकर खरल करे जब इनकी कज्जली बन जावे तब ॥ २७ ॥ पारेसे चौगुनी कौडियोंमें वह कज्जली भरे पश्चात् १ भाग सुहागा लेकर उसे गोदुग्धमें खल करके उन कौडियोंके मुखपर लगावे कि जिससे उन कौडियोंमें भरी हुई कज्जली बाहर न निकलने पावे ॥ २८ ॥ पीछे ८ भाग शखके टुकडे लेके मट्टीके दो सिकोरे (शराई) जिसको भीतर चूनेसे पोत (लीप) देवे और इन चूनेसे पोतेहुए दो सिकोरेमेंसे एकसिको-रेमें शखके ८ भाग टुकडोमेसे आधे टुकडे भरकर उनपर वे कज्जली भरीहुई कौटिया रखकर उनके ऊपर जो शखके शेष (आधे) टुकडे रहे सो रखके पश्चात् दूसरा सिकोरा ऊपरसे ढाककर इस संपुटके मुखको कपडमट्टीसे दृढ बधकरके ॥ २९ ॥ १ हाथ गहरे खड्डे (गड्ढे) मे उस सपुटको रखकर

---

१ बुभुक्षित पारा उसे कहतेहैं जो गधक आदिके जारणसे सुवर्णादि धातुओंके योग्य होय ।

२ सपुट उसे कहतेहैं जो दोना शराई (सिकोरे) के मुख मिलाकर बद किया जावे पर सपुट करनेके मट्टीके सिकोरोको प्रथमही पाषाणपर युक्तिसे ऐसे घिसलेने चाहिये कि जिससे दोनों सिकोरोकी कोरे ऐसी मिलजावे कि जिसमे सधिमात्र न रहे।

अनुपानदर्पणः ।

गजेपुटसे पकावे (आचदेवे) जब पूर्ण शीतल होजावे तब उस सपुटमेंसे शखके टुकडोंकी और कज्जली भरीहुई कौडियोंकी समस्त भस्म एकत्रकर खलमें महीन पीसलेवे ॥ ३० ॥ इसे-लोकनाथरस कहते हैं इसमेंसे ६ रत्ती मात्र लेकर उसमे २९ काली मीरचीके चूर्णको मिलाकर घीके सग वातरोगमें नवनीत (माखन) के सग पित्तरोगमे ॥ ३१ ॥ और सहत सग कफरोगमे देवे तो उक्त समस्त रोग दूर होय, तथा अतिसार, क्षयी, अरुचि, सग्रहणी, कृशता, मदाग्नि ॥ ३२ ॥ कास, श्वास और गुल्म इन रोगोंपरभी यह लोक नाथरस अतिहितप्रद है इसको सेवन करनेवाला निम्नलिखित प्रकारसे आहार विहारका वर्ताव रक्खे उक्त रसकी पूर्वोक्त मात्रा लेकर उसपर घृतसहित चावलोंके २ ग्रास (कवल) लेवे ॥ ३३ ॥ पश्चात् मच (खाट) पर तकिया गद्दी (बिछौने) बिनाही एकक्षणभर सीधा सोवे—खटाईको छोडकर घृतसहित मिष्टान्न और मीठे दहीकोभी खावे ॥ ३४ ॥ मासाहारी (मासखानेवाले मनुष्य) को जागल (हरिणआदि जागलदेशज जीवोंका) घृतपक्कमासभी खानेको देवे और सायकालके भोजनके समय यदि जठराग्नि प्रदीप्त होवे, (अच्छी भूख लगे) तो दूध चावल खानेको देवे ॥ ३५ ॥ और मुख अच्छा होने तथा रुचि बढानेके लिये व्यजनोकी जगह घीमें बनाये (तले) हुए मूगके बडे खावे, तिल और आवलोंको पीसकर उनके कल्प (पीठी) से अथवा घृतसे ॥ ३६ ॥ शरीरको मलकर कुछ (अल्प) गरमपानीसे स्नान करे और तेलको खानेपीने शरीरके लगानेमें कदापि स्वीकार न करे. बील, करेले ॥ ३७ ॥ कटेलीका फल, मछली, अमली, व्यायाम, (कसरत) स्त्रीसग, (मैथुन) मदिरा, सधीन हींग सोंठ, उडद, मसूर, ॥ ३८ ॥ कोहला, राई, काजी, अयोग्यनीद, कासेके पात्रमें भोजन ॥ ३९ ॥ जिनके नामके आदिमें ककारहो ऐसे शाक और फल इन सबको त्यागन कर (छोड,दे

१–३० अगुल (सवाहाथ) का एक शकु बनाके उसीके प्रमाण लबा चौडा गहरा गड्ढा खोदके उसमें ५०० गोबरी (आलनेकडा) भरके उन कडोंपर सपुट रखके ऊपरसे पुन. ५०० पूर्वोक्त गोबरी भरके आच देवे इसे गजपुट कहतेहैं।

२ सवान, यह भी एक मदिरा (मद्य, दारु, शराब, बराडी) का ही भेद है.

लोकनाथरसका पथ्य वर्णन कियाहे, प्रथमारंभक दिन शुभ नक्षत्र शुभ
॥ ४० ॥ पचमी, दशमी, पूनोतिथि, शुक्लपक्ष, और चंद्रबलयुक्त
तम मुहूर्तमें लोकनाथ (परमेश्वर और उत्तरस) का पूजन करके ब्राह्मणों
ाजन कराके ॥ ४१ ॥ ओर स्वशक्त्यनुसार दोवटी पर्यन्त अन्न, वस्त्र पुस्त
ुस्तक, छत्र, भूमि, गो आदिका दान देकर, इस लोकनाथरसको ग्रहण करना
चाहिये, यदि इसके ग्रहण करनेपर कुछ उष्णता (ताप) हो तो, मिश्री ॥ ४२
गुरच (गिलोय) सत्त्व और वंशलोचन इनको मिलाके ग्रहण करे अथवा
खर्जूर, अनार, दाख, और इक्षु [साठे] के टुकडे इन्होंमेंसे किसीकेभी साथ
करे ॥४३॥४४॥ ऐसा शार्ङ्गधरके दूसरेखंडके १२ वे अध्यायमें लिखा है

अथ स्वर्णमालिनीवसन्तरसनिर्माणविधिः ।

स्वर्णमुक्तादरदमरिचंभागवृद्ध्यागृहीतं ग्वर्प
र्ण्यष्टौग्रथसमखिलंमर्दयेन्मृत्क्षयेण ॥ यावत्स्नेहो
व्रजतिविलयंमर्दनेदीयतेऽसौ । गुंजाद्वंद्वंमधुमग
धयामालिनीप्राग्वसंतः ॥ ४५ ॥ ग्रं० त० ।

भाषानुवादः--अब स्वर्णमालिनीवसंतरसके बनानेकी विधि वर्णन करते हैं, १ मासा सुवर्णपत्र (सोनेकेवर्क) २ मासे अनॅवींधे मोती २ मासे सिंगरफ ४ मासे कालीमिरच ८ मासे शुद्ध खपरिया इन सबको १ प्रहर पर्यंत मकखनसे खरल करे (खलपत्तेमें घोटे) पश्चात् महिन छिलकेवाले (कागजी) निंबूके रससे जबतक मक्खनकी चिकनाई दूर न हो तबतक घोटे, चिकनाई दूर होनेपर इसकी टिकिया बनालेवे इसे स्वर्णमालिनीवसंतरस कहतेहैं इस रसको पीपल और सहत संग २ रत्तीमात्र देवे तो सर्व रोग दूर होंयँ ॥ ४५ ॥

अथ वृहन्मालिनीवसन्तरसनिर्म्माणविधिः ।

वैक्रांतमभ्रंरवितार्प्यरौप्यंगंधःप्रवालंरसभस्मलो
हम् ॥ सटंकणंशंखुकभस्मसर्वंसमस्तमेतच्चवरी

गजपुटमें पकावे (आनदेवे) जब पूर्ण शीतल होजावे तब उस सपुटमेंसे शखके टुकडेकी और कज्जली भरीहुई कौडियोंकी समस्त भस्म एकत्रकर खलमें महीन पीसलेवे ॥ ३० ॥ इसे-लोकनाथरस कहते हैं इसमेंसे १ रत्ती मात्र लेकर उसमे २९ काली मीरचीके चूर्णको मिलाकर घीके सग वातरोगमे नवनीत (माखन) के सग पित्तरोगमे ॥ ३१ ॥ और सहत सग कफरोगमे देवे तो उक्त समस्त रोग दूर होय, तथा अतिसार, क्षयी, अरुचि, सग्रहणी, कृशता, मदाग्नि ॥ ३२ ॥ कास, श्वास और गुल्म इन रोगोंपरभी यह लोक नाथरस अतिहितप्रद है इसको सेवन करनेवाला निम्नलिखित प्रकारमे आहार विहारका वर्ताव रक्खे उक्त रसकी पूर्वोक्त मात्रा लेकर उसपर घृतसहित चाव लोके ३ ग्रास (कवल) लेवे ॥ ३३ ॥ पश्चात् मच (खाट) पर तकिया गद्दी (बिछौने) बिनाही एकक्षणभर सीधा सोवे—खटाईको छोडकर घृतसहित मिष्टान्न और मीठे दहीकोभी खावे ॥ ३४ ॥ मासाहारी (मासखानेवाले मनुष्य) को जागल (हरिणआदि जागलदेशज जीवोंका) घृतपक्कमासभी खानेको देवे और सायकालके भोजनके समय यदि जठराग्नि प्रदीप्त होवे, अर्थात् भूख लगे) तो दूध चावल खानेको देवे ॥ ३५ ॥ और मुख अच्छा होने तथा रुचि बढानेके लिये व्यजनोंकी जगह घीमें बनाये (तले) हुए मूगके बडे खावे, तिल और आवलोंको पीसकर उनके कल्प (पीठी) से नहाया करे ॥ ३६ ॥ शरीरको मलकर कुछ (अल्प) गरमपानीसे स्नान करे और तेलको खानेपीने शरीरके लगानेमे कदापि स्वीकार न करे. वीर्य, रक्षित ॥ ३७ ॥ कटहलका फल, मछली, अमली, व्यायाम, (कसरत) अतिसग, (मैथुन) मदिरा, सोंठान हींग सोंठ, उडद, ममूर, ॥ ३८ ॥ कोदो, मद्य, राजी, अजीर्णनाद, कासेके पात्रमे भोजन ॥ ३९ ॥ जिनको इनके आदिमे लिखाहो ऐसे शाक और फल इन सबको त्यागन कर (छोड,दे

१-२० अगुल (हाथ) का एक शुद्ध नाप उसीका प्रमाण लंबा चौडा और गहरा खोदके उसमें १०० गोबरी (आलेकडा) भरके उन कडोंपर सपुट देके जलावे इस-१०० गोबरी भरके आग देवे इसे गजपुट कहते हैं।

२ मद्य, यह भी इस नदिया (मद्य, दारू, शराब, मदिरा) का ही नाम है.

ह लोकनाथरसका पथ्य वर्णन कियाहै, प्रथमारंभके दिन शुभ नक्षत्र शु-
॥र ॥ ४० ॥ पचमी, दशमी, पूर्णोतिथि, शुक्लपक्ष, और चंद्रबल
उत्तम मुहूर्तमें लोकनाथ (परमेश्वर और उक्तरस) का पूजन करके उन्हांके
भोजन कराके ॥ ४१ ॥ ओर स्वशक्त्यनुसार दोवटी पर्यन्त अन्न जल वस्त्र
पुस्तक, छत्र, भूमि, गो आदिका दान देकर, इस लोकनाथरसको ग्रहण करना
चाहिये, यदि इसके ग्रहण करनेपर कुछ उष्णता (ताप) हो तो, मिश्री ॥ ४२ ॥
गुरच (गिलोय) सत्त्व और वंशलोचन इनको मिलाके ग्रहण करे अथवा
खर्जूर, अनार, दाख, और इक्षु [साठे] के टुकडे इन्होंमेंसे किसीकोभी भक्षण
करे ॥४३॥४४॥ ऐसा शार्ङ्गधरके दूसरेखंडके १२ वे अध्यायमें लिखाहै

अथ स्वर्णमालिनीवसन्तरसनिर्माणविधिः ।

स्वर्णमुक्तादरदमरिचंभागवृद्ध्याग्रहीतं स्वर्ण
र्य्यष्टौप्रथमसखिलंमर्दयेन्मृक्षयेण ॥ यावत्स्नेहो
व्रजतिविलयंमर्दनेदीयतेऽसौ । गुंजाद्वंद्वंमधुमग
धयामालिनीप्राग्वसंतः ॥ ४५ ॥ ग्रं० त० ।

• भाषानुवादः--अब स्वर्णमालिनीवसंतरसके बनानेकी विधि वर्णन करते, १ मासा सुवर्णपत्र (सोनेकेवर्क) २ मासे अनॅवींधे मोती ३ मासे मिगरफ ४ मासे कालीमिरच ८ मासे शुद्ध खपरिया इन सबको १ प्रहर पर्यंत मक्खनसे खरल करे (खलपत्तेमें घोटे) पश्चात् महिन छिलकेवाले (कागजी) निंबूके रससे जबतक मक्खनकी चिकनाई दूर न हो तबतक घोटे, चिकनाई दूर होनेपर इसकी टिकिया बनालेवे इसे स्वर्णमालिनीवसंतरस कहतेहैं इस रसको पीपल और सहत संग २ रत्तीमात्र देवे तो सर्व रोग दूर होंय ॥ ४५ ॥

अथ वृहन्मालिनीवसन्तरसनिर्म्माणविधिः ।

चैकातमभ्रंरवितापयरौप्यंगंधःप्रवालंरसभस्मलो
हम् ॥ सटंकणंशंखुकभस्मसर्वंसमस्तमेतच्चवरी

रजन्योः॥ ४६ ॥ द्रवैर्विमर्द्यमुनिसंख्ययाचकस्तू रिकाशीतकरेणपश्चात् ॥ तदावृहत्पूर्वकमालिनी प्राग्वसंतनामारसदोरसोयम् ॥ ४७ ॥ ग्रं० त०।

भाषानुवादः -अब वृहन्मालिनीवसत रसके बनानेकी विधि लिखते है, वेक्रांत (रत्नविशेष) की भस्म, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, चादीभस्म, शुद्ध गंधक, मुक्ताभस्म, चद्रोदय, लोहभस्म, सुहागा, शङ्खभस्म ये सब बराबर लेके खरल करे पश्चात् शतावरीके रसकी और हलदीके रसकी ॥४६॥ सात २ भावना दे तदनन्तर कस्तूरी और कपूरकी यथायोग्य भावनादेकर अनुमानसे टिकिया बालेवे इसे वृहन्मालिनीवसतरस कहते है यहरस-रस (हर्ष) वैनाश और समस्त रोगोंको दूर करनेवाला है ऐसा ग्रथातरमें लिखा है॥४७॥

अथ पाशुपतरसनिर्म्माणविधिः ।

शुद्धंसूतंद्विधागंधंत्रिभागंतीक्ष्णभस्मकम् ॥ त्रि भिस्समंविमर्द्ययंचित्रककाथभावितम्॥ ४८॥ धूर्त्त बीजस्यभस्मापिद्वात्रिंशद्भागसंयुतम् ॥ कटुत्रयं त्रिभागंस्याद्वचहेलाचतत्समम् ॥ ४९ ॥ जाती फलंतथाकोषभर्द्कंनागंनियोजयेत् ॥ तथाङ्कोलंच पंचास्तुल्यंकरपडत्रिन्तिडी ॥ ५० ॥ अपामार्गा क्षारयंचद्वारंद्द्याद्विचक्षणः॥ हरीतकीयवक्षारं नागरंद्विगुणंक्रमम् ॥ ५१ ॥ टंकणंचसूतत्तु ल्यमेतद्योगंनमर्द्दयेत् ॥ भोजनांते प्रयोक्तव्यो गुणाद्यल्पप्रमाणतः ॥ ५२ ॥ रसःपाशुपतोनाम सर्वःप्रस्वेदकारकः ॥ दीपनःपाचनोद्दिष्टस्सर्वो दरविनाशिकः ॥ ५३ ॥ रसेन्द्रसारसंग्रहेअ- मि[illegible]रिचोक्तमिदम् ॥

भाषानुवादः—अब पाशुपतरसके बनानेकी विधि वर्णन करतेहे, १ भाग शुद्ध पारा २ भाग शुद्ध गंधक ३ भाग कातलोहभस्म और इन सबके बराबर शुद्ध विष (बच्छनाग) लेकर चित्रकके क्वाथमें उक्त सबोंको खरल करे ॥ ४८॥पश्चात् ३२ भाग धतूरेके बीजोंकी भस्म२भाग त्रिकटु (सोंठ, मिरच, पीपल) ३भाग तीनही भाग लोंग ३ भाग इलायची ॥ ४९ ॥आधा भाग जायफल और आधा भाग जायपत्री अर्थात् दोनों मिलकर ३ (तीन)भाग तथा पाचो नोन, थूहर, आक, एरंड इमली ॥ ५०॥ ऊंगा (चिरचिरा, अधाझाडा अपामार्ग) और पीपल इन सबका खार, हर्ड, जवाखार, सज्जी, हींग, जीरा ॥ ५१ ॥और सुहागा ये प्रत्येक शुद्ध पारेके बराबर (एकएक भाग) लेके और इन सबको महिन पीस पूर्वोक्त चित्रकके क्वाथमे खरल किये हुए रसोंमें मिलाकर निंबूके रससे पुन खल करे जब सब घुटकर एक जीव होजावे तब इसे चीनी या कॉचके पात्रमें रक्खे इसमेंसे १ रत्ती भोजनके पश्चात् खिलावे तो ॥ ५२ ॥ यह पाशुपतरस तत्क्षणही अपने गुणको दिखलाता है. यह दीपन, पाचन, हृदयको बलप्रद और विशूचिका (महामारी, हैजेकी बीमारी) का शीघ्रही नाश करनेवाला है ॥ ५३ ॥ ऐसा रसेंद्रसारसग्रहके ज्वराधिकारमें लिखा है

अथ पर्पटीरसनिर्म्माणविधिः ।

रसंत्रिगुणगंधेनमर्दयित्वारसभृंगकम्॥ लोहपात्रे घृताभ्यक्तेद्राविलंवदराग्निना ॥ ५४ ॥ ऊर्ध्वाधो गोमयंदत्त्वाकदल्याःकोमलेदले ॥ स्निग्धेपत्रेह्य योदर्व्यापर्पटाकारतानयेत् ॥ ५५ ॥ पादेलोहे विनिःक्षिप्तेलोहपर्पटिकाभवेत् ॥ ताम्रेपादेविनिः क्षिप्तेताम्रपर्पटिकाभवेत् ॥ ५६ ॥ विषपादंचयुं जीतत्वसाध्येष्वामयेषुच ॥ सुरसायाजयन्त्या श्चकन्यकाढकरूपयोः ॥ ५७ ॥ त्रिफलायामुने

भार्ङ्गर्थामुंड्यात्रिकटुसंज्ञयोः ॥ भृंगराजस्यवहे
श्वप्रत्यहंद्रवभावितम् ॥५८॥ आर्द्रकस्यद्रवेणाथ
सप्तधाभावयेत्पुनः॥ अंगारेस्वेदयेदीषत्पर्पटीरस
मुत्तमम् ॥ ५९ ॥ गुंजाष्टकंददीतास्यताम्बूली
पत्रसंयुतम् ॥ पिप्पलीरसकैश्चापिनिर्गुंड्याह्यनु
पाययेत् ॥ ६० ॥ त्रिकंटकस्यमूलानिशुंठींछित्त्वा
विनिःक्षिपेत् ॥ अजाक्षीरेसनीरार्द्धयावत्क्षीरंवि
पाचयेत् ॥ ६१ ॥ तत्क्षीरंपाययेद्रात्रौसकणंभोज
येदपि ॥ कूष्मांडंवर्जयेच्चिंचाबृंताकंकर्कटीमपि
॥ ६२ ॥ आरनालंचतैलंचमैथुनंचविवर्जयेत् ॥
मासत्रयंतुसेवेतकासश्वासापनुत्तये ॥ ६३ ॥

भाषानुवादः—अब पर्पटीरसके बनानेकी विधि वर्णन करते हैं—४ तोले शुद्ध पारा और १२ तोले शुद्धगंधक लेकर इन दोनोंको खल करे, जब कज्जली होजावे तब उस भगरेके रसमें घोटे, फिर घीसे चुपेडेहुए लोहपात्रमें भगरेके रसमें घुटीहुई कज्जलीको डालकर बेरीकी लकडीकी आंच देके पिघलावे॥५४॥ फिर [illegible] पर गोबर बिछाकर उस गोबरपर उत्तम चिकना केलेका [illegible] इस केलेके पत्तेपर पिघली हुई कज्जलीको डाल देवे और उसके ऊपर दूसरा पत्ता धरकर उसी पुनः गोबर डालकर ऐसे प्रकारसे [illegible] इस पिघली हुई कज्जली पर्पटीके समान बन जावे ॥ ६१ ॥ [illegible] चौथा भाग लोहरस मिलानेसे, लोहपर्पटी, और ताम्ररस [illegible] ताम्रपर्पटी कहलाती है॥६२॥ पश्चात् इस पर्पटीस तत्तुल्य [illegible] निसोत, निशोत्तर, तुलसी, अरनी (अग्निमंथ) गोखरू [illegible] ॥ निसोत, अगस्ति, भारंगी, गोभमुंडी, [illegible] इनके रसकी तथा काथकी एकएक भावना

देवे ॥ ५८ ॥ फिर अदरकके रसकी ७ भावना देकर अगारपर कुछ स्वेदन करके रक्खे, यह असाध्य रोगोंपरभी उत्तम पर्पटी रसहै ॥ ५९ ॥ इस रसकी १ मासे भरकी मात्रा पानमें अथवा १० पिपलीके चूर्ण सग देवे और ऊपरसे निर्गुंडीके रसको ॥ ६० ॥ अथवा गोखरूकी जड और सोंठको बकरीके दूधमें डालकर उससे आधा पानी मिलाकर औटावे जब दूधमात्र शेष रह जावे तब छानकर ॥ ६१ ॥ पीपलीयुक्त इस दूधको रात्रिके समय पिलावे और उत्तम प्रकारका भोजन करावे तो वह पुरुष रोगरहित दिव्यदेह होय. इस रसको सेवन करनेवालेने कूष्माड (कोहला) इमली बैंगन, ककडी ॥ ६२ ॥ काजी, तेल और मैथुन (स्त्रीसग व्यवाय) इनको त्याग्न (छोड) ही देवे. इस पर्पटीरसका यदि ३ मास पर्यंत सेवन करे तो समस्त कास और श्वासभी दूर होयँ ॥ ६३ ॥ ऐसा प्रथातरमें लिखा है ।

अथ जयावटीनिर्म्माणविधिः ।

विषंत्रिकटुकंमुस्तंहरिद्रानिम्बपत्रकम् ॥ विडंग मष्टमंचूर्णछागमूत्रैस्समंसमम् ॥ चणकाभा वटीकार्यास्याज्जयायोगवाहिका ॥ ६४ ॥ रसेंद्र० सं० ज्वराधि० ॥

भाषानुवादः—अब जयावटीके बनानेकी विधि वर्णन करते हैं. शुद्ध विष (सिंगया) त्रिकटु (सोंठ, मिरच, पीपल) नागरमोथा, हलदी, नींबके पत्ते और वायविडग ये आठों समान लेकर इनका महीन चूर्ण बनावे फिर, उनको बकरीके मूत्रमें खल करके चनेके बराबर वटी (गोलिया) बनावे इसे जयावटी कहते हैं, यह पृथक् २ अनुपानोंसे अनेक रोगोंको दूर करती है ॥६४॥ ऐसा रसेंद्रसारसग्रहमे ज्वराधिकारमे लिखाहै ॥

अथ जयंतीवटीनिर्म्माणविधिः ।

विषंपाठाश्वगंधाचव्यचातालीशपत्रकम् ॥ मरीचं पिप्पलीनिम्बमजामूत्रेणतुल्यकम् ॥ वटिकापूर्ववच

त्कार्य्याजयन्तीयोगवाहिका ॥ ६५ ॥ रसे० संग्र० ज्व० अ० ॥

भाषानुवादः—अब जयतीवटीके बनानेकी विधि वर्णन करते हैं. शुद्ध गि पाठा, असगंध, वच, तालीशपत्र, कालीमिरच, छोटीपीपल, और निव इन आठों औषधोंको समान लेकर इनका कपडछान चूर्ण बनावे और उस चूर्णको बकरीके मूत्रमें खल करके चनेके समान वटिया बनावे इसे जयतीवटी कहते हैं. यहभी पृथक् अनुपानोंसे अनेक रोगोंको दूर करती है उक्त दोनों वटीमें समान ही औषध और इन दोनोंके समानही अनुपान होनेसे उक्त दोनो वटी योगवाही (साथी रचनेवाली) हैं, इसीलिये इनको जयाजयन्ती वटी ऐसा एकसाथभी कहसक्ते हैं ॥ २६ ॥ ऐसा रसेंद्रसारसंग्रहमें ज्वराधिकारमें लिखा है ॥

विवेचन—हमने जो इस अष्टमे तरंगमें गुग्गुलुचूर्ण, रस और वटी वर्णन कीहैं उनके पृथक् २ अनुपान पूर्व (४ थे तथा ५ वे तरंगमें) ही देचुके हैं जिसे पाठक महाशय वहांसे विचारलेंगे

इति श्रीमद्गोविन्दभगवत्पादशिष्यश्रीमच्छंकरभगवत्पादविरचिते भाषानुवाद-
विभूषितानुपानदर्पणे पारदाद्यगुग्गुल्वन्तानां-
शुद्धयादिरसनिर्माणविवेक-
स्तथैव पञ्चमः प्रमोदः ॥ ९ ॥

अथानोधानव-नानुस्रोतसरत्नोपरत्नविषोपनि
षाणांशोधनमारणनिरूपणाख्यो नाम्यामः ॥ १ ॥

१ अथातो धानव.—ध्यर्कपंचनागंचरुंयशदमेव च॥
नीलेंद्रचमनंधातवोगिरिसंभवाः ॥ २ ॥

२ रुंयशदनःसतोपधातवःस्वर्णमाक्षिकंतारमाक्षिकम्॥
चूर्वंचवर्गीविधानिरुद्धश्चशिलाजतु: ॥ ३ ॥

३ रसः-रसायनार्थिभिर्लोकैःपारदोरस्यतेयतः ॥
ततोरसइतिप्रोक्तस्सचधातुरपिस्मृतः ॥ ४ ॥

४ उपरसाः-गन्धोहिङ्गुलमभ्रतालकशिलास्रोतोऽञ्ज
नंटङ्कणम् ॥ राजावर्तकचुम्बकौस्फटिकयाशं
खःखटीगैरिकम् ॥ कासीसंरसकङ्कपर्दासिक
तावोलश्चकंकुष्ठकम् ॥ सौराष्ट्रीचमताअमीउ
परसास्सूतस्यकिंचिद्गुणैः ॥ ५ ॥

५ रत्नानि-वज्रंगारुत्मकंपुष्परागोमाणिक्यमेवच ॥
इन्द्रनीलश्चगोमेदस्तथावैदूर्य्यमित्यपि ॥
मौक्तिकंविद्रुमश्चेतिरत्नान्युक्तानिवैनव ॥ ६ ॥

६ उपरत्नानि-उपरत्नानिकाचश्चकर्पूराश्मातथैवच ॥
मुक्ताशुक्तिस्तथाशङ्खइत्यादीनिबहून्यपि ॥ ७ ॥

७ विषाः-विषंतुगरलःक्ष्वेडस्तस्यभेदानुदाहरे ॥
वत्सनाभःसहारिद्रःसक्तुकश्चप्रदीपनः ॥ ८ ॥
सौराष्ट्रिकःशृङ्गकश्चकालकूटस्तथैवच ॥
हालाहलोब्रह्मपुत्रोविषभेदाअमीनव ॥ ९ ॥

८ उपविषाः-अर्कक्षीरंस्नुहीक्षीरंतथैवकरिहारिका ॥
कर्वीरकोऽथधत्तूरः पञ्चचोपविषाः स्मृताः॥ १० ॥

भा० प्र० पू० खं० १ भा० ॥

भाषानुवादः-अब इसके आगे धातु, उपधातु, रस,उपरस, रत्न,उपरत्न, विष और उपविषोंके शोधन और मारण (भस्मकरने) का विवेक (विचार) वर्णन करेंगे ॥ १ ॥

१ सातधातु–१ सोना २ चादी ३ तांबा ४ राग (कथील) ५ जस्ता ६ सीसा और ७ लोहा ये पहाडोंसे उत्पन्न होनेवाले सात धातु हैं ॥ २ ॥

२ उपधातु–१ सोनामक्खी २ रूपामक्खी ३ नीलाथोथा ४ कांसा ५ पीतल ६ सिंदूर और ७ शिलाजीत ये सात उपधातुएँ हैं ॥ ३ ॥

३ रस–जरा रोगरहित और बल बुद्धि वृद्धिसहित रहनेकी इच्छावाले मनुष्योंकरके पारा भक्षण किया जाता है इस कारण अथवा सुवर्णादि सर्व धातुओंको भक्षण करजानेवालाहै इस लिये पारेको रस तथा धातुभी कहते हैं॥४॥

४ उपरस–गंधक, हिंगुल, अभ्रक, हरताल, मनाशील, कालासुरमा, सुहागा, गोपीचंदन खेडी) चुनकपाषाण, फिटकरी, शंख, खडिया, गेरू, हीराकसी, पांवरिया, कौडी, बादर (मिकता) बोल मुरदारसंग, और मुलतानी ये उपरस हैं ये पारेके किंचित् गुणयुक्त मानेगये हैं ॥ ५ ॥

५ रत्न–हीरा, पन्ना, माणिक, पुखराज, नीलमणी (नीलम) गोमेद (लहसुनिया) वैडूर्य श्याम मणी , मोती और मूंगा ये नवरत्न कहातेहैं ॥ ६॥

६ उपरत्न–काच, फिरोर, मोती की सीप और शंख इत्यादि उपरत्न कहाते हैं ॥ ७ ॥